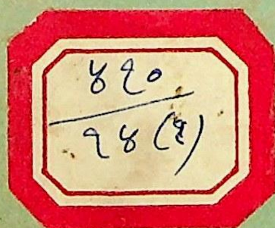


ओं नमः शिवाय

अथ वार्त्तिकसूत्रपाठः

कात्यायन मुनिप्रणीतः ॥

नागरीभाषावृत्त्योदाहरणैश्च सहितः ॥

लोकोपकारमत्या ब्राह्मणसर्वस्वमासिकपत्र
सम्पादकेन भीमसेनशर्मणा पर्यालोचन-
पुरस्सरं संशोध्य

सत्यव्रतशर्मद्विवेदस्य प्रबन्धेन तदीयेइटावास्थ
वेदप्रकाशयन्त्रालये मुद्रापितः ॥

THE

Wartik Path With Bhasha Commentry of

PANDIT BHIM SEN SHARMA

Printed at

VEDA PRAKASH PRESS ETAWAH

(१) संवत् १९६२ वि० सन् १९०५

बार १००० } { मूल्य ॥)



अथवार्त्तिक पाठ प्रस्तावः

"त्रिमुनि व्याकरणम्" इत्यादि उदाहरणों के प्रमाणानुसार पाणिनीय व्याकरण के पढ़ने पढ़ाने तथा जानने वाले सभी विचार शील ब्राह्मणादि लोग जानते हैं कि व्याकरण वेदाङ्ग के प्रकट करने वाले तीन मुनि (पाणिनि' पतञ्जलि और कात्यायन) हैं। इन में से पाणिनि मुनि की अष्टाध्यायी सूत्र पाठ तो)सब को प्रसिद्ध है। मूल सूत्र पाठ भी छपा बिकता और हम (सम्पादक ब्रा० स०) ने संस्कृत भाषा वृत्ति तथा उदाहरणों सहित पाणिनीय अष्टाध्यायी छापा दी है २) को बिकती है जो चाहे मगाले। और पतञ्जलि मुनि का व्याकरण महाभाष्य भी काशी आदि में मिलता है परन्तु कात्यायन मुनि कृत वार्त्तिक सूत्र अब तक कहीं पृथक् नहीं छपे थे इस कारण हम ने काशिकावृत्ति सिद्धान्त कौमुदी और महाभाष्य रूप समुद्र से वार्त्तिक सूत्र रूप रत्न बड़े परिश्रम से छंटवा कर भाषा वृत्ति और उदाहरणों सहित एक हजार से ऊपर वार्त्तिक सूत्र पृथक् छपाये हैं। ये वार्त्तिक अष्टाध्यायी सूत्र पाठ के क्रम से छपाये हैं। प्रत्येक पृष्ठ के ऊपर[अ० १ पा० १] इस प्रकार अष्टाध्यायी के अध्याय पाद छपे हैं। और प्रत्येक वार्त्तिक से पहिले जो संख्यांक लिखे हैं वे वार्त्तिकों की सिलसिले वार गणना के लिये हैं। और वार्त्तिक के अन्त में जो संख्या लिखी है वह पाणिनीय सूत्र की संख्या है जिस को जब देखना हो कि यह वार्त्तिक अष्टाध्यायी के किस सूत्र पर है तो प्रत्येक पृष्ठ के ऊपर लिखे अध्याय पाद में वार्त्तिक के अन्त में पड़ी संख्या के सूत्र पर देखे। वार्त्तिकों में जो उदाहरण दिये गये हैं उन में वा कहीं२ अर्थ करने में ( )

ऐसे कोष्ठ में जो अङ्क दिये हैं वे संस्कृत भाषा वृत्ति सहित छपी हमारे यहां की अष्टाध्यायी के हैं कि अमुक सूत्र इस २ उदाहरणादि की सिद्धि में लगता है।

यद्यपि हमने वार्त्तिकों के शोधने छपाने में विशेष सावधानी से काम किया है तथापि यदि प्रमादादि के कारण इस में कहीं किन्ही महाशय को भूल वा अशुद्धि जान पड़े तो कृपा कर सुधार लेवें। क्योंकि शास्त्र समुद्र के तुल्य अगाध है तथा त्रुटियों से हमे भी परिज्ञात कर दें तो उन पाठकों की कृपा दृष्टि हम समझेंगे।

भवतामनुग्राह्यो-भीमसेन शर्मा ॥

ब्रा० स० सम्पादकः। इटावा

—श्री कात्यायन मुनये नमः—

वार्त्तिक पाठः

पाणिनीयाष्टक-परिशिष्टभागरूपः ॥

१-ऋकारलृकारयोः सवर्णसंज्ञा वक्तव्या ॥९॥

ऋकार और लृकार की परस्पर सवर्णसंज्ञा कहनी चाहिये ॥ होतृ-ऌकारः=होतॄकारः ॥

२-अर्धपूर्वपदश्च पूरणप्रत्ययान्तः संख्यासंज्ञो भवतीति वक्तव्यं समासकन्विध्यर्थम् ॥२३॥

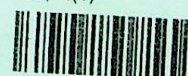
समासविधि और कन्विधि के लिये-अर्ध शब्द पूर्वपद वाला पूरण प्रत्ययान्त शब्द संख्या संज्ञक हो यह कहना, चाहिये॥ अर्द्धः पञ्चमो येषां तेऽर्द्धपञ्चमाः। अर्द्धपञ्चमाश्च ते शूर्पाश्च तैरर्द्धपञ्चमशूर्पैः क्रीतः (१९०३) कन् (१९०९) लुक्। अर्धपञ्चमशूर्पः। अर्द्धपञ्चमैः क्रीतः कन् (१९०३) अर्धपञ्चमकः ॥

३-अपुरीति च वक्तव्यम् ॥३६॥

यदि पूः (नगरी) का विशेषण अन्तर शब्द हो तो वह सर्वनाम संज्ञक न हो ॥ अन्तरायां पुरि वसति (३५०४) से स्याट् नहीं होता ॥

४-विभाषाप्रकरणे तीयस्य ङित्सूपसंख्यानम् ॥३६॥

विभाषा प्रकरण में तीय प्रत्ययान्त शब्द ङित् विभक्तियों में सर्वनाम संज्ञक हो ॥ द्वितीयस्मै [sticker] (३१९३)। तृतीयाय। इत्यादि॥



५-सित्[sticker]र्थम् ॥६८॥

वृक्षादि के लिये [sticker] चाहिये जिस से वृक्षादि शब्दों के स्वरूप का ग्रहण न हो किन्तु उन के विशेषवाचकों का ग्रहण हो जावे ॥ प्लक्षन्यग्रोधम्। प्लक्षन्यग्रोधाः। रुरुपृषतम्। रुरुपृषताः (५४६)

६-पित्पर्य्यायवचनस्य च स्वाद्यर्थम् ॥६८॥

स्वादि के लिये पित् निर्देश करना चाहिये जिस से स्वादि के पर्य्याय और उन के स्वरूप का ग्रहण हो जावे॥ रैपोषंपुष्टः। धनपोषंपुष्टः। स्वपोषंपुष्टः (११९३) ॥

७–जित्पर्य्यायवचनस्यैव राजाद्यर्थम् ॥६८॥

राजादि के अर्थ जित् निर्देश करना चाहिये जिससे राजादि के पर्य्याय वचन का ही ग्रहण होता है किन्तु स्वरूप का ही ग्रहण न हो ॥ इनसभम् । ईश्वरसभम् (५५७) ॥

८–झित्तद्विशेषाणां च मत्स्याद्यर्थम् ॥६८॥

मत्स्यादि के अर्थ झित् निर्देश करना चाहिये जिस से मत्स्यादि और इन के विशेषों का ग्रहण हो जावे ॥ मात्स्यिकः । शाकुनिकः (१७७२) ॥

९–समासप्रत्ययविधौतदन्तविधेः प्रतिषेधः ॥७२॥

समासविधि और प्रत्ययविधि में तदन्त विधि का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ कष्टं परमश्रितः (३७५) । सौत्रनाडिः (१३५९) ॥

१०–उगिद्वर्णग्रहणवर्जम् ॥७२॥

उगित् ग्रहण और वर्णग्रहण को छोड़ कर समासप्रत्यय विधि में तदन्त विधि का प्रतिषेध हो यह कहना चाहिये ॥ अतिभवतौ(१२५६) । दाक्षिः (१३४५)॥

११–गोत्रान्तादसमस्तवत्प्रत्ययो भवतीति वक्तव्यम् ॥७३॥

गोत्रान्त शब्द से असमस्तवत् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ घृतरौढीयाः । ओदनपाणिनीयाः (१५४०) ॥

१२–जिह्वाकात्यहरितकात्यवर्जम् ॥ ७३ ॥

जिह्वाकात्य और हरितकात्य शब्द को छोड़ कर गोत्रान्त शब्द से असमस्तवत् प्रत्यय हो ॥ जैह्वाकाताः । हारितकाताः । (१५४०) से छ प्रत्यय नहीं होता ॥

इति प्रथमाध्यायस्य प्रथमपादपरिशेषः ॥

१३–व्यचेः कुटादित्वमनसीति वक्तव्यम् ॥ १ ॥

असप्रत्यय को छोड़ कर अन्य प्रत्यय परे हो तो व्यच् धातु को कुटादित्व हो (अर्थात् अस् से अन्य प्रत्यय ङित्वत् हों) यह कहना चाहिये॥ विचिता । विचितुम् । विचितव्यम् (५) गुण निषेध हुआ ॥

१४–ग्रन्थिग्रन्थिदम्भिस्वञ्जीनामिति वक्तव्यम् ॥ ६ ॥

श्नन्थि, ग्रन्थि, दम्भि और स्वञ्जि धातु का लिट् किद्वत् हो यह कहना चाहिये ॥ श्रेथतुः।श्रेथुः । ग्रेथतुः । ग्रेथुः । देभतुः । देभुः । परिषस्वजे । परिषस्वजाते (३०१८) ॥

१५—ईयसो बहुव्रीहेः प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ४८ ॥

[उपसर्जन स्त्री प्रत्ययान्त के ह्रस्व होने के प्रकरण में] ईयस् प्रत्ययान्त बहुव्रीहि का प्रतिषेध कहना चाहिये । बह्व्यः श्रेयस्यो यस्य स बहुश्रेयसी । विद्यमानाः श्रेयस्यो यस्य स विद्यमानश्रेयसी ॥

१६—हरीतक्यादिषु व्यक्तिः ॥ ५१ ॥

तद्धित का लुप् होने पर हरीतकी आदि शब्दों में व्यक्ति नाम लिङ्ग युक्तवत् नाम पूर्ववत् हो बदले नहीं॥हरीतक्याः फलानि।हरीतक्यः फलानि (१७३६)

१७—खलतिकादिषु वचनम् ॥ ५१ ॥

तद्धित का लुप् होने पर खलतिकादिकों में वचन युक्तवत् हो। खलतिकस्य पर्वतस्यादूरभवानि वनानि ॥ खलतिकं वनानि ॥

१८—मनुष्यलुपि प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ५२ ॥

यदि मनुष्य अभिधेय होने पर तद्धित का लुप् हुआ हो तो विशेषणों के व्यक्ति और वचन युक्तवत् न हों ॥ चञ्चाऽभिरूपः (२२५५) । वध्रिकादर्शनीयः ॥

१९—संख्याप्रयोगे प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ५८ ॥

संख्या के प्रयोग में जात्याख्या होने पर एकवचन के स्थान में बहुवचन होने का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ एको गोधूमः संपन्नः सुभिक्षं करोति ॥

२०—सविशेषणस्य प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ५९ ॥

सविशेषण अस्मद् शब्द के द्विवचन और एकवचन के स्थान में बहुवचन होने का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ अहं पटुर्ब्रवीमि । आवां देवदत्तयज्ञदत्तौ ब्रूवः ॥

२१—त्यदादीनां मिथो यद्यत्परं तत्तच्छिष्यते ॥ ७२ ॥

त्यदादि शब्दों में से परस्पर जो २ पर है वह २ शेष रहता है ॥ सच यश्च यौ । यश्च कश्च कौ । स च त्वं चाऽहं च वयम् ॥

२२—अनेकशफेष्विति वक्तव्यम् ॥ ७३ ॥

अतरुण ग्राम्यपशुसंघों में साथ विवक्षा होने पर स्त्री शेष रहे तो अने-

क शफों (चिरे हुए खुर वालों) में ही रहे अन्यत्र नहीं ॥ अजा इमाः । अश्वा इमे । यहां स्त्री का एक शेष नहीं होता ॥

इति प्रथमाध्यायस्यद्वितीयपादपरिशेषः ॥

२३—प्रतिषेधे हसादीनामुपसंख्यानम् ॥ १५ ॥

कर्मव्यतिहार में कहे आत्मनेपद के प्रतिषेध में हसादि धातु की गणना करनी चाहिये ॥ व्यतिहसन्ति । व्यतिजल्पन्ति । हसादि के गति हिंसार्थक न होने से प्राप्त नहीं था ॥

२४-हरतेरप्रतिषेधः ॥ १५ ॥

कर्मव्यतिहार में हृञ् धातु से आत्मनेपद का प्रतिषेध न हो अर्थात् उक्त धातु से आत्मनेपद हो जावे॥ संप्रहरन्ते राजानः ॥

२५-परस्परोपपदाच्चेति वक्तव्यम् ॥ १६ ॥

और परस्पर उपपदवाले भी धातु से कर्मव्यतिहार में आत्मनेपद न हो । परस्परस्य व्यतिलुनन्ति ॥

२६-आस्यविहरणसमानक्रियादपि प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥२०॥

मुख फाड़ने के समान क्रिया वाले भी दा धातु से आत्मनेपद का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ विपादिकां व्याददाति ॥

२७-पराङ्गकर्मकान्न प्रतिषेधः ॥ २० ॥

पराङ्गकर्म वाले दा धातु से आत्मनेपद का प्रतिषेध न हो ॥ व्याददते-पिपीलिकाः पतङ्गस्य मुखम् ॥

२८-समोऽकूजनइति वक्तव्यम् ॥ २१ ॥

सम्उपसर्ग से परे क्रीड़ धातु से कूजन (शब्द) से भिन्न अर्थ में आत्मनेपद हो ॥ संक्रीडन्ति शकटानि शब्दं कुर्वन्तीत्यर्थः ॥

२९-आगमेः क्षमायाम् ॥ २१ ॥

कालहरण अर्थ में आङ् पूर्वक णयन्त गम्ल धातु से आत्मनेपद हो ॥ आगमयस्व तावत्। मा त्वरिष्ठा इत्यर्थः ॥

३०-शिक्षेर्जिज्ञासायाम् ॥ २१ ॥

जिज्ञासा अर्थ में शिक्ष धातु से आत्मनेपद हो ॥ विद्यासु शिक्षते । विद्याविषये ज्ञाने शक्तो भवितुमिच्छतीत्यर्थः ॥

३१–आशिषि नाथ ॥ २१ ॥

आशिष् अर्थ में नाथ धातु से आत्मनेपद हो ॥ सर्पिषो नाथते । सर्पिर्मे स्यादित्याशास्त इत्यर्थः ॥

३२–हरतेर्गतताच्छील्ये ॥ २१ ॥

प्रकारताच्छील्य अर्थ में हृञ् धातु से आत्मनेपद हो । पैतृकमश्वा अनुहरन्ते । मातृकं गावोऽनुहरन्ते । मातुः पितुश्चागतम् प्रकारं सततं परिशीलयन्तीत्यर्थः ॥

३३–किरतेर्हर्षजीविकाकुलायकरणेष्विति वक्तव्यम् ॥ २१ ॥

हर्ष जीविका और कुलायकरण विषय में किरति धातु से आत्मनेपद हो यह कहना चाहिये ॥ अपस्किरते वृषभो हृष्टः । जीविका में–अपस्किरते कुक्कुटो भक्षार्थी । अपस्किरते श्वा आश्रयार्थी ॥

३४–आङि नुप्रच्छ्योरुपसंख्यानम् ॥ २१ ॥

आङ् उपसर्ग से परे नु और प्रच्छ धातु का आत्मनेपद प्रकरण में उपसंख्यान करना चाहिये ॥ आनुते शृगालः । आपृच्छते गुरुम् ॥

३५–शप उपलम्भनइति वक्तव्यम् ॥ २१ ॥

उपलम्भन अर्थ में शप धातु से आत्मनेपद हो यह कहना चाहिये ॥ देवदत्ताय शपते ॥

३६–आङः प्रतिज्ञानइति वक्तव्यम् ॥ २२ ॥

प्रतिज्ञा अर्थ में आङ् उपसर्ग से परे स्था धातु से आत्मनेदपद हो यह कहना चाहिये ॥ अस्तिं सकारमात्रमातिष्ठते । सदित्यादिशब्देष्वकारानुपलब्धेः केचिदाचार्याअस्तिंसकारमात्रंप्रतिजानते । शब्दं नित्यमातिष्ठते । नित्यत्वेन प्रतिजानीतइत्यर्थः ॥

३७–उदईहायामिति वक्तव्यम् ॥ २४ ॥

उद् उपसर्ग से परे स्था धातु से ईहा अर्थ में ही आत्मनेपद हो यह कहना चाहिये ॥ गेहे उत्तिष्ठते । यहां नहीं होता कि—ग्रामाच्छतमुत्तिष्ठति ॥

३८–उपाद्देवपूजासंगतिकरणमित्रीकरणपथिष्वितिवक्तव्यम् २५

देवपूजा, संगतिकरण, मित्रीकरण और पन्था में—उप उपसर्ग से परे स्था धातु से आत्मनेपद हो यह कहना चाहिये ॥ आदित्यमुपतिष्ठते । गङ्गायमुनामुपतिष्ठते । मित्रीकरण में—राजानमुपतिष्ठते । पन्था में—अयं पन्थाः स्रुघ्नमुपतिष्ठते ॥

३९—वा लिप्सायामिति वक्तव्यम् ॥ २५ ॥

लिप्सा अर्थ में उप उपसर्ग से परे स्था धातु से आत्मनेपद विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ भिक्षुको ब्राह्मणकुलमुपतिष्ठते । उपतिष्ठतीति वा ॥

४०—स्वाङ्गकर्मकाच्चेति वक्तव्यम् ॥ २७ ॥

उद् और वि उपसर्ग से परे स्वाङ्ग कर्मवाले तप धातु से आत्मनेपद हो यह कहना चाहिये ॥ उत्तपते पाणिम् । वितपते ॥

४१—स्वाङ्गकर्मकाच्चेतिवक्तव्यम ॥ २८ ॥

आङ् उपसर्ग से परे स्वाङ्गकर्मक यम और हन धातुओं से भी आत्मनेपद हो । आयच्छते पाणिम् । आहते शिरः ॥

४२—विदिप्रच्छिस्वरतीनामुपसंख्यानम् ॥ २९ ॥

सम् उपसर्ग से परे अकर्मक विदि, प्रच्छि और स्वरति धातु से आत्मनेपद का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ संविते । संपृच्छते । सस्वरते ॥

४३— अर्त्तिश्रुदृशिभ्यश्चेति वक्तव्यम् ॥ २९ ॥

सम् उपसर्ग से परे अकर्मक अर्त्ति, श्रु और दृशि धातु से आत्मनेपद हो यह कहना चाहिये ॥ मासमृत । समार्त्त । संशृणुते । संपश्यते ॥

४४—उपसर्गादस्यत्यूह्योर्वावचनम् ॥ ३० ॥

उपसर्ग से परे असयति और ऊहि धातु से आत्मनेपद विकल्प से हो ॥ निरस्यते । निरस्यति । समूहते । समूहति ॥

४५—ज्योतिरुद्गमनइति वाच्यम् ॥ ४० ॥

ज्योति के उद्गमन में वर्त्तमान आङ्पूर्वक क्रम धातु से आत्मनेपद हो यह कहना चाहिये । आक्रमते सूर्यः । उदयत इत्यर्थः । यहां नहीं होता कि—आक्रामति धूमो हर्म्यतलात् ॥

४६—अशिष्टव्यवहारेतृतीया चतुर्थ्यर्थे भवतीतिवक्तव्यम्॥५५॥

अशिष्ट व्यवहार में तृतीया चतुर्थी के अर्थ में होती है यह कहना चाहिये ॥ दास्या संप्रयच्छते । वृषल्या संप्रयच्छते । कामुकः सन् दास्यै ददातीत्यर्थः ॥

४७–स्वराद्यन्तोपसृष्टादिति वक्तव्यम् ॥ ६४ ॥

स्वरादि वा स्वरान्त उपसर्ग से परे युजि धातु से आत्मनेपद हो यह कहना चाहिये जिस में प्र उप भी आसकते हैं ॥ उद्युङ्क्ते । नियुङ्क्ते ॥

४८–अदेः प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ८७ ॥

कर्त्रभिप्राय में णयन्त अदधातु से परस्मैपद का प्रतिषेध कहना चाहिये । आदयते देवदत्तेन ॥

४९–पादिषु धेट उपसंख्यानम् ॥ ८९॥

कर्त्रभिप्राय में णयन्त पादि धातुओं से परस्मैपद के प्रतिषेध में धेट् धातु का उपसंख्यान करना चाहिये । धापयेते शिशुमेकं समीची ॥

इति प्रथमाध्यायस्य तृतीयपादपरिशेषः ॥

५०–प्रथमलिङ्गग्रहणंच ॥३॥

प्रथम जो स्त्री लिङ्ग रहा हो उस के पीछे पुल्लिङ्ग होने पर भी नदी संज्ञा हो । सरस्वत्याइव प्रतिकृतिर्मनुष्यः–सरस्वती तस्मै सरस्वत्यै । सरस्वत्याः (२२५५ । ३५०२) ॥

५१–नभोऽङ्गिरोमनुषांवत्युपसंख्यानम् ॥ १८ ॥

भ संज्ञा प्रकरण में वत् प्रत्यय परे हो तो नभस्, अङ्गिरस् और मनुष् का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ नभस्वत् । अङ्गिरस्वत् । मनुष्वत् । यहां पद संज्ञा न होने से रुत्वोत्वादि नहीं होता ॥

५२–वृषण्वस्वश्वयोः ॥ १८ ॥

वसु और अश्व शब्द परे होतो वृषन् शब्द भ संज्ञक हो ॥ वृषण्वसुः । वृषणश्वस्यमेने । यहां पद संज्ञा न होने से (३६९८) से प्रातिपदिकान्त न का लोप नहीं होता ॥

५३–जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसंख्यानम् ॥२४॥

जुगुप्सा, विराम और प्रमाद अर्थ वाले धातुओं के प्रयोग में कारक अ-

पादान संज्ञक हो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ अधर्माज् जुगुप्सते । अधर्माद्विरमति । धर्मात्प्रमाद्यति । यहां अपाय में ध्रुवार्थ नहीं घटने से अपादान संज्ञा प्राप्त नहीं थी ॥

५४—कर्मणः करणसंज्ञा वक्तव्या संप्रदानस्य च कर्मसंज्ञा ॥३२॥

कर्मकी करण संज्ञा और सम्प्रदान की कर्मसंज्ञा कहनी चाहिये ॥ पशुना रुद्रं यजते पशुं रुद्राय ददातीत्यर्थः ॥

५५—वसतेरश्यर्थस्य प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ४८ ॥

उपादि पूर्वक अश्यर्थ वसति धातु का जो आधार कारक वह कर्म संज्ञक न हो ॥ ग्रामेउपवसति । भोजननिवृत्तिं करोतीत्यर्थः ॥

५६—नीवह्योः प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ५२ ॥

णयन्त नी और वह धातु का अणयन्त दशा का कर्त्ता कर्म संज्ञक नहो यह कहना चाहिये ॥ नाययति भारं देवदत्तेन । वाहयति भारं देवदत्तेन ॥

५७—वहेरनियन्तृकर्तृकस्येति वक्तव्यम् ॥ ५२॥

अनियन्तृकर्त्तृक णयन्त वह धातु का अणयन्त दशा का कर्त्ता कर्म संज्ञक न हो यह कहना चाहिये ॥ वाहयति भारं देवदत्तेन । यहां नहीं होता कि—वाहयति यवान् बलीवर्दान् ॥

५८—आदिखाद्योः प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ५२ ॥

णयन्त अद् और खादि धातु का अणयन्त दशा का कर्त्ता कर्म संज्ञक न हो यह प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ आदयते बटुनौदनम् । खादयति माणवकेनौदनम् ॥

५९—भक्षेरहिंसार्थस्य प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ५२ ॥

अहिंसार्थक णयन्त भक्षि धातु के अणयन्त दशा के कर्त्ता को कर्मवद्भाव का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ भक्षयत्यन्नं ब्रह्मचारिणा ॥

६०—जल्पप्रभृतीनामुपसंख्यानम् ॥ ५२ ॥

णयन्तजल्प आदिधातुओं का अणयन्त दशा का कर्त्ता कर्म संज्ञक हो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ जल्पयति भाषयति वा पुत्रं धर्मं देवदत्तः ॥

६१—दृशेश्च ॥ ५२ ॥

ण्यन्तदृशि धातुका अण्यन्त दशा का कर्त्ता कर्म संज्ञक हो ॥ दर्शयति ह-रिं भक्तान् ॥

६२-शब्दायतेर्न ॥ ५२ ॥

ण्यन्त शब्दायति धातु का ण्यन्तावस्था का कर्त्ता कर्मवत् न हो ॥ शब्दा-ययति देवदत्तेन ॥

६३- अभिवादिदृशोरात्मनेपदउपसंख्यानम् ॥ ५३ ॥

आत्मनेपद में अभिवादि और दृशि धातुका अण्यन्तावस्था का कर्त्ता ण्यन्ता-वस्थामें कर्मवत् विकल्पसे हो ॥ अभिवादयते दर्शयते वा देव भक्तं भक्तेनवा ॥

६४--श्रच्छब्दस्योपसंख्यानम् ॥ ५९ ॥

उपसर्ग संज्ञा में श्रत् शब्द का उपसंख्यान करना चाहिये। श्रत् को भी उपसर्ग संज्ञा हो ॥ श्रद्धा (१०६३) ॥

६५-मरुच्छब्दस्योपसंख्यानम् ॥ ५९ ॥

उपसर्ग संज्ञा में मरुत् शब्द का भी उपसख्यान करना चाहिये। मरुत भी पसर्ग संज्ञक हो। मरुत्तः (३५३७) ॥

६६--कारिकाशब्दस्योपसंख्यानम् ॥ ६० ॥

क्रिया के योग में कारिका शब्द गति संज्ञक हो। कारिकाकृत्य (४४१।३२०६)

६७-पुनश्चनसौ छन्दसि गतिसंज्ञौ भवतइति वक्तव्यम् ॥ ६०

छन्दो विषय में पुनर् और चनस् गति संज्ञक हों यह कहना चाहिये ॥ पुनरुत्स्यूतं वासो देयम् (३६११) चनोहितः (२७६५) ॥

६८-अन्तःशब्दस्याङ्किविधिणत्वेषूपसर्गसंज्ञा वक्तव्या ॥६५॥

अङ् प्रत्यय विधि, कि-प्रत्यय विधि, और णत्व में अन्तर् शब्द की उ-पसर्ग संज्ञा कहनी चाहिये ॥ अन्तर्द्धा (१०६३)। अन्तर्धिः (१०४९)। अ-न्तर्णयति (३९२२) ॥

६९-साक्षात्प्रभृतिषु च्व्यर्थवचनम् ॥ ७१ ॥

गतिसंज्ञा के प्रकरण में साक्षात् आदि शब्दों में च्व्यर्थ कहना चाहिये ॥ असाक्षात्साक्षात्कृत्वा साक्षात्कृत्य। मिथ्याकृत्य (४४१।३२०६) ॥

इति पाणिनीयाष्टक-प्रथमाध्यायस्य चतुर्थपादपरिशेषः ॥

७०-गम्यादीनामुपसंख्यानम् ॥२४॥

द्वितीयान्त सुबन्त गमी आदि के साथ समास को प्राप्त हो और वह त-

त्पुरुष समास हो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ ग्रामंगमी । ग्रामगमी । ग्रामं गामी । ग्रामगामी । ओदनं बुभुक्षुः । ओदनबुभुक्षुः ॥

७१–अवरस्योपसंख्यानम् ॥३१॥

तृतीयासमास प्रकरण में अवर शब्द का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ मासेनाऽवरः । मासावरः ॥

७२–कृत्यग्रहणेयत्ण्यतोर्ग्रहणं कर्त्तव्यम् ॥३३॥

"कृत्यैरधिकार्थवचने" इस सूत्र में कृत्य के ग्रहण में यत् और ण्यत् का ही ग्रहण करना चाहिये ॥ काकपेया नदी । श्वलेह्यः कूपः । वाष्पच्छेद्यानि तृणानि । कण्टकसंचेय ओदनः । यहां नहीं होता कि–काकैः पातव्या नदी ॥

७३–अर्थेन नित्यसमासवचनं सर्वलिङ्गता च वक्तव्या ॥३६॥

चतुर्थ्यन्त सुबन्त का अर्थ के साथ नित्य समास और सर्वलिङ्गता कहनी चाहिये । द्विजायायं सूपो द्विजार्थः सूपः । द्विजार्थं पयः । द्विजार्था यवागूः ॥

७४–भयभीतभीतिभीभिरिति वक्तव्यम् ॥३७॥

पञ्चम्यन्त सुबन्त भय, भीत, भीति और भी इन सुबन्तों के साथ विकल्प से समस्त हो और वह तत्पुरुष समास हो ॥ वृकभयम् । चौरभीतः । अधर्मभीतिः । पापभीः ॥

७५–शतसहस्रौपरेणेति वक्तव्यम् ॥३९॥

पञ्चम्यन्त शत और सहस्र शब्द पर के साथ विकल्प से समस्त हों और वह तत्पुरुष समास हो यह कहना चाहिये ॥ शतात्परे परश्शताः । सहस्रात्परे परस्सहस्राः । निपातनादत्र सुडागमः । यद्वा पारस्करप्रभृतेराकृतिगणत्वादविहितलक्षणः सुट् पारस्करादिषु द्रष्टव्यः ॥

७६–श्रेण्यादिषु च्व्यर्थवचनम् ॥५९॥

श्रेण्यादि में च्व्यर्थ कहना चाहिये। अश्रेणयः श्रेणयः कृताइति श्रेणिकृताः ॥

७७–कृतापकृतादीनामुपसंख्यानम् ॥६०॥

समास प्रक्रियामें कृतापकृतादि शब्दोंका उपसंख्यान करना चाहिये॥कृतञ्चतदपकृतंच कृताऽपकृतम् । भुक्तविभुक्तम् । पीतविपीतम् । गतप्रत्यागतम् । यातानुयातम्॥

७८–समानाधिकरणाधिकारे शाकपार्थिवादीनामुपसंख्यानमुत्तरपदलोपश्च ॥६०॥

समानाधिकरण के अधिकार में शाकपार्थिवादि शब्दों का उपसंख्यान

करना चाहिये और उत्तरपद का लोप हो ॥ शाकप्रधानः पार्थिवः—शाकपार्थिवः । देवपूजको ब्राह्मणो देवब्राह्मणः । कुतपप्रियः सौश्रुतः । कुतपसौश्रुतः ॥

७९–चतुष्पाज्जातिरिति वक्तव्यम् ॥७१॥

चतुष्पाज्जाति वाचक सुबन्त गर्भिणी शब्द के साथ विकल्प से समस्त हो वह समास तत्पुरुष हो ॥ गोगर्भिणी । यहां नहीं होता–कालाक्षी गर्भिणी ॥

इति द्वितीयाध्यायस्य प्रथम–पाद–परिशेषः ॥

८०–ईषद्गुणवचनेनेति वाच्यम् ॥७॥

ईषद् शब्द गुणवचन शब्द के साथ समस्त हो यह कहना चाहिये ॥ ईषत्पिङ्गलः । ईषत्कडारः ॥

८१–कृद्योगाचषष्ठीसमस्यतइतिवक्तव्यम् ॥ ८ ॥

कृद्योगा षष्ठी समर्थ सुबन्त के साथ समस्त हो यह कहना चाहिये । इध्मस्य व्रश्चनः। इध्मव्रश्चनः । पलाशशातनः॥

८२–तत्स्थैश्च गुणैः षष्ठी समस्यतइति वक्तव्यम् ॥९॥

षष्ठ्यन्त सुबन्त तत्स्थगुणों के साथ समस्त हो यह कहना चाहिये । चन्दनस्य गन्धश्चन्दनगन्धः । कपित्थस्य रसः । कपित्थरसः ॥

८३–गुणात्तरेण तरलोपश्चेति वक्तव्यम् ॥९॥

षष्ठ्यन्त सुबन्त तरबन्त गुणवाची सुबन्त के साथ विकल्प से समस्त हो यह कहना चाहिये और तरप् प्रत्यय का लोप हो । सर्वेषां श्वेततरः सर्वश्वेतः सर्वेषां महत्तरः सर्वमहान् ॥

८४–प्रतिपदविधाना षष्ठी न समस्यतइति वक्तव्यम् ॥१०॥

प्रतिपदविधान षष्ठी, समर्थ सुबन्त के साथ समस्त न हो । सर्पिषो ज्ञानम् । मधुनो ज्ञानम् (५९२) ॥

८५–प्रादयोगताद्यर्थेप्रथमया ॥ १८ ॥

प्रादि शब्द गतादि अर्थ में प्रथमान्त सुबन्त के साथ समस्त हों ॥ प्रगत आचार्यः प्राचार्य्यः ।

८६–अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया ॥ १८ ॥

अत्यादि शब्द क्रान्तादि अर्थ में द्वितीयान्त सुबन्त के साथ समस्त हों ॥

अति क्रान्तो मालामतिमालः । अतिखट्वः ॥

८७—अवादयः क्रुष्टाद्यर्थे तृतीयया ॥ १८ ॥

अवादि शब्द क्रुष्टादि अर्थ में तृतीयान्त सुबन्त के साथ समस्त हो ॥ अवक्रुष्टः कोकिलया—अवकोकिलः ॥

८८—पर्यादयो ग्लानाद्यर्थे चतुर्थ्या ॥१८ ॥

परि आदि शब्द ग्लान आदि अर्थमें चतुर्थ्यन्त सुबन्तके साथ समस्त हों ॥ परिग्लानोऽध्ययनाय पर्यध्ययनः ॥

८९—निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्या ॥ १८ ॥

निर् आदि क्रान्त आदि अर्थ में पञ्चम्यन्त सुबन्त के साथ समस्त हों ॥ निष्क्रान्तः कौशाम्ब्या निष्कौशाम्बिः । निर्वाराणसिः ॥

९०—कर्मप्रवचनीयानां प्रतिषेधः ॥ १८ ॥

प्रादि के समास प्रकरण में कर्मप्रवचनीय संज्ञक प्रादि का प्रतिषेध है। वृक्षं प्रति । विद्योतते विद्युत् । साधुर्देवदत्तो मातरं प्रति ॥

९१—इवेन सह समासो विभक्त्यलोपः पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वं च वक्तव्यम् ॥ १८ ॥

समर्थ सुबन्त इव के साथ समस्त हो । विभक्ति का लोपाभाव और पूर्व पद की प्रकृति स्वर हो यह कहना चाहिये ॥ वाससीइव ॥

९२—बहुव्रीहिः समानाधिकरणानामिति वक्तव्यम् ॥२४॥

समानाधिकरण सुबन्तों का बहुव्रीहि समास हो यह कहना चाहिये ॥ प्राप्तमुदकं ग्रामः प्राप्तोदको ग्रामः । व्यधिकरणों का बहुव्रीहि नहीं होता जैसे—पञ्चभिर्भुक्तमस्य ॥

९३—अव्ययानां च बहुव्रीहिर्वक्तव्यः ॥ २४ ॥

अव्ययों का बहुव्रीहि समास कहना चाहिये ॥ उच्चैर्मुखः । नीचैर्मुखः ॥

९४—सप्तम्युपमानपूर्वपदस्योत्तरपदलोपश्च वक्तव्यः॥ २४ ॥

सप्तम्यन्त सुबन्त और उपमानवाची सुबन्तों का बहुव्रीहि समास हो और उत्तरपदका लोप हो यह कहना चाहिये ॥ कण्ठे स्थितः कालो यस्य स कण्ठेकालः । उरसिलोमा ॥ उष्ट्रस्य मुखमिव मुखं यस्य स उष्ट्रमुखः । खरमुखः ॥

९५-समुदायविकारषष्ठ्याश्च बहुव्रीहिरुत्तरपद-लोपश्चेति वक्तव्यम् ॥ २४ ॥

समुदाय षष्ठी और विकारषष्ठी का बहुव्रीहि समास हो और उत्तरपद का लोप हो यह कहना चाहिये । केशानां संघातः केशसंघातः केशसंघात-श्चूडा यस्य स केशचूडः ॥ सुवर्णस्य विकारो ऽलंकारो यस्य स सुवर्णालंकारः ॥

९६-प्रादिभ्यो धातुजस्य वाच्यो वा चोत्तरपदलोपः ॥२५॥

प्रादियों से परे धातुज सुबन्तका समर्थ सुबन्त के साथ बहुव्रीहि कहना चाहिये और उत्तरपदका लोप विकल्प से हो ॥ प्रपतितानि पर्णानि यस्य स प्रपर्णः । प्रपतितपर्णः ॥

९७-नञोऽस्त्यर्थानां वाच्यो वा चोत्तरपदलोपः ॥ २४ ॥

नञ् से परे अस्त्यर्थ सुबन्तों का समर्थ सुबन्त के साथ बहुव्रीहि समास और उत्तरपद का लोप विकल्प से कहना चाहिये ॥ अविद्यमानः पुत्रो यस्य स- अपुत्रः । अविद्यमानपुत्रः ॥ अस्ति यह विभक्ति प्रतिरूपक अव्यय है । अ-स्तिविद्यते क्षीरमस्याःसाऽस्तिक्षीरा गौः ॥

९८-सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे पुंवद्भावः ॥ २६ ॥

वृत्ति (समास) मात्र में सर्वनाम को पुंवद्भाव हो ॥ दक्षिणपूर्वादिक् । पूर्वोत्तरा ॥

९९-धर्मादिष्वनियमः ॥ ३१ ॥

धर्मादि शब्दों में पूर्व निपात का नियम नहीं है ॥ धर्मार्थौ । अर्थधर्मौ॥

१००-अनेकप्राप्तावेकत्र नियमोऽनियमः शेषे ॥३२॥

पूर्वनिपात प्रसंग में अनेक की प्राप्ति में एक में नियम और शेष में अ-नियम होता है । हरिगुरुहराः । हरिहरगुरवः ॥

१०१-बहुष्वनियमः ॥ ३३ ॥

घिसंज्ञक और अजाद्यदन्तों में पूर्वनिपात विषय में नियम नहीं है ॥ अश्वरथेन्द्राः । इन्द्ररथाश्वाः ॥

१०२-द्वन्द्वे घ्यन्तादजाद्यदन्तं विप्रतिषेधेन ॥३३॥

द्वन्द्वसमास में घ्यन्त को बाध कर अजादि अदन्त विप्रतिषेध से पूर्व निपतित होता है ॥ इन्द्राग्नी ॥ इन्द्रवायू ॥

१०३–ऋतुनक्षत्राणां समानाक्षराणामानुपूर्व्येण पूर्वनिपातो वक्तव्यः ॥ ३४ ॥

द्वन्द्वसमास में समानाक्षर ऋतुवाची और नक्षत्र वाचियों का क्रम से पूर्वनिपात कहना चाहिये ॥ हेमन्तशिशिरवसन्ताः । चित्रास्वाती ॥

१०४–लघ्वक्षरं पूर्वं निपततीति वक्तव्यम् ॥ ३४ ॥

द्वन्द्वसमास में लघ्वक्षर पूर्वनिपतित होता है यह कहना चाहिये ॥ कुशकाशम् ॥

१०५–अभ्यर्हितं च पूर्वं निपततीति वक्तव्यम् ॥ ३४ ॥

द्वन्द्वसमास में अभ्यर्हित=पूजित पूर्वनिपतित होता है यह कहना चाहिये ॥ मातापितरौ । श्रद्धामेधे ॥

१०६–वर्णानामानुपूर्व्येण पूर्वनिपातः ॥ ३४ ॥

आनुपूर्व्य से वर्णों का पूर्वनिपात होता है । ब्राह्मणक्षत्रियौ । क्षत्रियवैश्यौ । वैश्यशूद्रौ । ब्राह्मणक्षत्रियविट्शूद्राः ॥

१०७–भ्रातुश्च ज्यायसः पूर्वनिपातो वक्तव्यः ॥ ३४ ॥

द्वन्द्वसमास में ज्येष्ठ भाई का पूर्वनिपात कहना चाहिये ॥ युधिष्ठिरभीमौ ।

१०८–संख्याया अल्पीयस्याः पूर्वनिपातो वक्तव्यः ॥ ३४ ॥

अल्पीयसी (दोनों में जो छोटी हो) संख्या का पूर्वनिपात कहना चाहिये ॥ द्वित्राः । त्रिचतुराः । नवतिशतम् ॥

१०९–सर्वनामसंख्ययोरुपसंख्यानम् ॥ ३५ ॥

पूर्वनिपात प्रसङ्ग में बहुव्रीहि समास में सर्वनाम और संख्या का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ सर्वश्वेतः । द्विशुक्लः ॥

११०–मिथोऽनयोः संख्यापूर्वम् ॥ ३५ ॥

पूर्वनिपात प्रसङ्ग में परस्पर सर्वनाम और संख्या में संख्या पूर्वनिपतित होती है बहुव्रीहि समास में ॥ द्व्यन्यः । त्र्यन्यः ॥

१११–वा प्रियस्य पूर्वनिपातः ॥ ३५ ॥

बहुव्रीहिसमास में प्रिय शब्द का पूर्वनिपात विकल्प से हो ॥ प्रियगुडः। गुडप्रियः ॥

११२—गड्वादेः परा सप्तमी ॥ ३५ ॥

बहुव्रीहि समास में गडु आदियों से परे सप्तम्यन्तनिपतित होता है ॥ गडुकण्ठः। गडुशिराः ॥

११३–क्वचिन्न ॥ ३५ ॥

बहुव्रीहिसमास में कहीं गडु आदि से परे सप्तम्यन्त पद निपतित नहीं होता ॥ बहेगडुः ॥

११४–जातिकालसुखादिभ्यःपरानिष्ठावाच्या ॥ ३६ ॥

बहुव्रीहिसमास में जाति, काल और सुखादि से परे निष्ठान्त पद निपतित होता है यह कहना चाहिये ॥ सारङ्गजग्धी। मासजातः। सुखजातः ॥

११५–क्वचिन्न ॥ ३६ ॥

जाति, काल और सुखादि से परे निष्ठान्तपद कहीं निपतित नहीं होता बहुव्रीहिसमास में ॥ कृतकटः। भुक्तौदनः ॥

११६–प्रहरणार्थेभ्यः परे निष्ठासप्तम्यौ भवत इति वक्तव्यम् ॥३६॥

प्रहरणार्थसुबन्तों से परे निष्ठान्त और सप्तम्यन्त पद हों यह कहना चाहिये बहुव्रीहि समास में ॥ अस्युद्यतः। दण्डपाणिः ॥

११७—क्वचिन्न ॥ ३६ ॥

बहुव्रीहि समास में प्रहरणार्थ सुबन्तों से परे निष्ठान्त और सप्तम्यन्त कहीं न हों ॥ उद्यतगदः। उद्यतासिः ॥

इति द्वितीयाध्यायस्य द्वितीय-पाद-परिशेषः ॥

११८–उभसर्वतसोःकार्य्या धिगुपर्य्यादिषुत्रिषु। द्वितीयाऽऽम्रेडितान्तेषु ततोऽन्यत्रापिदृश्यते ॥२॥

तस् प्रत्ययान्त उभ, और सर्व, धिक् और तीन आम्रेडितान्त उपरि, अधि और अधस् के योग में द्वितीया विभक्ति हो। तथा इन से अन्यत्र भी द्वितीया विभक्ति देख पड़ती है॥ उभयतोग्रामम्। सर्वतोग्रामम्। धिग्देवदत्तम्। उपर्युपरिग्रामम्। अध्यधिग्रामम्। अधोऽधोग्रामम्॥

११९—अभितःपरित समयानिकषाहाप्रतियोगे च दृश्यते ॥२॥

अभितस्, परितस्, समया, निकषा, हा और प्रति के योग में भी द्वितीया विभक्ति देख पड़ती है॥ अभितोग्रामम्। परितोग्रामम्। समयाग्रामम्। निकषाग्रामम्। हा देवदत्तम्। बुभुक्षितं न प्रतिभाति किंचित्॥

१२०—चतुर्थीविधानेतादर्थ्यउपसंख्यानम् ॥१३॥

चतुर्थी विभक्ति के विधान में तादर्थ्य में चतुर्थी का उपसंख्यान करना चाहिये॥ यूपाय दारु। मुक्तये योगमभ्यस्यति॥

१२१—क्लृपिसंपद्यमाने चतुर्थी वक्तव्या ॥१३॥

क्लृप्यर्थक धातु के प्रयोग में जो सम्पन्न होता है उस में चतुर्थी विभक्ति कहनी चाहिये॥ भक्तिर्ज्ञानाय कल्पते संपद्यते जायते इत्यादि॥

१२२—उत्पातेन ज्ञापिते च ॥ १३॥

उत्पात से ज्ञापित अर्थ में वर्त्तमान शब्द से चतुर्थी कहनी चाहिये॥

वाताय कपिला विद्युदातपायातिलोहिनी।
कृष्णा सर्वविनाशाय दुर्भिक्षाय सिताभवेत्॥

१२३—हितयोगे चतुर्थी वक्तव्या ॥ १३॥

हित शब्दके योग में चतुर्थी बिभक्ति कहनी चाहिये। ब्राह्मणाय हितम्। गोभ्यो हितम्॥

१२४—उपपदविभक्तेः कारकविभक्तिर्बलीयसी ॥१६॥

उपपद विभक्ति से कारक विभक्ति बलीयसी (अधिकबलवती) होती है॥ नमस्करोति गुरुम्॥

१२५—यदेतदप्राणिष्विति तदनावादिष्विति वक्तव्यम् ॥१७॥

अनादर अर्थ में प्राणिवर्जित मन्यति के कर्म में विकल्प से चतुर्थी हो इस

र्थे—प्राणिवर्जित के स्थान में नावादि वर्जित कहना चाहिये ॥ नत्वा नावं मन्ये । नत्वा शुने मन्ये । न त्वा श्वानं मन्ये ॥

१२६—तृतीयाविधाने प्रकृत्यादीनामुपसंख्यानम् ॥१८॥

तृतीया विभक्ति के विधान में प्रकृति आदि शब्दों का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ प्रकृत्या दर्शनीयः । गार्ग्योऽस्मि गोत्रेण । सुखेन धावति ॥

१२७—निमित्तकारणहेतुषु सर्वासां प्रायदर्शनम् ॥ २७ ॥

निमित्त, कारण, हेतु और इन उक्त शब्दों के पर्यायों के प्रयोग में सर्वनाम से प्रायः सब विभक्तियां देख पड़ती हैं ॥ किंनिमित्तं वसति । केन निमित्तेन वसति । कस्मै निमित्ताय वसति । कस्मान्निमित्ताद्वसति । कस्यनिमित्तस्य वसति । कस्मिन् निमित्ते वसति । इसी प्रकार कारण, हेतु और इन के पर्यायों के प्रयोग में सर्वनाम से विभक्तियां होती हैं । किं कारणं वसति । केन कारणेन वसतीत्यादि ॥

१२८—पञ्चमीविधाने ल्यब्लोपे कर्मण्युपसंख्यानम् ॥२८॥

पञ्चमीविभक्ति के विधान में ल्यप् का लोप होने पर कर्म में पञ्चमी का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ प्रासादात्प्रेक्षते । प्रासादमारुह्य प्रेक्षत इत्यर्थः ॥

१२९—अधिकरणेचोपसंख्यानम् ॥२८॥

ल्यप् का लोप होने पर अधिकरण में पञ्चमी विभक्ति का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ आसनात्प्रेक्षते । आसने उपविश्य प्रेक्षत इत्यर्थः ॥

१३०—प्रश्नाख्यानयोः पञ्चमी वक्तव्या ॥२८॥

प्रश्न और आख्यान में पञ्चमीविभक्ति कहनी चाहिये ॥ कुतो भवानागतः । पाटलिपुत्रात् ॥

१३१—यतश्चाध्वकालनिर्माणंतत्रपञ्चमी वक्तव्या ॥२८॥

जिस से अध्वा (मार्ग) और काल का निर्माण हो उस में पञ्चमीविभक्ति कहनी चाहिये ॥ गवीधुमतः सांकाश्यं चत्वारि योजनानि । कार्त्तिक्या आग्रहायणी मासे ॥

१३२—तद्युक्तात्कालेसप्तमीवक्तव्या ॥२८॥

पञ्चम्यन्त से युक्त कालवाची में सप्तमी विभक्ति कहनी चाहिये ॥ कार्त्तिक्या आग्रहायणीमासे ॥

१३३—अध्वनः प्रथमा सप्तमी च वक्तव्या ॥२८॥

पञ्चम्यन्त से युक्त अध्ववाची से प्रथमा और सप्तमीविभक्ति कहनी चाहिये ॥ गवीधुमतः सांकाश्यं चत्वारि योजनानि चतुर्षु योजनेषु वा ॥

१३४–सप्तमीविधाने क्तस्येन्विषयस्य कर्मण्युपसंख्यानम्॥३६॥

सप्तमीविभक्ति के विधान में इन्विषयक क्त प्रत्ययान्त के कर्म में सप्तमी विभक्ति का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ अधीती व्याकरणे (२१०५)

१३५–साध्वसाधु प्रयोगे च सप्तमी वक्तव्या ॥३६॥

साधु और असाधु शब्द के प्रयोग में सप्तमी विभक्ति कहनी चाहिये ॥ देवदत्तः साधुर्मातरि । असाधुर्मैत्रेयः पितरि । रामः साधुः पितरि ॥

१३६–अर्हाणांकर्त्तृत्वेऽनर्हाणामकर्तृत्वे तद्वैपरीत्ये च ॥३६॥

अर्हों के कर्त्तृत्व में; अनर्हों के अकर्त्तृत्व में और जिन का कर्त्तृत्व उचित है उन के अकर्त्तृत्व में तथा जिन का कर्त्तृत्व उचित नहीं उन के कर्त्तृत्व में सप्तमीविभक्ति कहनी चाहिये ॥ क्रम से तीन उदाहरण हैं । सत्सु तरत्सु असन्त आसते । असत्सु तिष्ठत्सु सन्तस्तरन्ति । सत्सु तिष्ठत्सु असन्तस्तरन्ति ।

१३७—निमित्तात्कर्मसंयोगे ॥३६॥

कर्म संयोग में निमित्त (फल) से सप्तमी विभक्ति हो ॥

चर्मणिद्वीपिनंहन्ति, दन्तयोर्हन्तिकुञ्जरम् ।
केशेषुचमरींहन्ति, सीम्निपुष्कलकोहतः ॥

१३८–अप्रत्यादिभिरिति वक्तव्यम् ॥ ४३ ॥

प्रति, परि और अनु के योग में सप्तमी विभक्ति न हो ॥ साधुर्देवदत्तो मातरं प्रति । मातरं परि । मातरमनु ॥

१३९--अज्वरिसंताप्योरितिवक्तव्यम् ॥५४॥

ज्वरि और संतापि धातु को छोड़कर भावकर्त्तृक रुजार्थ धातुओं के शेषत्व से विवक्षित कर्मकारक में षष्ठी विभक्ति हो यह कहना चाहिये । चौरस्य रुजति रोगः । यहां नहीं होती कि–चौरंज्वरयति ज्वरः । चौरं संतापयतितापः ।

१४०--हविषःप्रस्थितस्य प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ६१ ॥

प्रेष्य और ब्रू के प्रस्थित हविष् कर्म में षष्ठी का प्रतिषेध कहना चाहिये देवता संप्रदान में ॥ इन्द्राग्निभ्यां छागं हविर्वपां मेदः प्रस्थितं प्रेष्य ॥

१४१--षष्ठ्यर्थेचतुर्थीवक्तव्या ॥ ६२ ॥

छन्दोविषय में बाहुल्य से षष्ठी के अर्थ में चतुर्थी विभक्ति कहनी चाहिये या खर्वेण पिबति तस्यै खर्वो जायते । अहल्यायै जारः ॥ मन्त्र ब्राह्मण दोनों का नाम छन्द होने से यहां ब्राह्मण के उदाहरण दिये हैं ॥

१४२--गुणकर्म्मणिवेष्यते ॥ ६५ ॥

गौण कर्म में कृत्प्रयोग होने पर षष्ठी विकल्प से इष्ट है ॥ नेताऽश्वस्य स्रुघ्नस्य स्रुघ्नं वा ॥

१४३--अकाकारयोःस्त्रीप्रत्यययोः प्रयोगे नेति वक्तव्यम्॥६६॥

स्त्री प्रत्यय अक और अकार के प्रयोग में उभयप्राप्ति कृत् के कर्म में ही षष्ठी हो यह नहीं कहना चाहिये ॥ भेदिका देवदत्तस्य काष्ठानाम् । (१०६८) चिकीर्षा देवदत्तस्य कटस्य (१०५९) ॥

१४४--शेषे विभाषा ॥ ६६ ॥

अक और अकार से भिन्न अन्य स्त्री प्रत्यय के प्रयोग में उभयप्राप्ति कृत् के कर्म में ही षष्ठी हो यह विकल्प से कहना चाहिये अर्थात् कर्त्ता में भी षष्ठी विकल्प से हो। विचित्रा हि सूत्रस्य कृतिः पाणिनेः पाणिनिना वा । कोई अविशेष में विकल्प को चाहते हैं । शब्दानामनुशासनमाचार्य्यस्याचार्येणवा ॥

१४५-नपुंसकेभावउपसंख्यानम् ॥ ६७ ॥

नपुंसकलिङ्ग में भाव में विहित क्त के प्रयोग में षष्ठी विभक्ति हो । छात्रस्य हसितम् ॥

१४६--इष्णुचोऽपिप्रयोगेनिषेधः ॥६९ ॥

इष्णुच् प्रत्ययान्त के प्रयोग में भी षष्ठीका निषेध है॥ कन्यामलंकरिष्णुः ॥

१४७--कमेर्भाषायामप्रतिषेधः ॥ ६९ ॥

लोक में उकान्त कमु धातु के प्रयोग में षष्ठी का प्रतिषेध नहीं है अर्थात् षष्ठी विभक्ति होती है । लक्ष्म्याः कामुको हरिः ॥

१४८--अव्ययप्रतिषेधेतोसुन्कसुनोरप्रतिषेधः ॥ ६९ ॥

अव्यय के प्रयोग में षष्ठी न हो इस प्रतिषेध में तोसुन् और कसुन् का प्रतिषेध नहीं है ॥ पुरा सूर्यस्योदेतो राधेयः। पुरा क्रूरस्य विसृपो विरप्शिन्॥

१४९--द्विषः शतुर्वा ॥ ६९ ॥

शतृ प्रत्ययान्त द्विष् धातु के प्रयोग में षष्ठी विभक्ति विकल्प से न हो चौरं द्विषन् । चौरस्य द्विषन् ॥

१५०-उभयप्राप्तौ कृत्ये षष्ठ्याः प्रतिषेधोवक्तव्यः ॥ ७१ ॥

उभयप्राप्ति कृत्य प्रत्यय के प्रयोग में कर्त्ता और कर्म में षष्ठी का प्रतिषेध कहना चाहिये । कृष्टव्या शाखा ग्रामं देवदत्तेन ॥

१५१-अत्रायुष्यादीनांपर्यायग्रहणंकर्त्तव्यम् ॥ ७३ ॥

इस सूत्र में आयुष्य आदि के पर्यायों का भी ग्रहण करना चाहिये ॥ आयुष्यं देवदत्ताय भूयात् । चिरंजीवितं देवदत्ताय भूयात् । आयुष्यं देवदत्तस्य भूयात् । चिरञ्जीवितं देवदत्तस्य भूयात् ॥

इति द्वितीयाध्यायस्य तृतीय-पाद-परिशेषः

१५२-स्थेणोरद्यतन्यांचेतिवक्तव्यम् ॥ ३ ॥

स्था और इण् धातु के लुङ् में चरणों का द्वन्द्व एकवत् हो अनुवाद गम्यमान हो तो यह कहना चाहिये ॥ उदगात्कठकालापम् प्रत्यष्ठात्कठकौथुमम् ॥

१५३-अग्रामाइत्यत्रनगराणांप्रतिषेधोवक्तव्यः ॥ ७ ॥

अग्रामाः यहां नगरों का प्रतिषेध कहना चाहिये । दोनों के नगर होने से यहां एक वचन का निषेधनहीं होताकि-मथुरापाटलिपुत्रम् ॥

१५४-उभयतश्चग्रामाणांप्रतिषेधोवक्तव्यः ॥ ७ ॥

यदि द्वन्द्व में पूर्व वा पर कोई एक ग्राम हो तो एकवद्भाव का प्रतिषेध कहना चाहिये । सौर्यंचनगरं केतवतं च ग्रामः सौर्यकेतवते ॥

१५५-बहुप्रकृतिःफलसेनावनस्पतिमृगशकुनिक्षुद्रजन्तुधान्यतृणानाम् ॥ १२ ॥

इन फलादियों का बहुप्रकृति ही द्वन्द्व एकवत् हो । बदरामलकम् । बदरामलकानि । प्लक्षन्यग्रोधम् । प्लक्षन्यग्रोधाः ॥ यहां नहीं होता कि-बदरं च आमलकं च बदरामलके । रथिकश्चाऽश्वारोहश्च रथिकाश्वारोहौ ॥ प्लक्षन्यग्रोधौ । रुरुपृषतौ । हंसचक्रवाकौ । यूकालिक्षे । व्रीहियवौ । कुशकाशौ ॥

१५६-अकारान्तोत्तरपदोद्विगुःस्त्रियांभाष्यते ॥ १७ ॥

अकारान्त उत्तरपद वाला द्विगु स्त्रीलिङ्ग में कहा जाता है। पञ्चपूली। त्रिलोकी। अष्टाध्यायी (१२७१)॥

१५७—वाऽऽबन्तःस्त्रियामिष्टः ॥१७॥

आबन्त द्विगु स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से इष्ट है॥ पञ्चखट्वम्। (१२२) (१२७१) पञ्चखट्वी॥

१५८—अनो नलोपश्च वा द्विगुःस्त्रियाम् ॥१७॥

अन्नन्तद्विगु के नकार का लोप हो और वह स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से इष्टहै॥ पञ्चतक्षम्। पञ्चतक्षी॥

१५९—पात्रादिभ्यःप्रतिषेधोवक्तव्यः ॥ १७ ॥

पात्राद्यन्त द्विगु से स्त्रीत्व का प्रतिषेध कहना चाहिये॥ पञ्चपात्रम्। चतुर्युगम्। त्रिभुवनम्॥

१६०—पुण्यसुदिनाभ्यामह्नःक्लीबतेष्यते ॥ १८ ॥

पुण्य और सुदिन शब्द से परे अहन् शब्द की नपुंसक लिङ्गता इष्ट है॥ पुण्याहम्। सुदिनाहम्॥

१६१—पथःसंख्याव्ययादेःक्लीबतेष्यते ॥ १८ ॥

संख्या और अव्यय से परे पथिन् शब्द नपुंसक लिङ्ग होता है॥ त्रिपथम्। चतुष्पथम्। सुपथम्। विपथम्॥

१६२—क्रियाविशेषणानां कर्मत्वं नपुंसकलिङ्गताचवक्तव्या॥१९॥

क्रिया के विशेषण वाचक शब्द कर्मसंज्ञक और नपुंसक लिङ्ग हों॥ मृदु-पचति। शोभनं पचति॥

१६३—द्विगुप्राप्तापन्नालंपूर्वगतिसमासेषुप्रतिषेधोवाच्यः ॥२६॥

द्विगु समास में, प्राप्त, आपन्न अलम् ये हैं पूर्व जिस में उस समास में, तथा गतिसमास में परवत् लिङ्ग न हो॥ पञ्चसु कपालेषु संस्कृतः पञ्चकपालः पुरोडाशः। प्राप्तो जीविकां प्राप्तजीविकः। आपन्नजीविकः। अलंजीविकायै—अलंजीविकः। गतिसमास में—निष्क्रान्तः कौशाम्ब्या निष्कौशाम्बिः॥

१६४=अनुवाकादयः पुंसीति वक्तव्यम् ॥ २९ ॥

अनुवाक आदि शब्द पुल्लिङ्ग में भाषित हैं यह कहना चाहिये॥ अनुवाकः। शंयुवाकः। सूक्तवाकः॥

१६५–एनदिति नपुंसकैकवचने वक्तव्यम् ॥३४॥

नपुंसक लिङ्ग में प्रथमा और द्वितीया के एकवचन में अन्वादेश विषय में इदम् और एतद् शब्द को एनद् आदेश हो। प्रक्षालयैनत् । परिवर्त्तयैनत् ॥

१६६–घस्लृभावेऽच्युपसंख्यानम् ॥ ३७ ॥

घस्लृभाव में अच् प्रत्यय परे हो तो अद धातु को घस्लृभाव का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ प्रात्तीति प्रघसः ॥

१६७–इणवदिकइतिववक्तव्यम् ॥ ४५ ॥

इक् धातु को इण् धातु की भांति कार्य्य हो। ४३ । ४६ । ४७ इन तीनों सूत्रों पर यह वार्त्तिक है इस लिये क्रमशः तीनों के उदाहरण इक् धातु के दिये हैं ॥ अध्यगात् । अध्यगाताम् । अध्यगुः । अधिगमयति । अधिजिगमिषति ॥

१६८–ख्शादिर्वा ॥ ५४ ॥

आर्धधातुक विषय में चक्षिङ् धातु को ख्शाञ् आदेश विकल्प से हो ॥ क्शातासि । क्शातासे । क्शास्यति । क्शास्यते ॥

१६९–असिद्धे शस्य यवचनं विभाषा ॥ ५४ ॥

असिद्धकाण्ड में ख्शाञ् आदेश के शकार को यकार विकल्प से हो ॥ ख्यातासि । ख्यातासे । ख्यास्यति । ख्यास्यते ॥

१७०–वर्जने प्रतिषेधः ॥ ५४ ॥

आर्धधातुक विषय में वर्जन अर्थ में चक्षिङ् धातु को ख्शाञ् आदेश का प्रतिषेध है ॥ दुर्जनाः संचक्ष्याः । वर्जनीया इत्यर्थः ॥

१७१=असनयोश्च प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ५४ ॥

अस् अन प्रत्यय परे हों तो चक्षिङ् धातु को ख्शाञ् आदेश का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ नृचक्षो रक्षः । अनमें–विचक्षणः ॥

१७२–बहुलं संज्ञाछन्दसोरिति वक्तव्यम् ॥ ५४ ॥

अथवा संज्ञा और छन्द में अन्न, वधक, गात्र, विचक्षण, अजिर आदि की सिद्धि के लिये जग्धि आदि आदेश बाहुल्य से होते हैं ॥ अन्नम् । वधकम् । इत्यादि ॥

१७३–घञपोःप्रतिषेधेक्यपउपसंख्यानम् ॥ ५६ ॥

आर्धधातुक विषय में घञ् और अप् प्रत्यय को छोड़ कर अज धातु को वी आदेश कहा है वहां घञ् और अप् के प्रतिषेध में क्यप् प्रत्यय का भी परिगणन करना चाहिये ॥ समज्या ॥

१७४–वलादावार्धधातुकेविकल्पइष्यते ॥५६॥

वलादि आर्धधातुक में अज धातु को वी आदेश विकल्प से इष्ट है ॥ प्रवेता । प्राजिता ॥

१७५–अब्राह्मणगोत्रमात्राद्युवप्रत्ययस्योपसंख्यानम् ॥५८॥

ब्राह्मणवर्जित गोत्रमात्र से परे युव प्रत्यय के लुक् का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ बौधिः पिता । बौधिः पुत्रः । जाबालिः पिता । जाबालिः पुत्रः । भाण्डिजङ्घिः पिता । भाण्डिजङ्घिःपुत्रः ॥

१७६=यञादीनामेकद्वयोर्वातत्पुरुषेषष्ठ्या उपसंख्यानम् ॥६४॥

षष्ठीतत्पुरुष समास में एकवचन और द्विवचन में यञादि प्रत्ययों के लुक् का उपसंख्यान विकल्प से करना चाहिये ॥ गार्ग्यस्यकुलंगार्ग्यकुलम् । गर्गकुलंवा । गार्ग्ययोःकुलं गार्ग्यकुलम् । गर्गकुलंवा ॥

१७७--गापोर्ग्रहणेइण्पिबत्योर्ग्रहणम् ॥७७॥

गा और पा धातु के ग्रहण में इणादेश गा और पिबति का ग्रहण करना चाहिये ॥ अगात् । अपात् ॥ यहां सिच् का लुक् नहीं होता कि–अगासीन्नटः । अपासीन्नृपः ॥

१७८ -सप्तम्याऋद्धिनदीसमाससंख्यावयवेभ्योनित्यममिति वक्तव्यम् ॥८४॥

ऋद्ध्यर्थ समास, नदी समास और संख्यावयव समास से परे सप्तमी विभक्ति को अम् आदेश नित्य हो यह कहना चाहिये [यह बहुल ग्रहण से लब्ध अर्थ दिखलाया है] ॥ सुमद्रम् । उन्मत्तगङ्गम् । एकविंशतिभारद्वाजम् ॥

इतिपाणिनीयाष्टक–द्वितीयाध्यायस्य चतुर्थ–पाद–परिशेषः ॥

१७९--गुपेर्निन्दायाम् ॥५॥

गुपधातु से निन्दा अर्थ में सन् प्रत्यय हो ॥ जुगुप्सते ॥

१८०--तिजेः क्षमायाम् ॥ ५ ॥

तिज धातु से क्षमा अर्थ में सन् प्रत्यय हो ॥ तितिक्षते ॥

१८१--कितेर्व्याधिप्रतीकारे निग्रहेऽपनयने नाशने संशये च ॥५॥

कित धातु से व्याधिप्रतीकार, निग्रह, अपनयन, नाशन और संशय अर्थ में सन् प्रत्यय हो ॥ चिकित्सति ॥

१८२--मानेर्जिज्ञासायाम् ॥ ६ ॥

मान धातु से जिज्ञासा अर्थ में सन् प्रत्यय हो ॥ मीमांसते ॥

१८३--बधेश्चित्तविकारे ॥६॥

बध धातु से चित्तविकार अर्थ में सन् प्रत्यय हो ॥ बीभत्सते ।

१८४--दानेरार्जवे ॥६॥

दान धातु से आर्जव अर्थ में सन् प्रत्यय हो ॥ दीदांसते । दीदांसति ॥

१८५--शानेर्निशाने ॥६॥

शान धातु से निशान अर्थ में सन् प्रत्यय हो ॥ शीशांसते।शीशांसति ॥

१८६--आशङ्कायामुपसंख्यानम् ॥७॥

आशङ्का अर्थ में धातु से सन् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ शङ्के पतिष्यति कूलम् । पिपतिषति कूलम् । श्वा मुमूर्षति ॥

१८७ इच्छासन्नन्तात्प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥७॥

इच्छासन्नन्त धातु से सन् प्रत्यय होने का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ चिकीर्षितु मिच्छति । इच्छा विशेषण होने से यहां नहीं होता कि—जुगुप्सितु मिच्छति जुगुप्सिषते ॥

१८८--क्यचि मान्ताव्ययप्रतिषेधो वक्तव्यः ॥८॥

क्यच् प्रत्यय के विधान में मान्त और अव्यय का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ इदमिच्छति । उच्चैरिच्छति ॥

१८९--छन्दसि परेच्छायामिति वक्तव्यम् ॥८॥

छन्दोविषय में परेच्छा में भी इषि धातु के कर्म सुबन्त से क्यच् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ मा त्वा वृका अघायवो विदन् ॥

१९०—अधिकरणाच्चेतिवक्तव्यम् ॥१०॥

उपमानवाची अधिकरण सुबन्त से आचार अर्थ में क्यच् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ प्रासादइवाचरति प्रासादीयति कुट्यां भिक्षुः । पर्यंङ्कीयति मञ्चके ॥

१९१—ओजसोऽप्सरसोनित्यमितरेषां विभाषया ॥११॥

क्यङ् प्रत्यय परे हो तो ओजस् और अप्सरस् शब्द के सकार का नित्य लोप हो । और अन्य पयस् यशस् आदि शब्दों के सकार का लोप विकल्प से हो ॥ ओजायते । अप्सरायते । पयायते । पयस्यते । यशायते । यशस्यते ।

१९२—आचारेऽवगल्भक्लीवहोडेभ्यः क्विब्वावक्तव्यः ॥११॥

आचार अर्थ में उपमान कर्त्ता—अवगल्भ, क्लीब और होड शब्द से क्विप् प्रत्यय विकल्प से कहना चाहिये पक्ष में क्यङ् हो और वाक्य भी रहे ॥ अवगल्भते । अवगल्भायते । क्लीवते । क्लीबायते । होडते । होडायते ॥ अगले वार्त्तिक से इस वार्त्तिक का पृथक् पाठ आत्मनेपद के लिये है ॥

१९३—सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विब्वा वक्तव्यः ॥१२॥

आचार अर्थ में सब प्रातिपदिकों से क्विप् प्रत्यय विकल्प से हो । पक्ष में क्यङ् प्रत्यय हो और वाक्य भी रहे ॥ कृष्ण इवाचरति कृष्णति । कृष्णायते । अश्व इवाचरति । अश्वति । अश्वायते ॥

१९४—लोहितडाज्भ्यः क्यष्वचनं भृशादिष्वितराणि ॥१३॥

लोहित शब्द और डाच् प्रत्ययान्त शब्दों से भवति अर्थ में क्यष् प्रत्यय हो । और जो लोहितादिगण में पठित शब्द हैं उन्हें भृशादियों में मान कर उन से क्यङ् प्रत्यय करना चाहिये ॥ लोहितायति । लोहितायते । पटपटायति । पटपटायते (२३८) ॥

१९५—सत्रकष्टकक्षकृच्छ्रगहनेभ्यः कण्वचिकीर्षायामिति वक्तव्यम् ॥ १४ ॥

पाप करने की इच्छा अर्थ में सत्र, कष्ट, कक्ष, कृच्छ्र और गहन शब्द से क्यङ् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ सत्रायते । कष्टायते । कक्षायते । कृच्छ्रायते । गहनायते (१९०) ॥

१९६-हनुचलनइतिवक्तव्यम् ॥ १५ ॥

हनु (ठोड़ी) के चलने में रोमन्थ कर्म से वर्त्ति धातु के अर्थ में क्यङ् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये॥रोमन्थं वर्त्तयति रोमन्थायते गौः।हनुचलन के अभाव से यहां नहीं होता कि—कीटो रोमन्थं वर्त्तयति ॥

१९७—तपसःपरस्मैपदं च ॥ १५ ॥

तपस् कर्म से चरति अर्थ में क्यङ् प्रत्यय हो और तदन्त से परस्मैपद हो ॥ तपश्चरति तपस्यति ॥

१९८ – फेनाच्चेतिवक्तव्यम् ॥ १६ ॥

फेन कर्म से उद्गमन अर्थ में क्यङ् प्रत्यय कहना चाहिये। फेनमुद्गमति फेनायते ॥

१९९. सुदिनदुर्दिननीहारेभ्यश्चेतिवक्तव्यम् ॥ १७ ॥

सुदिन, दुर्दिन, और नीहार शब्द से करोति अर्थ में क्यङ् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ सुदिनायते । दुर्दिनायते । नीहारायते ॥

२००-अटाट्टाशीकाकोटापोटासोटाप्रुष्टाप्लुष्टाग्रहणंकर्त्तव्यम् १७

करोति अर्थ में क्यङ् प्रत्यय के विधान में—अटा, अट्टा, शीका, कोटा, पोटा, सोटा, प्रुष्टा और प्लुष्टा का ग्रहण करना चाहिये ॥ अटायते । अट्टायते । शीकायते । कोटायते । पोटायते । सोटायते । प्रुष्टायते । प्लुष्टायते ॥

२०१-नमसःपूजायाम् ॥ १९ ॥

नमस् शब्द से करण विशेष पूजा अर्थ में क्यच् प्रत्यय विकल्प से हो ॥ नमस्यति देवान् । पूजयतीत्यर्थः ॥

२०२—वरिवसःपरिचर्यायाम् ॥ १९ ॥

वरिवस् शब्द से परिचर्या (करणविशेष) अर्थ में क्यच् प्रत्यय विकल्प से हो । वरिवस्यति गुरून् । शुश्रूषत इत्यर्थः ॥

२०३—चित्रङआश्चर्ये ॥ १९ ॥

चित्रङ् । शब्द से करण विशेष आश्चर्य अर्थ में विकल्प से क्यच् प्रत्यय हो ॥ चित्रीयते । विस्मयत इत्यर्थः । विस्मापयत इत्यन्ये ॥

२०४—पुच्छादुदसने व्यसने पर्य्यसने च ॥२०॥

पुच्छ शब्द से करण विशेष उदसन, व्यसन और पर्यसन अर्थ में णिङ्

प्रत्यय हो ॥ उत्पुच्छयते । विपुच्छयते । परिपुच्छयते । पुच्छमूर्ध्वमधःपरितश्च क्षिपतीत्यर्थः ॥

२०५—भाण्डात्समाचयने ॥ २० ॥

भाण्ड शब्द से समाचयन अर्थ में णिङ् प्रत्यय हो ॥ संभाण्डयते । भाण्डानि समाचिनोति । राशीकरोतीत्यर्थः ॥

२०६—चीवरादर्जनेपरिधानेच ।२०।

चीवर शब्द से करण विशेष–अर्जन और परिधान अर्थ में णिङ् प्रत्ययहो॥ संचीवरयतेभिक्षुः । चीवराण्यर्जयति परिधत्ते वेत्यर्थः ॥

२०७—व्रताद्भोजनतन्निवृत्त्योः ॥ २१ ॥

व्रत शब्द से भोजन का नियम और भोजन की निवृत्ति अर्थ में णिच् प्रत्यय हो । पयो व्रतयति । शूद्रान्नं व्रतयति ॥

२०८—वस्त्रात्समाच्छादने ॥ २१ ॥

वस्त्र शब्द से समाच्छादन अर्थ में णिच् प्रत्यय हो ॥ संवस्त्रयति ॥

२०९—हल्यादिभ्यो ग्रहणे ॥ २१ ॥

हलि आदि शब्दों से ग्रहण अर्थ में णिच् प्रत्यय हो ॥ महद्धलं हलिः । हलिं गृह्णाति हलयति । कलयति कृतं गृह्णाति । कृतयति ॥

२१०—हलिकल्योरदन्तत्वनिपातनं सन्वद्भावप्रतिषेधार्थम् ॥२१॥

हलि और कलि शब्द को सूत्र में अदन्तभाव निपातित इस लिये किया है कि सन्वद्भाव न हो ॥ अजहलत् । अचकलत् (३६०३) ॥

२११—सूचिसूत्रिमूत्र्यट्यर्त्यशूर्णोतिभ्योयङ्वाच्यः ॥२२॥

सूचि, सूत्रि, मूत्रि, अटि अर्त्ति, अश, और ऊर्णोति धातु से क्रिया समभिहार में यङ् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ सोसूच्यते । सोसूत्र्यते । मोमूत्र्यते । अटाट्यते । अरार्यते । अशाश्यते । ऊर्णोनूयते ॥

२१२—अर्थवेदसत्यानामापुग्वक्तव्यः ॥२५॥

णिच् प्रत्यय परे हो तो अर्थ, वेद और सत्य शब्द को आपुक् आगम कहना चाहिये । अर्थमाचष्टे–अर्थापयति । वेदापयति । सत्यापयति ॥

२१३—पाशाद् विमोचने ॥ २५ ॥

पाश शब्दसे विमोचन अर्थ में णिच् प्रत्ययहो । पाशं विमुञ्चति विपाशयति ॥

२१४-रूपाद्दर्शने ॥ २५ ॥

रूप शब्द से दर्शन अर्थ में णिच् प्रत्यय हो। रूप पश्यति रूपयति।

२१५-वीणयोपगायने ॥ २५ ॥

तृतीया समर्थ वीणा शब्द से उपगायन अर्थ में णिच् प्रत्यय हो। वीणयोपगायति-उपवीणयति ॥

२१६-तूलेनानुकोषणे ॥ २५ ॥

तृतीया समर्थ तूल शब्द से अनुकोषण अर्थ में णिच् प्रत्यय हो। तूलेनानुकुष्णाति-अनुतूलयति ॥

२१७-श्लोकेनोपस्तुतौ ॥ २५ ॥

तृतीया समर्थ श्लोक शब्द से उपस्तुति अर्थ में णिच् प्रत्यय हो। श्लोकैरुपस्तौति, उपश्लोकयति ॥

२१८-सेनयाभियाने ॥ २५ ॥

तृतीया समर्थ सेना शब्द से अभियान अर्थ में णिच् प्रत्यय हो। सेनयाभियाति, अभिषेणयति ॥

२१९-लोम्नोऽनुमार्जने ॥ २५ ॥

द्वितीया समर्थ लोमन् शब्द से अनुमार्जन अर्थ में णिच् प्रत्यय हो। लोमान्यनुमार्ष्टि। अनुलोमयति ॥

२२०-त्वचाद्ग्रहणे ॥२५॥

त्वच शब्द से ग्रहण अर्थ में णिच् प्रत्यय हो ॥ त्वचं गृह्णाति त्वचयति ॥

२२१-वर्मणा संनहने ॥२५॥

तृतीयासमर्थ वर्मन् शब्द से संनहन अर्थ में णिच् प्रत्यय हो ॥ वर्मणा संनह्यति, संवर्मयति ॥

२२२-वर्णाद्ग्रहणे ॥२५॥

वर्ण शब्द से ग्रहण अर्थ में णिच् प्रत्यय हो ॥ वर्णं गृह्णाति वर्णयति ॥

२२३-चूर्णैरवध्वंसने ॥२५॥

तृतीयासमर्थ चूर्ण शब्द से अवध्वंसन अर्थ में णिच् प्रत्यय हो ॥ चूर्णैरवध्वंसयति, अवचूर्णयति ॥

२२३—चुरादिभ्यः स्वार्थे ॥२५॥

चुरादि धातुओं से स्वार्थ में णिच् प्रत्यय हो ॥ चोरयति । चिन्तयति ॥

२२४—तत्करोतीत्युपसंख्यानं सूत्रयत्याद्यर्थम् ॥२६॥

द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से करोति अर्थ में सूत्रयति आदि की सिद्धि के लिये णिच् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ सूत्रंकरोति—सूत्रयति ॥

२२५—आख्यानात्कृतस्तदाचष्ट इति णिच् कृल्लुक् प्रकृतिप्रत्यापत्तिः प्रकृतिवच्च कारकम् ॥२६॥

आख्यान कृदन्त से तदाचष्टे इस अर्थ में णिच् प्रत्यय हो कृत् प्रत्यय का लुक् हो । प्रकृति ज्यौं की त्यौं हो जावे । और प्रकृतिवत् कारक हो ॥ कंसवधमाचष्टे कंसंघातयति । बलिबन्धमाचष्टे बलिं बन्धयति ॥

२२६—आङ्लोपश्च कालात्यन्तसंयोगे मर्यादायाम् ॥२६॥

मर्य्यादा में कालात्यन्त संयोग विषय हो तो कृदन्त से तदाचष्ट इस अर्थ में णिच् प्रत्यय, प्रकृति प्रत्यापत्ति, प्रकृतिवत् कारक, कृत् प्रत्यय का लुक् और आङ् का लोप हो ॥ आरात्रिविवासमाचष्टे रात्रिं विवासयति ॥

२२७—चित्रीकरणे प्रापि ॥२६॥

चित्रीकरण प्राप्यर्थ में कृदन्त से णिच् प्रत्यय हो । कृत्प्रत्यय का लुक् हो प्रकृति प्रत्यापत्ति और प्रकृतिवत् कारक हो ॥ उज्जयिन्याः प्रस्थितो माहिष्मत्यां सूर्योद्गमनं सम्भावयते सूर्य्यमुद्गमयति ॥

२२८—नक्षत्रयोगे ज्ञि ॥२६॥

नक्षत्रयोग में जानाति अर्थ में कृदन्त से णिच् प्रत्यय हो । कृत्प्रत्यय का लुक् हो । प्रकृति प्रत्यापत्ति और प्रकृतिवत् कारक हो ॥ पुष्ययोगं जानाति पुष्येण योजयति ॥

२२९—दृश्यर्थायां च प्रवृत्तौ ॥ २६ ॥

दृश्यर्था प्रवृत्ति में कृदन्त से तदाचष्टे इस अर्थ में णिच् प्रत्यय हो । कृत्प्रत्यय का लुक् हो । प्रकृति प्रत्यापत्ति और प्रकृतिवत कारक हो ॥ मृगरमणमाचष्टे मृगान् रमयति । हस्तिरमणमाचष्टे हस्तिनो रमयति ॥

२३०—कास्यनेकाच इति वक्तव्यम् ॥३५॥

कास् और अनेकाच् धातु से आम् प्रत्यय हो लिट् परे हो तो अमन्त्र विषय में यह कहना चाहिये । कासाञ्चक्रे । गोपायाञ्चकार । चुलुम्पाञ्चकार । दरिद्राञ्चकार ॥

२३१—ऊर्णोतेश्च प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ३६ ॥

लिट् परे हो तो ऊर्णोति धातु से आम् प्रत्यय का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ ऊर्णुनाव ।

२३२—स्पृशमृशकृषतृपदृपांच्लेःसिज्वावक्तव्यः ॥ ४४ ॥

स्पृश, मृश, कृष, तृप, और दृप धातु के च्लि प्रत्यय के स्थान में सिच् आदेश विकल्प से कहना चाहिये । अस्प्राक्षीत् । अस्पार्क्षीत् । अस्पृक्षत् । अम्राक्षीत् । अमार्क्षीत् । अमृक्षत् । अकार्क्षीत् । अक्राक्षीत् । अकृक्षत् (६६४) । अत्राप्सीत् । अतार्प्सीत् । अतृपत् । अद्राप्सीत् (२४९५) । अदार्प्सीत् । अदृपत् । (६७४) ॥

२३३—कमेरुपसंख्यानम् ॥ ४८ ॥

णिङ् के अभावपक्ष में कमु धातु से परे च्लि के स्थान में चङ् आदेश हो । अचकमत ॥

२३४—दृशेरग्वक्तव्यः ॥ ८६ ॥

आशिष् अर्थ में छन्दो विषय हो तो दृशि धातु से अक् प्रत्यय हो लिङ् परे हो तो । पितरं च दृशेयं मातरं च ॥

२३५—सकर्मकाणांप्रतिषेधोवक्तव्यः ॥ ८८ ॥

सकर्मक धातुओं का कर्मस्थ क्रिया के साथ तुल्यक्रिय कर्त्ता कर्मवत् न हो । अन्योऽन्यं स्पृशतः । अजां ग्रामं नयति ॥

२३६--दुहिपच्योर्बहुलंसकर्मकयोरितिवाच्यम् ॥ ८८ ॥

सकर्मक दुहि और पचि धातु का कर्मस्थ क्रिया के साथ तुल्यक्रिय कर्त्ता कर्मवत् बाहुल्य से हो यह कहना चाहिये । देवदत्तो गां दोग्धि । दुग्धे गौः स्वयमेव । अदुग्ध, अदोहि वा गौः स्वयमेव । अधुक्षत वा । उदुम्बरः फलं पचयते स्वयमेव । अपाचि फलं स्वयमेव ॥

२३७--सृजियुज्योःश्यंस्तु ॥ ८८

सृजि और युजि धातु का कर्त्ता बाहुल्य से कर्मवत् हो । यक् का अभाव और श्यन् प्रत्यय कहना चाहिये ॥

२३८--सृजेः श्रद्धोपपन्ने कर्त्तर्येवेतिवाच्यम् ॥ ८८ ॥

सृजि धातु को श्रद्धा से युक्त कर्त्ता में ही कर्मवद्भाव हो यह कहना चाहिये । सृज्यते स्रजं भक्तः । सृज्यते स्रक् स्वयमेव । असर्जि स्रक् स्वयमेव । युज्यते योगं ब्रह्मचारी । युज्यते योगः स्वयमेव । अयोजि योगः स्वयमेव ॥

२३९--यक्चिणोः प्रतिषेधे णिश्रन्थिग्रन्थिब्रूञात्मनेपदाऽकर्मकाणामुपसंख्यानम् ॥ ८९ ॥

यक् और चिण् के प्रतिषेध में णयन्त, श्रन्थि, ग्रन्थि, ब्रूञ् और आत्मनेपदविधि में जो अकर्मक धातु हैं इन सबों का उपसंख्यान करना चाहिये । कारयति कटं देवदत्तः । कारयते कटः स्वयमेव । अचीकरत्कटं देवदत्तः । अचीकरत कटः स्वयमेव । श्रथ्नीते ग्रन्थः स्वयमेव । अश्रन्थिष्ट ग्रन्थः स्वयमेव । ग्रथ्नाति श्लोकं देवदत्तः । ग्रथ्नीते श्लोकः स्वयमेव । अग्रन्थिष्ट श्लोकः स्वयमेव । ब्रवीति श्लोकं देवदत्तः । ब्रूते श्लोकः स्वयमेव । अवोचच्छ्लोकं देवदत्तः । अवोचत श्लोकः स्वयमेव । आहन्ति बालं देवदत्तः । आहते बालः स्वयमेव । आवधिष्ट बालः स्वयमेव । आहत इति वा ॥

२४०--भूषाकर्मकिरादिसनांचान्यत्रात्मनेपदात् ॥ ८९ ॥

आत्मनेपद को छोड़ कर भूषावाची, किरादि और सन्नन्त धातुओं से यक् चिण् और चिण्वद् इट् न हों कर्मकर्त्ता में । अलंकुरुते कन्या स्वयमेव । अलमकृत । अवकिरते हस्ती स्वयमेव । अवाकीर्ष्ट । गिरते ग्रासः स्वयमेव । अगीर्ष्ट । चिकीर्षते कटः स्वयमेव । अचिकीर्षिष्ट ।

२४१--वसेस्तव्यत्कर्त्तरिणिच्च ॥९६॥

वस धातु से कर्त्ता में तव्यत् प्रत्यय हो और वह णिद्वत् हो । वसतीत्यसौ वास्तव्यः ॥

२४२--केलिमर उपसंख्यानम् ॥९६॥

धातु से कर्म में केलिमर् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये । पचेलिमा माषाः । पक्तव्या इत्यर्थः । भिदेलिमानि काष्ठानि ॥

२४३--तकिशसिचतियतिजनीनामुपसंख्यानम् ॥९७॥

तकि, शसि, चति, यति और जनि धातु से यत् प्रत्यय हो ॥ तक्यम् । शस्यम् । चत्यम् । यत्यम् । जन्यम् (७४३) का अपवाद है ॥

२४४–हनो वा वध च ॥९७॥

हन धातु से यत् प्रत्यय विकल्प से हो और यत् प्रत्यय के परे हन धातु को वध आदेश भी हो ॥ वध्यः । घात्यः ॥

२४५–चरेराङि चागुरौ ॥१००॥

यदि गुरु वाच्य न हो तो आङ् उपपद होने पर चर धातु से यत् प्रत्यय हो ॥ आचर्यो देशः । गन्तव्य इत्यर्थः । गुरु अर्थ में निषेध होने से यहां यत् प्रत्यय नहीं होता कि–आचार्य्य उपनेता (७४३)॥

२४६–स्वामिन्यन्तोदात्तत्वं च ॥ १०३ ॥

स्वामी वाच्य हो तो अर्य्य शब्द अन्तोदात्त हो ॥ अर्यः स्वामी ॥

२४७–वृग्रहणे वृञो ग्रहणमिष्यते न वृङः ॥१०९॥

वृ के ग्रहण में वृञ् का ग्रहण इष्ट है वृङ् का नहीं ॥ वृत्यः । वृङ् धातु से क्यप् प्रत्यय नहीं होता–वार्या ऋत्विजः ॥

२४८–शंसिदुहिगुहिभ्यो वेति वक्तव्यम् ॥ १०९ ॥

शंसि, दुहि और गुहि धातु से क्यप् प्रत्यय विकल्प से हो ॥ शस्यम् (३०१८) शंस्यम् । दुह्यम् । दोह्यम् । गुह्यम् । गोह्यम् (७४३) ॥

२४९–आङ्पूर्वादञ्जेः संज्ञायामुपसंख्यानम् ॥१०९॥

संज्ञा विषय में आङ् पूर्वक अञ्ज धातु से क्यप् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ आज्यं घृतम् ॥

२५०–पाणौ सृजेर्ण्यद्वक्तव्यः ॥ ११० ॥

पाणि उपपद हो तो सृज धातु से ण्यत् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ पाणिसर्ग्या रज्जुः ॥

२५१–समवपूर्वाच्च ॥११०॥

समव पूर्वक सृज धातु से ण्यत् प्रत्यय कहना चाहिये । समवसर्ग्या ।

२५२–संपूर्वाद्विभाषा ॥ ११२ ॥

सम्पूर्वक भृञ् धातु से विकल्प करके क्यप् प्रत्यय हो । संभृत्याः । संभार्य्याः ।

२५३—छन्दसीतिवक्तव्यम् ॥ ११८ ॥

प्रति और अपि उपसर्ग से परे यहि धातु से क्यप् प्रत्यय छन्दो विषय में हो यह कहना चाहिये ॥ मत्तस्य न प्रतिगृह्यम् । तस्मान्नाऽपिगृह्यम् ॥

२५४—हिरण्यइतिवक्तव्यम् ॥ १२३ ॥

हिरण्य वाच्य हो तो "उपचाय्यपृडम्" यह शब्द निपातित है ॥ हिरण्य से अन्यत्र "उपचेयपृडम्" यही होता है ॥

२५५—लपिदभिभ्यां च ॥ १२४ ॥

लपि और दभि धातु से ण्यत् प्रत्यय हो । अपलाप्यम् । अपदाभ्यम् ॥ (३१७) का अपवाद यह वार्त्तिक है । (आसुयु०) इत्यादि सूत्र में लपि ग्रहण प्रामादिक है ।

२५६—चरिचलिपतिवदीनांवाद्वित्वमच्याकूचाभ्यासस्येतिवक्तव्यम् ॥ १३४ ॥

अच् प्रत्यय परे हो तो चरि, चलि, पति और वदि धातु को विकल्प से द्वित्व और अभ्यास को आक् आगम हो ॥ चराचरः । चलाचलः । पतापतः । वदावदः । चरः । चलः । पतः । वदः ॥

२५७—हन्तेर्घत्वं च ॥ १३४ ॥

हन धातु को द्वित्व विकल्प से हो अच् प्रत्यय परे हो तो, अभ्यास को आक् आगम हो और हन धातु को घकारादेश हो ॥ घनाघनः । हनः ॥

२५८—पाटेर्णिलुकूचोकूचदीर्घश्चाभ्यासस्य ॥ १३४ ॥

पाटि धातु को विकल्प से द्वित्व हो अच् प्रत्यय परे हो तो, अभ्यास को ऊक् आगम हो, अभ्यास के आदि को दीर्घ हो और णि का लुक् हो ॥ पाटूपटः । पाटः ॥

२५९—जिघ्रतेः संज्ञायांप्रतिषेधोवक्तव्यः ॥ १३७ ॥

जिघ्रति धातु से संज्ञा विषय में श प्रत्यय न हो । व्याघ्रः (७५५) से क प्रत्यय होता है ॥

२६०—नौलिम्पेरितिवक्तव्यम ॥ १३८ ॥

नि उपसर्ग उपपद हो तो लिम्पि धातु से श प्रत्यय कहना चाहिये ॥

निलिम्पा नामदेवाः ॥

२६१-गवादिषुविन्देः संज्ञायाम् ॥ १३८ ॥

गो आदि शब्द उपपद हों तो विन्द धातु से श प्रत्यय हो संज्ञा विषय में। गोविन्दः। अरविन्दम् ॥

२६२-तनोतेर्णउपसंख्यानम् ॥ १४० ॥

तनोति धातु से ण प्रत्यय हो ॥ अवतनोतीत्यवतानः ॥

२६३-भवतेश्चेतिवक्तव्यम् ॥ १४३ ॥

भवति धातु से भी ण प्रत्यय विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ भवतीतिभावः पदार्थः। भवो देवः संसारश्च ॥

२६४-नृतिखनिरञ्जिभ्यइतिवक्तव्यम् ॥ १४५ ॥

नृति, खनि और रञ्जि धातु से ही ष्वुन् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ नर्त्तकः नर्त्तकी। खनकः। खनकी ॥

२६५-असयकेऽनेचरञ्जेर्नलोपोवाच्यः॥ १४५ ॥

अस्, अक और अन प्रत्यय परे हो तो रञ्ज धातु के नकार का लोप कहना चाहिये ॥ रजः। रजकः। रजकी। रजनम्। रजनी ॥

इतितृतीयाध्यायस्य प्रथम-पाद-परिशेषः ॥

२६६-शीलिकामिभक्ष्याचारिभ्योणःपूर्वपद-प्रकृतिस्वरत्वंचवक्तव्यम् ॥ १ ॥

कर्म उपपद हो तो शीलि, कामि, भक्षि और आङ् पूर्वक चारि धातु से ण प्रत्यय और पूर्वपद को प्रकृतिस्वरत्व कहना चाहिये ॥ मांसशीलः। मांसशीला। मांसकामः। मांसकामा। मांसभक्षः। मांसभक्षा। कल्याणाचारः। कल्याणाचारा। अण् होनेसे (१२६५) से ङीप् होता। टाप् होने के लिये ण प्रत्यय कहा है॥

२६७-ईक्षिक्षमिभ्यांचेतिवक्तव्यम् ॥ १॥

कर्म उपपद हो तो ईक्षि और क्षमि धातु से भी ण प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ सुखप्रतीक्षः। सुखप्रतीक्षा। बहुक्षमः। बहुक्षमा ॥

२६८-कविधौसर्वत्रसंप्रसारणिभ्योडः ॥ ३ ॥

क प्रत्यय के विधान में संप्रसारणी धातुओं से सर्वत्र ड प्रत्यय हो ॥ ब्रह्मजिनाति ब्रह्मज्यः । आह्वयतीति–आह्वः । प्रह्वः । सर्वत्र कहने से यहां (१५५) से भी डप्रत्यय हुआ है ॥

२६९–आलस्यसुखाहरणयोरितिवक्तव्यम् ॥ ५ ॥

यथासंख्य तुन्द और शोक कर्म उपपद हों तो परिपूर्वक मृज और अपपूर्वक नुद धातु से यथाक्रम आलस्य और सुखाहरण अर्थ में क प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ तुन्दं परिमार्ष्टीति तुन्दपरिमृजोऽलसः । शोकापनुदः पुत्रः सुखस्याहर्त्ता । अन्य अर्थ में–तुन्दपरिमार्जः । शोकापनोदः । होगा ॥

२७०–कप्रकरणेमूलविभुजादिभ्यउपसंख्यानम् ॥ ५ ॥

क प्रकरण में मूल विभुजादि की सिद्धि के लिये उपसंख्यान करना चाहिये ॥ मूलानिविभुजतीति मूलविभुजो रथः । नखमुचानि धनूंषि । कौमोदते कुमुदश्चन्द्रस्तस्येयं ज्योत्स्ना–कौमुदी ॥ महीध्रः । कुध्रः ॥

२७१–सुराशीध्वोःपिबतेरितिवक्तव्यम् ॥ ८ ॥

सुरा और शीधु कर्म उपपद हों तो उपसर्ग रहित पिबति धातु से टक् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ सुरापः । सुरापी । शीधुपः । शीधुपी ॥

२७२–बहुलंछन्दसीतिवक्तव्यम् ॥ ८ ॥

छन्दो विषय में टक् प्रत्यय बाहुल्य से हो यह कहना चाहिये ॥ या ब्राह्मणी सुरापी भवति । सुरापा ॥

२७३-शक्तिलाङ्गलाऽङ्कुशतोमरयष्टिघटघटीधनुष्षु ग्रहेरुपसंख्यानम् ॥ ९ ॥

शक्ति, लाङ्गल, अङ्कुश, तोमर, यष्टि, घट, घटी और धनुष् कर्म उपपद हों तो ग्रहि धातु से अच् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ शक्तिंगृह्णाति–शक्तिग्रहः । लाङ्गलग्रहः । अङ्कुशग्रहः । तोमरग्रहः । यष्टिग्रहः । घटग्रहः । घटीग्रहः । धनुर्ग्रहः ॥

२७४–सूत्रेचधार्य्येऽर्थे ॥९॥

सूत्रकर्म उपपद हो तो धार्य अर्थ में वर्त्तमान ग्रह धातु से अच् प्रत्यय हो ॥ सूत्रंगृह्णाति सूत्रग्रहः । सूत्रंधारयतीत्यर्थः सूत्रग्राह एवान्यः ॥

२७५–हस्तिसूचकयोरितिवक्तव्यम् ॥१३॥

स्तम्ब और कर्ण सुबन्त उपपद हों तो यथासंख्य हस्ती और सूचक अभिधेय होने पर रमि और जप धातु से अच् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ स्तम्बेरमते स्तम्बेरमः हस्ती । कर्णे जपतीति कर्णेजपः सूचकः ॥

२७६—पार्श्वादिषूपसंख्यानम् ॥१५॥

पार्श्वादि उपपद हों तो शीङ् धातु से अच् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ पार्श्वाभ्यां शेते पार्श्वशयः । उदरशयः । पृष्ठशयः ॥

२७७—दिग्धसहपूर्वाच्च ॥१५॥

दिग्धसह पूर्वक शीङ् धातु से अच् प्रत्यय हो ॥ दिग्धेन सह शेते—दिग्धसहशयः ॥

२७८—उत्तानादिषु कर्त्तृषु ॥१५॥

कर्त्तृवाचक उत्तानादि शब्द उपपद हों तो शीङ् धातु से अच् प्रत्ययहो ॥ उत्तानः शेते—उत्तानशयः । अवमूर्धाशेते—अवमूर्धशयः । अधोमुखःशेतइत्यर्थः ॥

२७९—गिरौडश्छन्दसि ॥१५॥

गिरि अधिकरण उपपद हो तो शीङ् धातु से ड प्रत्यय हो छन्दोविषय में ॥ गिरौशेते गिरिशः शिवः ॥

२८०--किंयत्तद्बहुषुकृञोऽज्विधानम् ॥२१॥

किम्, यद्, तद् और बहु शब्द उपपद हों तो कृञ् धातु से अच् प्रत्यय का विधान करना चाहिये जिस से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् न हो किन्तु टाप् हो ॥ किंकरा । यत्करा । तत्करा । बहुकरा ॥

२८१--व्रीहिवत्सयोरितिवक्तव्यम् ॥२४॥

स्तम्ब और शकृत् कर्म उपपद हों तो कृञ् धातु से इन् प्रत्यय हो यथाक्रम व्रीहि और वत्स वाच्य हों तो ॥ स्तम्बकरिः—व्रीहिः । शकृत्करिः—वत्सः । स्तम्बकारः । शकृत्कार एवान्यः ॥

२८२--वातशुनीतिलशर्धेष्वजधेट्तुदजहातिभ्यःखशउपसंख्यानम् ॥२८॥

वात, शुनी, तिल और शर्ध उपपद हों तो यथासंख्य अज, धेट्, तुद और जहाति धातु से खश् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ वातमजाःमृगाः । शुनिन्धयः । तिलन्तुदः । शर्धञ्जहा माषाः । शर्धोऽपानशब्दस्तं जहातीतिविग्रहः ॥

२८३—स्तने धेटः ॥ २९ ॥

स्तन कर्म उपपद हो तो धेट् धातु से खश् प्रत्यय हो ॥ स्तनन्धयः ॥

२८४—नासिकायां तु ध्मो धेटश्च ॥ २९ ॥

नासिका उपपद हो तो ध्मा और धेट् धातु से खश् प्रत्यय हो ॥ नासिकन्धमः । नासिकन्धयः ॥

२८५—घटीखारीखरीषूपसंख्यानम् ॥ ३० ॥

घटी, खारी और खरी उपपद हो तो ध्मा और धेट् धातु से खश् प्रत्यय हो ॥ घटिन्धमः । घटिन्धयः । खारिन्धमः । खारिन्धयः । खरिन्धमः । खरिन्धयः ॥ खारी परिमाणविशेषः खरी गर्दभी ॥

२८६—यथासंख्यमत्र नेष्यते ॥ ३० ॥

नाडी और मुष्टि कर्म उपपद हो तो ध्मा और धेट् धातु से खश् प्रत्यय हो । यहां यथासंख्य इष्ट नहीं है किन्तु दोनों उपपद पूर्वक दोनों धातु से प्रत्यय हो ॥ नाडिन्धमः । मुष्टिन्धमः । नाडिन्धयः । मुष्टिन्धयः ॥

२८७—गमेः सुप्युपसंख्यानम् ॥ ३८ ॥

सुबन्त उपपद हो तो गमि धातु से खच् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ मितंगमो हस्ती । मितंगमा हस्तिनी ॥

२८८—विहायसो विह च ॥ ३८ ॥

विहायस् उपपद हो तो गमि धातु से खच् प्रत्यय हो और विहायस् को विह आदेश हो ॥ विहायसा गच्छति—विहंगमः ॥

२८९—खच्च डिद्वा वक्तव्यः ॥

खच् प्रत्यय डिद्वत् विकल्प से हो ॥ विहायसा गच्छति—विहंगमः । विहंगः ॥

२९०—डे च विहायसो विहादेशो वक्तव्यः ॥ ३८ ॥

ड प्रत्यय परे हो तो विहायस् शब्द को विह आदेश कहना चाहिये ॥ विहगः ॥

२९१—भगे च दारेरिति वक्तव्यम् ॥ ४१ ॥

भग शब्द कर्म उपपद हो तो दारि धातु से खच् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ भगं दारयतीति भगन्दरः (३०८८) से ह्रस्व होता है ॥

२९२-उपपदविधौ भयादिग्रहणं तदन्तविधिं प्रयोजयति ॥४३॥

उपपद विधान में भयादि ग्रहण तदन्तविधि को प्रयोजित करता है ॥ भयङ्करः । अभयङ्करः ॥

२९३-सर्वत्रपन्नयोरुपसंख्यानम् ॥ ४८ ॥

सर्वत्र और पन्न उपपद हो तो गम्लृ धातु से ड प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये । सर्वत्र गच्छति सर्वत्रगः । पन्नं पतितं गच्छतीति पन्नगः सर्पः॥

२९४-उरसो लोपश्च ॥ ४८ ॥

उरस् शब्द उपपद हो तो गमि धातु से ड प्रत्यय हो और उरस् शब्द के अन्त्य का लोप हो ॥ उरसा गच्छतीति—उरगः ॥

२९५—सुदुरोरधिकरणे ॥ ४८ ॥

सु और दुर् उपपद हो तो गमि धातु से अधिकरण कारक में ड प्रत्यय हो ॥ सुखेन गच्छन्त्यस्मिन्निति सुगः । दुःखेन गच्छन्त्यस्मिन्निति दुर्गः ॥

२९६-अन्यत्रापि दृश्यत इतिवक्तव्यम् ॥ ४८ ॥

अन्य उपपद होने पर भी गमि धातु से ड प्रत्यय देख पड़ता है यह कहना चाहिये ॥ स्त्र्यगारगः । ग्रामगः । गुरुतल्पगः ॥

२९७—दारावाहनोऽणन्तस्यचटःसंज्ञायाम् ॥ ४९ ॥

दारु शब्द उपपद हो तो आङ्पूर्वक हन धातु से अण् प्रत्यय हो और हन धातु के अन्त को टकारादेश हो संज्ञा विषय में ॥ दारु आहन्ति दार्वाघाटः ॥

२९८— चारौ वा ॥ ४९ ॥

चारुशब्द उपपद हो तो आङ् पूर्वक हन धातु से अण् प्रत्यय हो और हन धातु के अन्त को टकारादेश विकल्प से हो ॥ चार्वाघाटः । चार्वाघातः ॥

२९९—कर्मणिसमिच ॥ ४९ ॥

कर्म उपपद हो तो सम्पूर्वक हन धातु से अण् प्रत्यय हो और हन धातु के अन्त को विकल्प से टकारादेश हो ॥ वर्णान्संहन्तीति वर्णसंघाटः । वर्णसंघातः ॥

३००–राजघउपसंख्यानम् ॥ ५५ ॥

राजघ शब्द का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ राजानं हन्ति राजघः ॥

३०१ समानान्ययोश्चेतिवक्तव्यम् ॥ ६० ॥

समान और अन्य उपपद हों तो अनालोचन अर्थ में वर्त्तमान दृश् धातु से कञ् और क्विन् प्रत्यय हों यह कहना चाहिये ॥ सदृशः । सदृक् (२९४४) । अन्यादृशः । अन्यादृक् (२९४६) ॥

३०२·दृशेःक्सश्च वक्तव्यः ॥६० ॥

त्यदादि समान और अन्य उपपद हों तो अनालोचन अर्थ में वर्त्तमान दृश धातु से क्स प्रत्यय भी कहना चाहिये॥ तादृक्षः । सदृक्षः । अन्यादृक्षः॥

३०३-श्वेतवहादीनांडस्पदस्येतिवक्तव्यम् ॥ ७१ ॥

श्वेतवहादि पदसंज्ञक शब्दों से डस् प्रत्यय हो यह कहनाचाहिये मन्त्र विषय में ॥ श्वेतवोभ्याम् । श्वेतवोभिः ॥

३०४ साधुकारिण्युपसंख्यानम् ॥ ७८ ॥

ताच्छील्यसेभिन्न साधुकारी अर्थ में धातु से णिनि प्रत्यय हो॥ साधुकारी । साधुदायी ॥

३०५- ब्रह्मणि वदः ॥ ७८ ॥

ब्रह्मन् उपपद हो तो वद धातु से णिनि प्रत्यय हो॥ ब्रह्मवादिनोवदन्ति॥

३०६-कुत्सितग्रहणंकर्त्तव्यम् ॥ ९३ ॥

कर्मणीनिर्विक्रियः॥ इस ९३ सूत्र में कुत्सित ग्रहण करना चाहिये ॥ सोमविक्रयी । रसविक्रयी । घृतविक्रयी । अनिन्दिते—धान्यविक्रायः॥

३०७-आदिकर्मणिनिष्ठावक्तव्या ॥ १०२ ॥

आदि कर्म में धातु से निष्ठा प्रत्यय कहना चाहिये ॥ प्रकृतः कटं देवदत्तः । प्रकृतवान् कटं देवदत्तः । प्राधीतो वेदं ब्रह्मदेवः । प्राधीतवान् वेदं वेद निधिः ॥

३०८-परोक्षेचलोकविज्ञाते प्रयोक्तुर्दर्शनविषयेलङ्वक्तव्यः ॥१११॥

परोक्ष काल में, लोक विज्ञात में, प्रयोगकर्त्ता के दर्शन विषय में धातु

से लङ् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ अरुणद् यवनः साकेतम् । अरुणद् यवनो द्वारवतीम् ॥

३०९ अत्यन्तापह्नवे लिड्वक्तव्यः ॥ ११५ ॥

अत्यन्त अपह्नव (मिथ्या) अर्थ में धातु से लिट् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ कलिङ्गेष्ववात्सीः । नाहं कलिङ्गाञ्जगाम ॥ दक्षिणापथं प्रविष्टोऽसि । नाहं दक्षिणापथं प्रविवेश ॥

३१०-माङ्याक्रोशे ॥ १२४ ॥

माङ् उपपद हो तो धातु से शतृ और शानच् प्रत्यय हो आक्रोश गम्यमान हो तो ॥ मापचन् । मापचमानः । मा जीवन्यः परावज्ञा दुःखदग्धोऽपि जीवति॥

३११- तृन्विधावृत्विक्षुचानुपसर्गस्य ॥ १३५ ॥

ऋत्विक् वाच्य हों तो तृन् प्रत्ययविधि में उपसर्ग रहित धातुका उपसंख्यान करना चाहिये ॥ होता । पोता ॥

३१२-नयतेः षुक् च ॥ १३५ ॥

तच्छीलादि कर्त्ताओं में नयति धातु से तृन् प्रत्यय और उक्त धातु को षुक् आगम हो ॥ पश्चात् नयतीति नेष्टा ऋत्विक् ॥

३१३ त्विषेर्देवतायामकारश्चोपधाया अनिट्त्वं च ॥१३५॥

तच्छीलादि में देवतावाच्य हो तो त्विष धातु से तृन् प्रत्यय, उक्त धातु की उपधा को अकारादेश और इडभाव हो ॥ त्वष्टा ॥

३१४-क्षदेश्च नियुक्ते ॥ १३५ ॥

नियुक्त अर्थ में क्षदि धातु से तृन् प्रत्यय हो ॥ क्षत्ता ॥

३१५-क्वचिदधिकृत उच्यते ॥ १३५ ॥

कहीं अधिकृत अर्थ में क्षदि धातु से तृन् प्रत्यय कहा जाता है ॥ क्षत्ता॥

३१६ छन्दसि तृच्च ॥ १३५ ॥

छन्दोविषय में क्षदि धातु से तृच् प्रत्यय भी हो ॥ क्षत्तृभ्यः संग्रहीतृभ्यः॥

३१७-अलंकृञोमण्डनार्थाद्युचः पूर्वविप्रतिषेधे-नेष्णुज्वक्तव्यः ॥ १३६ ॥

भवत्वनार्थ अलंपूर्वककृञ् धातु से युच् प्रत्यय को बाध कर पूर्व विप्रतिषेध से इष्णुच् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ (९०५) अलंकरिष्णुः कन्याम् ॥

३१८-दंशेश्छन्दस्युपसंख्यानम् ॥ १३९ ॥

छन्दोविषय में दंश धातु से क्नु प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये । दङ्क्ष्णवः पशवः ॥

३१९--आलुचि शीङोग्रहणं कर्त्तव्यम् ॥ १५८ ॥

आलुच् प्रत्यय में शीङ् धातु का ग्रहण करना चाहिये ॥ शयालुः ॥

३२०--व्यधेः संप्रसारणं कुरचच वक्तव्यः ॥ १६२ ॥

व्यधि धातु से कुरच् प्रत्यय और उक्त धातु को संप्रसारण कहना चाहिये ।। विधुरः ।।

३२१--किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि सद्यादिभ्यो दर्शनात् ॥१७१॥

छन्दोविषय में कि और किन् उत्सर्ग हैं क्योंकि सदादि धातुओं से भी कि किन् प्रत्यय देख पड़ते हैं ॥ सेदिः । रेमिः । नेमिः । नेमिश्चक्रमिवाभवत् ॥

३२२--भाषायांधाञ्कृसृजनिगमिनमिभ्यः ॥ १७१ ॥

लोक में धाञ्, कृ, सृ, जनि, गमि और नमि धातु से कि और किन् प्रत्यय हो ॥ दधिः । चक्रिः । सस्रिः । जज्ञिः । जग्मिः । नेमिः ॥

३२३--सहिवहिचलिपतिभ्योयङन्तेभ्यःकिकिनौवक्तव्यौ ॥१७१॥

यङन्त सहि, वहि, चलि और पति धातु से कि और किन् प्रत्यय कहना चाहिये । और पति धातु को (३५९४) नीक् का अभाव निपातित है ॥ सासहिः । वावहिः । चाचलिः । पापतिः (३५९३) ॥

३२४--धृषेश्चेति वक्तव्यम् ॥ १७२ ॥

धृषि धातुसे भी नजिङ् प्रत्यय कहना चाहिये तच्छीलादि कर्त्ताओंमें ॥ धृष्णक् ॥

३२५--क्रुकन्नपि वक्तव्यः ॥ १७४ ॥

ञिभी धातु से क्रुकन् प्रत्यय भी कहना चाहिये ॥ भीरुकः ॥

३२६क्विब्वचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणांदीर्घोऽसंप्रसारणंच॥१७८

वचि, प्रच्छि, आयत पूर्वक स्तु. कटपूर्वकप्रु. जु और श्रिञ् धातु से क्विप्

प्रत्यय, उक्त धातुओं को दीर्घ और सम्प्रसारण का अभाव हो ॥ वाक् । शब्दप्राट् आयतस्तूः । कटप्रूः । जूः । श्रीः (क्विब्वचि०) इत्यादि उणादि सूत्र से कई धातुओं से क्विप् के सिद्ध होने पर भी तच्छीलादि अर्थ में तृन् प्रत्यय बाधक न हो इस से वार्त्तिक कहा गया है ॥

३२७--द्युतिगमिजुहोतीनां द्वे च ॥ १७८ ॥

द्युति, गमि और जुहोति धातु से क्विप् प्रत्यय और इन धातुओं को द्वित्व हो ॥ दिद्युत् । जगत् ॥

३२८--जुहोतेर्दीर्घश्च ॥ १७८ ॥

और जुहोति धातु को दीर्घ भी हो ॥ जुहूः ॥

३२९--दृभयइत्यस्यह्रस्वश्चद्वे च ॥ १७८ ॥

दृ भये इस धातु से क्विप् प्रत्यय, इस धातु को ह्रस्व, और द्वित्व भी हो ॥ दद्रुत ॥

३३०--ध्यायतेः संप्रसारणं च ॥ १७८ ॥

ध्यायति धातु से क्विप् प्रत्यय और इस धातु को सम्प्रसारण भी हो ॥ धीः ॥

३३१--मितद्र्वादिभ्यउपसंख्यानम् ॥ १८० ॥

मितादि पूर्वक द्रु आदि धातुओं से डु प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ मितं द्रवति मितद्रुः । शतधा द्रवतीति शतद्रुः । शंभावयतीति शम्भुः । अन्तर्भावितोऽन्नर्थयर्थः ॥

इतितृतीयाध्यायस्यद्वितीयपादपरिशेषः ॥

३३२--अनद्यतनउपसंख्यानम् ॥ ३ ॥

अनद्यतन भविष्यत् काल में भी गमी आदि शब्दों के साधुत्व का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ श्वो ग्रामं गमी ॥

३३३--परिदेवनेश्वस्तनीभविष्यदर्थेवक्तव्या ॥ १५ ॥,

परिदेवन द्योत्य हो तो सामान्य भविष्यत् काल में धातु से लुट् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ इयं नु कदा गन्ता, यैवं पादौ निदधाति । अयंनुकदाध्येता, यएवमनभियुक्तः ॥

३३४--स्पृशउपतापइतिवक्तव्यम् ॥ १६ ॥

स्पृश धातु से उपताप वाच्य अर्थ में घञ् प्रत्यय हो यह कहनाचाहिये ॥

स्पृशतीति स्पर्श उपतापः । अन्यत्र उपताप से भिन्न कर्त्ता में पचाद्यच् होता है—स्पर्शो देवदत्तः ॥

३३५-व्याधिमत्स्यबलेषु चेति वाच्यम् ॥ १७॥

व्याधि, मत्स्य और बल वाच्य हो तो सृ धातु से घञ् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ अतीसारो व्याधिः । विसारो मत्स्यः । सारो बलम् ॥

३३६ दारजारौ कर्त्तरि णिलुक्च ॥२०॥

कर्त्ता में णयन्त दृ और जॄ धातु से घञ् प्रत्यय और णि का लुक् हो ॥ दारयन्तीति दाराः । जारयन्तीति जाराः ॥

३३७-अपादाने स्त्रियामुपसंख्यानं तदन्ताच्च वा ङीष् ॥२१॥

अपादान कारक में स्त्री लिङ्ग अभिधेय हो तो इङ् धातु से घञ् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये और तदन्त से विकल्प करके ङीष् प्रत्यय हो॥ उपेत्य अस्या अधीयते—उपाध्यायी । उपाध्याया वा ॥

३३८-शॄ वायुवर्णनिवृत्तेषु ॥ २१ ॥

वायु, वर्ण और निवृत्त अभिधेय हो तो शॄ धातु से घञ् प्रत्यय हो ॥ शारो वायुः । शारो वर्णः । शारो निवृत्तम् । गौरिवाकृतनीशारः प्रायेण शिशिरे कृशः ॥

३३९-छन्दसि निपूर्वादपीष्यते स्रुगुद्यमननिपातनयोः ॥३५ ॥

स्रुच् के उठाने और गिराने अर्थ में निपूर्वक ग्रह धातु से भी घञ् प्रत्यय हो ॥ उद्ग्राभं च निग्राभं च ब्रह्मदेवा अवीवृधन् ॥

३४०-उच्चयस्य प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ४०॥

घञ् प्रत्ययान्तत्व में उच्चय शब्द का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ उच्चयः ॥

३४१ अज्विधौभयादीनामुपसंख्यानंनपुंसकेक्तादिनिवृत्त्यर्थम्५६

नपुंसक लिङ्ग में अच् प्रत्यय के विधान में भयादि शब्दों का उपसंख्यान क्तादि प्रत्ययों की निवृत्ति के लिये करना चाहिये ॥ भयम् । वर्षम् ॥

३४२-जवसवौछन्दसिवक्तव्यौ ॥ ५६ ॥

छन्दोविषय में अच् प्रत्ययान्त जव और सव शब्द साधु कहने चाहिये॥ ऊर्वोरस्तु मे जवः । पञ्चौदनसवः ॥

३४३-वशिरण्योरुपसंख्यानम् ॥ ५८ ॥

वशि और रणि धातु से अच् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ वशः । रणः ॥

३३४-घञर्थे कविधानम् ॥ ५८॥

घञ् प्रत्यय के अर्थ में धातु से क प्रत्यय का विधान करना चाहिये ॥ प्रस्थः । विघ्नः ॥

३४५-द्वित्वप्रकरणे के कृञादीनामितिवक्तव्यम् ॥५८॥

क प्रत्यय परे हो तो द्वित्व प्रकरण में कृञादि धातुओं का ग्रहण करना चाहिये ॥ चक्रम् । चिक्लिदम् । चक्नसः ॥

३४६ क्तिन्नाबादिभ्यश्च वक्तव्यः ॥ ९४ ॥

आबादि धातुओं से क्तिन् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये । [आबादि धातु प्रयोग से जानने चाहिये] ॥ आप्तिः।राद्धिः।दीप्तिः । स्रस्तिः।ध्वस्तिः ॥

३४७ श्रुयजीषिस्तुभ्यः करणे ॥ ९४॥

श्रु, यजि, इषि और स्तुञ् धातु से करणकारक में क्तिन् प्रत्यय हो स्त्री लिङ्ग में। श्रूयतेऽनयेति श्रुतिः । यजेरिषेश्च—इज्यन्ते पूज्यन्ते प्राप्नुमिष्यन्ते वा देवाअनया सा इष्टिः । स्तूयतइष्टदेवोऽनया सा स्तुतिः ॥

३४८—ग्लाम्लाज्याहाभ्यो निः ॥९४॥

स्त्रीलिङ्ग में ग्लै, म्लै, ज्या और हा धातु से नि प्रत्यय हो ॥ ग्लानिः । म्लानिः । ज्यानिः । हानिः ॥

३४९—ॠकारल्वादिभ्यःक्तिन्निष्ठावद्भवतीति वक्तव्यम् ॥९४॥

ॠकारान्त और लू आदि धातुओं से क्तिन् प्रत्यय निष्ठावत् होता है यह कहना चाहिये ॥ कीर्णिः। गीर्णिः। जीर्णिः । लूनिः । धूनिः । यूनिः (३७२३)

३५०—चायतेः क्तिनि चिभावो वाच्यः ॥९४॥

क्तिन् प्रत्यय परे हो तो चायति धातु को चि भाव कहना चाहिये । अपचितिः ॥

३५१—संपदादिभ्यः क्विप् ॥९४॥

संपदादि धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में क्विप् प्रत्यय हो॥ संपत्। विपत। आपत्॥

३५२-क्तिन्नपीष्यते ॥९४॥

संपदादि धातुओं से क्तिन् प्रत्यय भी इष्ट है॥ संपत्तिः। विपत्तिः। आपत्तिः॥

३५३-परिचर्यापरिसर्यामृगयाऽटाट्यानामुपसंख्यानम् ॥१०१॥

श प्रत्ययान्त परिचर्या, परिसर्या, मृगया और अटाट्या इन शब्दों का उपसंख्यान करना चाहिये। परिचर्य्या पूजा। परिसर्या परिसरणम्। मृगया। अटाट्या॥

३५४-जागर्तेरकारो वा ॥१०१॥

स्त्रीलिङ्ग में जागर्त्ति धातु से अकार प्रत्यय विकल्प से हो। पक्ष में श प्रत्यय हो॥ जागरा। जागर्या (६९६) (३४७५)॥

३५५-निष्ठायां सेटइति वक्तव्यम् ॥१०३॥

जो गुरुमान् हलन्त धातु निष्ठा प्रत्यय में सेट् हो उस से स्त्रीलिङ्ग में अकार प्रत्यय हो यह कहना चाहिये॥ कुण्डा। हुण्डा। ईहा। ऊहा॥ यहां नहीं होता कि—दीप्तिः। आप्तिः॥

३५६-घट्टिवन्दिविदिभ्य उपसंख्यानम् ॥१०७॥

घट्टि, वन्दि और विदि धातु से युच् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये। घट्टना। वन्दना। वेदना॥

३५७-इषेरनिच्छार्थस्य युज्वक्तव्यः ॥१०७॥

अनिच्छार्थ इषि धातु से युच् प्रत्यय कहना चाहिये॥ अध्येषणा। अन्वेषणा॥

३५८-परेर्वा ॥१०७॥

परिपूर्वक अनिच्छार्थ इषि धातु से युच् प्रत्यय विकल्प से हो॥ पर्येषणा। परीष्टिः॥

३५९-धात्वर्थनिर्देशे ण्वुल्वक्तव्यः ॥१०८॥

धात्वर्थ निर्देश में ण्वुल् प्रत्यय कहना चाहिये॥ आशिका, शायिका वर्त्तते॥

३६०=इक्श्तिपौ धातुनिर्देशे ॥१०८॥

धातु निर्देश में धातु से इक् और श्तिप् प्रत्यय हो ॥ भिदिः । छिदिः । भवतिः । पचतिः । पठतिः ॥

३६१–वर्णात्कारः ॥१०८॥

वर्ण निर्देश में वर्णमात्र से कार प्रत्यय हो ॥ अकारः । इकारः । उकारः । ऋकारः ॥

३६२–रादिफः ॥१०८॥

निर्देश में र वर्ण से इफ प्रत्यय हो ॥ रेफः ॥

३६३–मत्वर्थाच्छोऽकारलोपश्च ॥ १०८ ॥

निर्देश में मत्वर्थ शब्द से छ प्रत्यय और अकार का लोप हो तद्धित न होने से "यस्येतिच" की प्राप्ति नहीं है ॥ मत्वर्थीयः ॥

३६४–इणजादिभ्यः ॥ १०८

अजादि धातु से इण् प्रत्यय हो ॥ आजिः । आतिः । आदिः ॥

३६५–इञ्वपादिभ्यः ॥ १०८ ॥

वपादि धातुओं से इञ् प्रत्यय हो ॥ वापिः । वासिः ।

३६६–इक् कृष्यादिभ्यः ॥ १०८

कृषि आदि धातुओं से इक् प्रत्यय हो ॥ कृषिः । किरिः । गिरिः ॥

३६७–अवहाराधारावायामुपसंख्यानम् ॥ १२२ ॥

घञ् प्रत्ययान्त अवहार, आधार आवाय, शब्द निपातित हैं इन का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ अवहारः । आधारः । आवायः ॥

३६८–खनेर्डडरेकेकवकावाच्याः ॥ १२५ ॥

खनि धातु से ड, डर, इक और इकवक प्रत्यय कहने चाहिये ॥ आखः । आखरः । आखनिकः । आखनिकवकः ॥

३६९–कर्तृकर्मणोश्च्व्यर्थयोरिति वक्तव्यम् ॥ १२७ ॥

च्व्यर्थ कर्त्ता कर्म और ईषदादि उपपद हों तो भू और कृञ् धातु से खल् प्रत्यय हो ॥ अनाढ्येनाढ्येन दुःखेन भूयते दुराढ्यंभवम् । ईषदाढ्यम्भवम् । ईषदाढ्यंकरः । दुराढ्यङ्करः । स्वाढ्यङ्करः ॥

३७०-भाषायां शासियुधिदृशिधृषिमृषिभ्यो युज् वाच्यः ॥ १३० ॥

लोक में शासि, युधि, दृशि, धृषि, और मृषि धातु से युच् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ दुःशासनः । दुर्योधनः । दुर्दर्शनः । दुर्धर्षणः । दुर्मर्षणः ॥

३७१—यदायद्योरुपसंख्यानम् ॥ १४७ ॥

अनवक्लृप्ति और अमर्ष में यदा और यदि उपपद हों तो भी धातु से लिङ् प्रत्यय हो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ यदा यदि वा त्वादृशो येदं निन्देन्नावकल्पयामि न मर्षयामि ॥

३७२-भविष्यत्येवेष्यते ॥ १५६ ॥

हेतुभूत और हेतुमान् अर्थ में वर्त्तमान धातु से लिङ् प्रत्यय हो यह लिङ् प्रत्यय विधान भविष्यत् में ही इष्ट है ॥ येदं मन्येत चेत्सुखीभवेत् । भविष्यत् काल के अभाव से यहां नहीं होता कि—हन्तीति पलायते ॥ वर्षतीति धावति ॥

३७३-कामप्रवेदन इति वक्तव्यम् ॥ १५७ ॥

इच्छार्थ धातु उपपद हों तो कामप्रवेदन में धातु से लिङ् और लोट् प्रत्यय हो ॥ इच्छामि भुञ्जीत भवान् । इच्छामि भुङ्क्तां भवान् । कामप्रवेदन के अभाव से यहां नहीं होता कि—इच्छन् करोति ॥

इति तृतीयाध्यायस्य तृतीय-पाद-परिशेषः।

तृतीयाध्यायस्य चतुर्थपादे वार्त्तिकाभावोऽतः पाणिनीयाष्टकस्य तृतीयाध्यायपरिशेषः समाप्तः ॥

३७४--संभस्त्राजिनशणपिण्डेभ्यः फलात् ॥ ४ ॥

सम्, भस्त्रा, अजिन शण और पिण्ड शब्द से परे फल शब्द से टाप् प्रत्यय हो स्त्रीलिङ्ग में ॥ संफला । भस्त्रफला । अजिनफला । शणफला । पिण्डफला (१३१४) का अपवाद है ॥

३७५ सदच्काण्डप्रान्तशतैकेभ्यः पुष्पात् ॥ ४ ॥

सत्, क्विन् प्रत्ययान्तअञ्चति, काण्ड, प्रान्त, शत और एक शब्द से परे पुष्प शब्द से टाप् प्रत्यय हो स्त्री लिङ्ग में ॥ सत्पुष्पा । प्रत्यक्पुष्पा । काण्ड पुष्पा । प्रान्तपुष्पा । शतपुष्पा । एकपुष्पा । (१३१४) का अपवाद जानो ॥

३७६-शूद्राचाऽमहत्पूर्वाजातिः ॥ ४ ॥

महत् शब्द जिस के पूर्व नहीं ऐसा जाति वाचक टाबन्त " शूद्रा " शब्द साधु है ॥ शूद्रा । पुंयोग में तो–शूद्री ॥ अमहत्पूर्वेतिकिम्–महाशूद्री (१३१३) का अपवाद है ॥

३७७-मूलान्नञः ॥ ४ ॥

नञ् से परे मूल शब्द से टाप् प्रत्यय हो स्त्री लिङ्ग में ॥ अमूला (१३१४) का अपवाद है ॥

३७८-धातोरुगितः प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ६ ॥

उगित् धातु से स्त्री लिङ्ग में ङीप् प्रत्यय का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ उखास्रत् । पर्णध्वद् ब्राह्मणी ॥

३७९-अञ्चतेश्चोपसंख्यानम् ॥ ६ ॥

स्त्री लिङ्ग में उगित् अञ्चति धातु से ङीप् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ प्राची । प्रतीची । उदीची । पहिले वार्त्तिक का अपवाद है ॥

३८०-वनो न हशइति वक्तव्यम् ॥ ७ ॥

हशन्त धातु से विहित जो वन् प्रत्यय तदन्त प्रातिपदिक से स्त्री लिङ्ग में ङीप् प्रत्यय और र आदेश न हो ॥ ओणृ अपनयने । अस्माद्धातोः (८४४) वनिपि (३०५) ण् को आकारादेश । अवावा ब्राह्मणी ॥

३८१-बहुव्रीहौ वा ॥ ७ ॥

वन् प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से स्त्री लिङ्ग में बहुव्रीहि समास हो तो ङीप् प्रत्यय और र आदेश विकल्प से हो ॥ बहुधीवरी । बहुधीवा ॥

३८२-ताच्छीलिके णेऽपि ॥ १५ ॥

ताच्छीलिक णान्त प्रातिपदिक से स्त्री लिङ्ग में ङीप् प्रत्यय हो ॥चौरी॥

३८३ नञ्स्नञीकक्ख्युंस्तरुणतलुनानामुपसंख्यानम् ॥१५॥

नञ् प्रत्ययान्त, स्नञ् प्रत्ययान्त, ईकक् प्रत्ययान्त. ख्युन् प्रत्ययान्त तथा तरुण और तलुन शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ स्त्रैणी । पौंस्नी (१३३७) शाक्तीकी (११९६) । आढ्यङ्करणी (८२५) तरुणी । तलुनी ॥

३८४-अनपत्याधिकारस्थान्नङीप् ॥ १६ ॥

अपत्याधिकारस्थ से भिन्न यञ् प्रत्ययान्त शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय न हो ॥ द्वैप्या (१५८१)

३८५-आसुरेरुपसंख्यानम् ॥ १९ ॥

स्त्री लिङ्ग में आसुरि शब्द से फक प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये आसुरायणी ॥

३८६-वयस्यचरमइति वक्तव्यम् ॥ २० ॥

वृद्ध से भिन्न अवस्था में जो प्रातिपदिक वर्त्तमान है उस से स्त्री लिङ्ग में ङीप् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ वधूटी । चिरण्टी ॥

३८७-त्रिचतुर्भ्यां हायनस्य णत्वं वाच्यम् ॥ २७ ॥

त्रि और चतुर् शब्द से परे हायन शब्द के नकार को णकारादेश कहना चाहिये ।

३८८-वयोवाचकस्यैव हायनस्य ङीब् णत्वं चेष्यते ॥२७॥

अवस्था वाचक ही हायन शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय और णत्व इष्ट है ॥ त्रिहायणी । चतुर्हायणी ॥ अन्यत्र-चतुर्हायना शाला ॥

३८९-अजसादिष्विति वक्तव्यम् ॥ ३१ ॥

जस् आदि विभक्तियों को छोड़ के स्त्री लिङ्ग में रात्रि शब्द से ङीप् प्रत्यय हो । या रात्रिः सृष्टा । यहां न हो कि-रात्रिं सहोषित्वा ॥

३९०-इयं त्रिसूत्री पुंयोग एवेष्यते ॥ ३६ ॥

३६ । ३७ । ३८ । ये तीन सूत्र पुंयोग में ही इष्ट हैं ॥ पूतक्रतोः स्त्री पूतक्रतायी । यहां ङीप् प्रत्यय और ऐकारान्तादेश नहीं होता कि-यया हि पूताः क्रतवः पूतक्रतुः सा भवति ॥

३९१–पिशङ्गादुपसंख्यानम् ॥ ३९ ॥

वर्ण वाची पिशङ्ग शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय विकल्प से हो॥ पिशङ्गी । पिशङ्गा ॥

३९२–असितपलितयोः प्रतिषेधः ॥ ३९ ॥

वर्णवाची असित और पलित शब्द से स्त्री लिङ्ग में ङीप् प्रत्यय का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ असिता । पलिता ॥

३९३–छन्दसि क्नमेके ॥ ३९ ॥

असित और पलित शब्द के अन्त्य तकारको क्न आदेश और इन उक्त दोनों शब्दों से स्त्री लिङ्ग में ङीप् प्रत्यय को कोई आचार्य्य छन्दो विषय में चाहते हैं । अन्य लोक में भी ॥ असिक्नी । पलिक्नी ॥ लोक में–गतो गणस्तूर्णमसिक्निकानाम् ॥

३९४–नीलादोषधौ ॥ ४२ ॥

ओषधिवाच्य हो तो नील शब्द से स्त्री लिङ्ग में ङीष् प्रत्यय हो ॥ नीली ओषधिः ॥

३९५–प्राणिनि च ॥ ४२ ॥

प्राणी वाच्य होतो भी नील शब्द से स्त्री लिङ्ग में ङीष् प्रत्यय हो । नीली गौः ॥

३९६–संज्ञायां वा ॥ ४२ ॥

संज्ञा विषय में स्त्री लिङ्ग वाच्य होतो नील शब्द से ङीष् प्रत्यय विकल्प से हो ॥ नीली । नीला ॥

३९७–खरुसंयोगोपधात्प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ४४ ॥

गुणवचन–खरु और संयोगोपध प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ खरुरियं ब्राह्मणी ॥ पाण्डुरियं ब्राह्मणी ॥

३९८–कृदिकारादक्तिनः । सर्वतोऽक्तिन्नर्थादित्येके ॥ ४५ ॥

क्तिन् को छोड़ कर इकारान्त कृत् प्रत्ययान्त शब्द से ङीष् विकल्प से हो । कोई आचार्य्य क्तिन्नर्थ को छोड़ कर सब कृत् इकार से ङीष् विकल्प से चाहते हैं । रात्रिः । रात्री । शकटी । शकटिः । अक्तिन्नर्थात् किम्–अजननिः।

३९९—गोपालिकादीनां प्रतिषेधः ॥ ४८ ॥

पुंयोग हेतु से स्त्री लिङ्ग में गोपालक आदि शब्दों से ङीष् प्रत्यय न हो गोपालकस्य स्त्री गोपालिका । अश्वपालिका । पशुपालिका ॥

४००—सूर्याद्देवतायां चाब्वाच्यः ॥ ४८ ॥

पुंयोग हेतु से स्त्री लिङ्ग में सूर्य शब्द से चाप् प्रत्यय कहना चाहिये देवता वाच्य हो तो ॥ सूर्यस्य स्त्री देवता सूर्य्या ॥ यहां न हो कि—सूरी कुन्ती ॥

४०१—हिमारण्ययोर्महत्त्वे ॥ ४९ ॥

हिम और अरण्य शब्द से महत्त्वार्थ में ङीष् प्रत्यय और आनुक् आगम हो ॥ महद्धिमं हिमानी महदरण्यमरण्यानी ॥

४०२—यवाद्दोषे ॥ ४९ ॥

यव शब्द से दोष अर्थ में ङीष् प्रत्यय और आनुक् आगम हो ॥ दुष्टो यवो यवानी ॥

४०३—यवनाल्लिप्याम् ॥ ४९ ॥

यवन शब्द से लिपि अर्थ में ङीष् प्रत्यय और आनुक् आगम हो ॥ यवनानां लिपिर्यवनानी ॥

४०४—मातुलोपध्याययोरानुग्वा ॥ ४९ ॥

पुंयोग में स्त्री लिङ्ग वाच्य हो तो मातुल और उपाध्याय शब्द से ङीष् प्रत्यय हो और आनुक् आगम विकल्प से हो ॥ मातुलस्य स्त्री मातुलानी । मातुली । उपाध्यायस्य स्त्री उपाध्यायानी । उपाध्यायी ॥

४०५—यातुस्वयमेवाध्यापिकातत्रवाङीष्वाच्यः ॥ ४९ ॥

जो तो स्वयं ही अध्यापिका हो उस (उपाध्याय) में स्त्री लिङ्ग वाच्य होने पर ङीष् प्रत्यय विकल्प से हो ॥ उपाध्यायी । उपाध्याया ॥

४०६—आचार्यादणत्वं च ॥ ४९ ॥

पुंयोग में स्त्री लिङ्ग वाच्य होने पर आचार्य्य शब्द से ङीष् प्रत्यय आनुक् आगम और णत्व का निषेध हो ॥ आचार्यस्य स्त्री आचार्यानी आचार्या । स्वयं व्याख्यात्री ॥

४०७—अर्यक्षत्रियाभ्यां वा स्वार्थे ॥ ४९ ॥

स्त्री लिङ्ग स्वार्थ में अर्य और क्षत्रिय शब्द से ङीष् प्रत्यय और आनुक् आगम दोनों विकल्प से हों ॥ अर्याणी । अर्या । स्वामिनी वैश्या वेत्यर्थः ॥ क्षत्रियाणी । क्षत्रिया ॥ पुंयोग में तो—अर्यी । क्षत्रियी ॥

४०८—मुद्गलाच्छन्दसि लिच्च ॥ ४९ ॥

स्त्री लिङ्ग में मुद्गल शब्द से ङीष् प्रत्यय, आनुक् आगम और उक्त आगम लित् हो छन्दोविषय में ॥ रथीरभून्मुद्गलानी गविष्टौ ॥

४०९—अबहुनञ्सुकालसुखादिपूर्वादिति वक्तव्यम् ॥ ५२ ॥

बहु, नञ्, सु, काल और सुखादि जिस के पूर्व न हों ऐसे क्तान्त अदन्त बहुव्रीहि से स्त्री लिङ्ग में ङीष् प्रत्यय हो ॥ ऊरुभिन्नी । शङ्खभिन्नी ॥ यहां नहीं होता कि—बहुकृता । अकृता । सुकृता । मासजाता । सुखजाता । दुःखजाता ॥

४१०—जातान्ताच्च ॥ ५२ ॥

स्त्री लिङ्ग में जातान्त बहुव्रीहि से ङीष् प्रत्यय न हो ॥ दन्तजाता । स्तनजाता ॥

४११—पाणिगृहीती भार्यायाम् ॥ ५२ ॥

भार्या वाच्य हो तो पाणिगृहीत शब्द से ङीष् प्रत्यय हो ॥ पाणिगृहीती भार्या ॥ यस्यास्तु यथाकथंचित्पाणिर्गृह्यते पाणिगृहीता सा भवति ॥

४१२—बहुलंसंज्ञाछन्दसोरिति वक्तव्यम् ॥ ५३ ॥

संज्ञा और छन्दोविषय में अस्वाङ्ग पूर्वपद क्तान्त बहुव्रीहि से स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय बाहुल्य से हो । प्रवृद्धविलूनी ॥ प्रवृद्धविलूना ॥

४१३—अङ्गगात्रकण्ठेभ्यइति वक्तव्यम् ॥ ५४ ॥

स्वाङ्ग उपसर्जन अङ्ग, गात्र कण्ठ एतदन्त प्रातिपदिकों से स्त्री लिङ्ग में ङीष् प्रत्यय विकल्प से हो ॥ मृद्वङ्गी । मृद्वङ्गा । सुगात्री । सुगात्रा । स्निग्धकण्ठी । स्निग्धकण्ठा ॥ संयोगोपध होने से सूत्र से प्राप्ति नहीं थी ।

४१४—पुच्छाच्चेति वक्तव्यम् ॥ ५५ ॥

पुच्छान्त प्रातिपदिक से भी स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय विकल्प से हो ॥ सुपुच्छी । सुपुच्छा ॥

४१५—कबरमणिविषशरेभ्यो नित्यम् ॥ ५५ ॥

कबर, मणि, विष और शर शब्द से परे स्वाङ्ग उपसर्जन पुच्छ शब्द से नित्य ङीष् प्रत्यय हो ॥ कबरपुच्छी मयूरी । मणिपुच्छी । विषपुच्छी । शरपुच्छी ॥

४१६–उपमानात्पक्षाच्च पुच्छाच्च ॥ ५५ ॥

उपमानवाची शब्द से परे स्वाङ्ग उपसर्जन पक्ष और पुच्छ शब्द से स्त्री लिङ्ग में नित्य ङीष् प्रत्यय हो ॥ उलूकपक्षी शाला । उलूकपुच्छी सेना ॥

४१७—योपधप्रतिषेधे हयगवयमुकयमत्स्यमनुष्याणाम-प्रतिषेधः ॥ ६३ ॥

यकारोपध प्रातिपदिक से ङीष् प्रत्यय होने के प्रतिषेध में हय, गवय, मुकय, मत्स्य और मनुष्य शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय का प्रतिषेध नहीं है । किन्तु ङीष् प्रत्यय हो ॥ हयी । गवयी । मुकयी । मत्सी । मनुषी (३१४३)

४१८ इञ उपसंख्यानमजात्यर्थम् ॥६५॥

अजात्यर्थ इञ् प्रत्ययान्त प्रातिपादिक से स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय हो॥ सौतङ्गमी ।

४१९-अप्राणिजातेश्चारज्वादीनामुपसंख्यानम् ॥६६॥

रज्जु आदि को छोड़ कर उवर्णान्त अप्राणिजाति शब्दोंसे स्त्रीलिङ्ग में ऊङ्प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ अलाबूः । कर्कन्धूः।अरज्वादीना-मिति किम् । रज्जुः । हनुः ॥

४२०-श्वशुरस्योकाराकारलोपश्च ॥ ६८ ॥

स्त्रीलिङ्ग में श्वशुर शब्द से ऊङ् प्रत्यय और उकार तथा अकार का लोप हो ॥ श्वश्रूः ॥

४२१-सहितसहाभ्यां चेति वक्तव्यम् ॥७०॥

सहित और सह शब्द से परे ऊरु शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ सहितोरूः । सहोरूः ॥

४२२ गुग्गुलुमधुजतुपतयालूनामिति वक्तव्यम् ॥७१ ॥

छन्दोविषय में स्त्रीलिङ्ग में गुग्गुलु, मधु, जतु और पतयालु शब्द से भी ऊङ् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ गुग्गलूः । मधूः । जतूः । पतयालूः ॥

४२३-षाच्च यञः ॥७४॥

षकार से परे जो यञ् प्रत्यय तदन्त प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में चाप् प्रत्यय हो ॥ शार्कराक्ष्या । पौतिमाष्या ॥

४२४-यमाच्चेति वक्तव्यम् ॥ ८५ ॥

प्राग्दीव्यतीय अर्थों में यम शब्द से ण्य प्रत्यय हो यह कहना चाहिये। याम्यः ।

४२५-वाङ्मतिपितृमतां छन्दस्युपसंख्यानम् ॥ ८५ ॥

प्राग्दीव्यतीय अर्थों में वाच्, मति, पितृमत् इन शब्दों से ण्य प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये छन्दोविषय में ॥ वाच्यम् । मात्यम् । पैतृमत्यम्॥

४२६-पृथिव्याञाञौ ॥ ८५ ॥

प्राग्दीव्यतीय अर्थों में पृथिवी शब्द से ञ और अञ् प्रत्यय हो ॥ पार्थिवा ॥ पार्थिवी ॥

४२७-देवाद् यञञौ ॥ ८५ ॥

प्राग्दीव्यतीय अर्थों में देव शब्द से यञ् और अञ् प्रत्यय हो ॥ दैव्यम्। दैवम् ॥

४२८-बहिषष्टिलोपो यञ्च ॥ ८५ ॥

प्राग्दीव्यतीय अर्थों में बहिष् शब्द से यञ् प्रत्यय और टि का लोप हो ॥ बाह्यः ॥

४२९-ईकक् च ॥८५॥

प्राग्दीव्यतीय अर्थों में बहिष् शब्द से ईकक् भी प्रत्यय और टि लोप हो ॥ बाहीकः ॥

४३०-ईकञ्छन्दसि ॥ ८५ ॥

प्राग्दीव्यतीय अर्थों में बहिष् शब्द से ईकञ् भी प्रत्यय और टि लोप हो छन्दोविषय में ॥ वाहीकः ॥

४३१-स्थाम्नोऽकारः ॥ ८५ ॥

प्राग्दीव्यतीय अर्थों में स्थामन् शब्द से अकार प्रत्यय हो अश्वत्थामः ॥

४३२-भवार्थे तु लग्वाच्यः ॥ ८५ ॥

थर्वार्थ में तो स्थामन् शब्द से उत्पन्न अकार प्रत्यय का लुक् कहना चाहिये ॥ अश्वत्थामा ॥

४३३-लोम्नोऽपत्येषु बहुषु ॥ ८५ ॥

अपत्यार्थ वाच्य हो तो लोमन् शब्द से बहुवचन में अकार प्रत्यय हो ॥ उडुलोमाः ॥

४३४-सर्वत्र गोरजादिप्रत्ययप्रसंगे यत् ॥ ८५ ॥

सर्वत्र अजादि प्रत्यय के प्रसंग में गो शब्द से यत् प्रत्यय हो ॥ गव्यम् ॥

४३५-अग्निकलिभ्यां ढग् वक्तव्यः ॥ ८५ ॥

प्राग्दीव्यतीय अर्थों में अग्नि और कलि शब्द से ढक् प्रत्यय कहना चाहिये—अग्नेरपत्यादि—आग्नेयम् । कालेयम् ॥

४३६—ग्रीष्मादच्छन्दसीति वक्तव्यम् ॥ ८६ ॥

प्राग्दीव्यतीय अर्थों में छन्द (वृत्त) से भिन्नार्थ वाच्य हो तो ग्रीष्म शब्द से अञ् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ ग्रैष्मम् । यहां नहीं होता कि—ग्रैष्मी त्रिष्टुप् ॥

४३७—बाह्वादिप्रभृतिषु येषां दर्शनं गोत्रभावे लौकिके ततोऽन्यत्र तेषां प्रतिषेधः ॥ ९६ ॥

लोक में विदित गोत्रभाव में बाह्वादि प्रभृतियों में से जिन का दर्शन हो उनसे ही अपत्यार्थ में इञ् प्रत्यय हो। अन्यत्र उन से इञ् प्रत्यय न हो बाहविः । नाडायनः । यहां नहीं होता कि - बाहुर्नामकश्चित्तस्यापत्यं बाहवः नाडिः ॥

४३८—संबन्धिशब्दानां च तत्सदृशात्प्रतिषेधः ॥ ९६ ॥

सम्बन्धि शब्दों के सदृश संज्ञा शब्दों से विधीयमान प्रत्यय का निषेध हो ॥ श्वशुरस्यापत्यं श्वशुर्य्यः । संज्ञा होने से यहां नहीं होता कि—श्वशुरो नाम कश्चित्तस्यापत्यं श्वाशुरिः ॥

४३९—व्यासवरुडनिषादचण्डालबिम्बानामिति वक्तव्यम् ॥ ९७ ॥

व्यास, वरुड, निषाद, चण्डाल और बिम्ब शब्द से अपत्यार्थ में इञ् प्रत्यय हो और उस के संनियोग से उक्त शब्दों को अकङ् आदेश हो ॥व्यासस्या

पत्यं–वैयासकिः (३३९३) । वारुडकिः । नैषादकिः । चाण्डालकिः । बैम्बकिः ॥

४४०—चटकाच्चेति वक्तव्यम् ॥ १२८ ॥

चटक शब्द से भी अपत्यार्थ में ऐरक् प्रत्यय हो॥चटकस्यापत्यं चाटकैरः ॥

४४१—स्त्रियामपत्ये लुग् वाच्यः ॥ १२८ ॥

चटका वा चटक शब्द से उत्पन्न ऐरक् प्रत्यय का लुक् हो स्त्री अपत्यवाच्य हो तो ॥ चटकायाश्चटकस्य वाऽपत्यं स्त्री चटका ॥

४४२—राज्ञो जातावेवेति वाच्यम् ॥ १३० ॥

जाति ही वाच्य हो तो राजन् शब्द से यत् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ राजन्यो भवति क्षत्रियश्चेत् । राजनोऽन्यः ॥

४४३—क्षत्राज्जातावेवेति वाच्यम् ॥ १३८ ॥

क्षत्र शब्द से जात्यर्थ में ही घ प्रत्यय हो ॥ क्षत्रियः । क्षात्रिरन्यत्र ॥

४४४–तक्ष्णोऽण उपसंख्यानम् ॥ १५३ ॥

तक्षन् शब्द से अपत्यार्थ में अण् प्रत्यय का विकल्प से उपसंख्यान करना चाहिये ॥ ताक्ष्णः । ताक्षण्यः ॥

४४५—परमप्रकृतेरेवायमिष्यतेतत्संनियोगेनप्रकृतिरूपं निपात्यते च ॥ १५५ ॥

परम प्रकृति–कुशल और कर्मार शब्द से ही अपत्यार्थ में फिञ् प्रत्यय इष्ट है । और प्रत्यय के संनियोग से प्रकृतिरूप निपातित होता है ॥ कुशलस्यापत्यं कौशल्यायनिः । कर्मारस्यापत्यं कार्मार्यायणिः ॥

४४६—दगुकोसलकर्मारच्छागवृषाणां युट् चादिष्टस्य ॥१५५॥

दगु, कोसल, कर्मार, छाग, और वृष शब्द से फिञ् प्रत्यय हो और आदिष्ट प्रत्ययादेश आयन् को युट् आगम हो ॥ यह स्मृत्यन्तर है ॥ दागव्यायनिः । कौसल्यायनिः । कार्मार्यायणिः । छाग्यायनिः । वार्ष्यायणिः ॥

४४७—त्यदादीनां फिञ् वा वाच्यः ॥ १५६ ॥

त्यदादि शब्दों से अपत्यार्थ में फिञ् प्रत्यय विकल्प से हो॥ त्यादायनिः । त्यादः । तादायनिः । तादः । यादायनिः । यादः ॥

४४८—वृद्धस्य च पूजायाम् ॥१६४॥

पूजा गम्यमान हो तो गोत्र की युव संज्ञा हो ॥ तत्रभवान् गार्ग्यायणः ॥

४४९—यूनश्च कुत्सायाम् ॥ १६५ ॥

कुत्सा गम्यमान हो तो युवा की गोत्र संज्ञा हो ॥ गार्ग्यो जाल्मः ॥

४५० क्षत्रियसमानशब्दाज्जनपदात्तस्य राजन्यपत्यवत्॥१६६॥

क्षत्रिय समान जनपद वाची शब्द से "तस्य राजनि" इस अर्थ में अपत्यवत् प्रत्यय हो ॥ पञ्चालानां राजा पाञ्चालः । वैदेहः । मागधः ॥

४५१—पूरोरण् वक्तव्यः ॥ १६९ ॥

षष्ठी समर्थ पूरु शब्द से अपत्यार्थ और राजार्थ में अण् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ पूरोरपत्यं राजा वा पौरवः ॥

४५२—पाण्डोर्ड्यण् ॥ १६९ ॥

षष्ठीसमर्थ जनपदवाची पाण्डु शब्द से राजार्थ में ड्यण् प्रत्यय हो ॥ पाण्डो राजा पाण्डवः ॥

४५३—कम्बोजादिभ्य इति वक्तव्यम् ॥१७३ ॥

कम्बोजादिकों से परे तद्राजसंज्ञक प्रत्यय का लुक् हो ॥ कम्बोजस्यापत्यं राजा वा कम्बोजः । कम्बोजौ । कम्बोजाः । चोलः । शकः । केरलः ॥

इति चतुर्थाध्यायस्य प्रथमपाद—परिशेषः ॥

४५४—शकलकर्दमाभ्यामुपसंख्यानम् ॥ २ ॥

तृतीया समर्थ रागवाची शकल और कर्दम शब्दसे ठक् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये रक्त अर्थ में ॥ शकलेन रक्तं वस्त्रं शाकलिकम् । कार्दमिकम् ॥

४५५—आभ्यामणपीष्यते ॥ २ ॥

तृतीया समर्थ राग वाची शकल और कर्दम शब्द से रक्तार्थ में अण् प्रत्यय भी इष्ट है । शकलेन रक्तं वस्त्रं शाकलम् । कार्दमम् ॥

४५६- नील्या अन् ॥ २ ॥

तृतीया समर्थ नीलीशब्दसे रक्तार्थमें अन् प्रत्ययहो । नील्या रक्तं वस्त्रं नीलम्॥

४५७ - पीतात्कन् ॥ २ ॥

तृतीया समर्थ पीत शब्द से रक्तार्थ में कन् प्रत्यय हो ॥ पीतेन रक्तं वस्त्रं पीतकम् ॥

४५८--हरिद्रामहारजनाभ्यामञ् ॥ २ ॥

तृतीया समर्थ रागवाची हरिद्रा और महारजन शब्द से रक्तार्थ में अञ् प्रत्यय हो ॥ हरिद्रया रक्तं हारिद्रं वस्त्रम् । माहारजनम् ॥

४५९--दृष्टेसामन्यणवा डिद्भवतीति वक्तव्यम् ॥ ७ ॥

दृष्ट साम अर्थ में विहित अण् विकल्प से डिद्वत् होता है यह कहना चाहिये ॥ उशनसा दृष्टं साम–औशनम् । औशनसम् ॥

४६०--जाते चार्थे योऽन्येन बाधितः पुनरण्विधीयते स वा डिद्भवतीति वक्तव्यम् ॥ ७ ॥

जातार्थ में जो अण् अन्य सूत्र से बाधित होकर फिर विहित हो वह डिद्वत् विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ शतभिषजि जातः शतभिषक् । शातभिषजः (१५८७ । १६०७)

४६१- तीयादीकक् स्वार्थे वा वक्तव्यः ॥ ७ ॥

तीय प्रत्ययान्त शब्द से स्वार्थ में ईकक् प्रत्यय विकल्प से कहना चाहिये ॥ द्वितीयमेव द्वैतीयीकम् । तार्त्तीयीकम् । द्वितीयकम् । तृतीयकम् । द्वितीयम् । तृतीयम् ॥

४६२--न विद्यायाः ॥ ७ ॥

विद्या वाच्य हो तो तीय प्रत्ययान्त शब्द से स्वार्थ में ईकक् प्रत्यय न हो ॥ द्वितीया विद्या । तृतीया विद्या ॥

४६३--गोत्रादङ्कवदिष्यते ॥ ७ ॥

तृतीया समर्थ गोत्र वाची शब्द से दृष्ट साम इस अर्थ में अङ्कवत् प्रत्यय इष्ट है ॥ औपगवेन दृष्टं साम–औपगवकम् । कापटवकम् (१६९७)

दृष्टेसामानिजातेच, द्विरण्डिद्वाविधीयते ।
तीयादीकङ्नविद्याया, गोत्रादङ्कवदिष्यते ॥

४६४- छप्रकरणे पैङ्गाक्षीपुत्रादिभ्य उपसंख्यानम् ॥२८॥

छ प्रत्यय के प्रकरण में पैङ्गाक्षीपुत्रादि शब्दों से "सास्य देवता" इस विषय में प्रत्यय हो ॥ पैङ्गाक्षी पुत्रो देवताऽस्य–पैङ्गाक्षी पुत्रीयम् । तार्णविन्दवीयम् ॥

४६५-शतरुद्राद्घंश्च ॥ २८ ॥

शतरुद्र शब्द से " सास्य देवता " इस विषय में घ प्रत्यय और चकार से छ प्रत्यय हो ॥ शतं रुद्रा देवता अस्य शतरुद्रियम् । शतरुद्रीयम् ॥

४६६-तदस्मिन्वर्त्ततइति नवयज्ञादिभ्य उपसंख्यानम् ॥३५॥

प्रथमासमर्थ नवयज्ञादि शब्दों से "अस्मिन्वर्त्तते" इस विषय में ठञ् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये कालवाच्य हो तो ॥ नवयज्ञोऽस्मिन्वर्त्तते-नावयज्ञिकः कालः ॥ पाकयज्ञिकः ॥

४६७-पूर्णमासादण् वक्तव्यः ॥३५॥

प्रथमा समर्थ पूर्णमास शब्द से "अस्मिन्वर्त्तते" इस विषय में अण् प्रत्यय कहना चाहिये कालवाच्य होतो ॥ पूर्णमासोऽस्मिन् वर्त्तते पौर्णमासी तिथिः ॥

४६८-पितुर्भ्रातरि व्यत् ॥ ३६ ॥

षष्ठी समर्थ पितृ शब्द से व्यत् प्रत्यय हो भ्राता वाच्य हो तो ॥ पितुर्भ्राता-पितृव्यः ॥

४६९-मातुर्डुलच् ॥३६॥

षष्ठी समर्थ मातृ शब्द से भ्राता अर्थ में डुलच् प्रत्यय हो ॥ मातुर्भ्राता मातुलः ॥

४७०-मातृपितृभ्यां पितरि डामहच् ॥ ३६ ॥

षष्ठीसमर्थ मातृ और पितृ शब्द से पित्रर्थ में डामहच् प्रत्यय हो ॥ मातुः पिता-मातामहः । पितुः पिता-पितामहः ॥

४७१-अवेर्दुग्धे सोढदूसमरीसचो वक्तव्याः ॥ ३६ ॥

षष्ठीसमर्थ अवि शब्द से दुग्धार्थ में सोढ, दूस और मरीसच् प्रत्यय हो॥ अवेर्दुग्धमविसोढम् । अविदूसम् । अविमरीसम् ॥

४७२-तिलान्निष्फलात्पिञ्जपेजौ वक्तव्यौ ॥ ३६ ॥

निष्फल वाची तिल शब्द से पिञ्ज और पेज प्रत्यय कहने चाहिये ॥ निष्फलस्तिलस्तिलपिञ्जः । तिलपेजः । वन्ध्यस्तिलइत्यर्थः ॥

४७३-पिञ्छन्दसि डिच्च ॥ ३६ ॥

छन्दोविषय में निष्फल तिल शब्द से पिञ्ज प्रत्यय हो और वह डिद्धत् हो ॥ तिलपिञ्जः ॥

४७४-गुणादिभ्यो ग्रामज् वक्तव्यः ॥ ३७ ॥

षष्ठी समर्थ गुणादि शब्दों से ग्रामच् प्रत्यय हो समूह अर्थ में ॥ गुणानां समूहो गुणग्रामः । करणग्रामः । तत्वग्रामः । शब्दग्रामः । इन्द्रियग्रामः ॥

४७५-वृद्धाच्चेति वक्तव्यम् ॥ ३९ ॥

षष्ठीसमर्थ वृद्ध शब्द से समूहार्थ में वुञ् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ वृद्धानां समूहो वार्धकम् ॥

४७६-गणिकायाश्च यञ् वक्तव्यः ॥ ४० ॥

षष्ठीसमर्थ गणिका शब्द से समूहार्थ में यञ् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ गणिकानां समूहो गाणिक्यम् ॥

४७७-पृष्ठादुपसंख्यानम् ॥४२॥

षष्ठीसमर्थ पृष्ठ शब्द से समूहार्थ में यञ् प्रत्यय हो ॥ पृष्ठानां समूहः पृष्ठ्यम् ॥

४७८-अह्नः खः क्रतौ ॥४२॥

षष्ठीसमर्थ अहन् शब्द से समूहार्थ में ख प्रत्यय हो क्रतु वाच्य हो तो ॥ अह्नां समूहोऽहीनः क्रतु ॥

४७९-पर्श्वा णस् वक्तव्यः ॥४२॥

षष्ठीसमर्थ पर्शु शब्द से समूहार्थ में णस् प्रत्यय हो ॥ पर्शूनां समूहः पार्श्वम् ॥

४८०-वातादूलः ॥४२॥

षष्ठीसमर्थ वात शब्द से समूहार्थ में ऊल प्रत्यय हो ॥ वातानां समूहो वातूलः ॥

४८१-गजसहायाभ्यां चेति वक्तव्यम् ॥४३॥

षष्ठीसमर्थ गज और सहाय शब्द से समूहार्थ में तल् प्रत्यय हो यह क-

हना चाहिये ॥ गजानां समूहो गजता । सहायानां समूहः सहायता ॥

४८२–खलादिभ्य इनिर्वक्तव्यः ॥५१॥

षष्ठीसमर्थ खलादि शब्दों से समूहार्थ में इनि प्रत्यय कहना चाहिये ॥ खलिनी । डाकिनी । कुण्डलिनी । कुटुम्बिनी । खलादिराकृतिगणः ॥

४८३–कमलादिभ्यः खण्डच् प्रत्ययो भवति ॥५१॥

षष्ठीसमर्थ कमलादि शब्दों से समूहार्थ में खण्डच् प्रत्यय हो ॥ कमलानां समूहः कमलखण्डम् । अम्भोजखण्डम् । कमलादिराकृतिगणः ॥

४८४–नरकरितुरङ्गाणां स्कन्धच् प्रत्ययः ॥५१॥

षष्ठीसमर्थ नर, करिन् और तुरङ्ग शब्द से समूहार्थ में स्कन्धच् प्रत्यय हो नराणां समूहो नरस्कन्धः । करिस्कन्धः । तुरङ्गस्कन्धः ॥

४८५–पूर्वादिभ्यः काण्डः प्रत्ययो भवति ॥५१॥

षष्ठीसमर्थ पूर्वादि शब्दों से समूहार्थ में काण्ड प्रत्यय हो ॥ पूर्वेषां समूहः पूर्वकाण्डम् । तृणकाण्डम् । कर्मकाण्डम् । ज्ञानकाण्डम् ॥

४८६छन्दसः प्रत्ययविधाने नपुंसके स्वार्थ उपसंख्यानम् ॥५५॥

छन्दोवाची शब्द से प्रत्यय विधान में नपुंसकलिङ्ग स्वार्थ में यथाविहित प्रत्यय हो ॥ त्रिष्टुबेव त्रैष्टुभम् । जागतम् ॥

४८७–मुख्यार्थात्तूक्थशब्दाट्ठगणौनेष्येते ॥६०॥

द्वितीयासमर्थ मुख्यार्थ उक्थ शब्द से अधीते और वेद अर्थ में ठक् और अण् प्रत्यय इष्ट नहीं है । उक्थम् ॥

४८८–सूत्रान्तादकल्पादेरेवेष्यते ॥६०॥

द्वितीयासमर्थ अकल्पादि सूत्रान्त शब्द से ठक् प्रत्यय इष्ट है ॥ सांग्रहसूत्रिकः । यहां नहीं होता कि–कल्पसूत्रमधीते काल्पसूत्रः ॥

४८९–विद्यालक्षणकल्पान्ताच्चेति वक्तव्यम् ॥६०॥

विद्या लक्षण और कल्प ये हैं अन्त में जिस के ऐसे द्वितीयासमर्थ उगन्तु आवन्त और मातिपूदिक से अधीते और वेद अर्थ में ठक् प्रत्यय हो ॥

वायसविद्यामधीते वेद वा वायसविद्यिकः ॥ गोलक्षणंग्रन्थविशेषमधीते वेद वा—गोलक्षणिकः । आश्वलक्षणिकः । पाराशरकल्पिकः ॥

४९०अङ्गक्षत्रधर्मसंसर्गत्रिपूर्वाद्विद्यान्तान्नेति वक्तव्यम् ॥६०॥

द्वितीया समर्थ अङ्ग, क्षत्र, धर्म, संसर्ग और त्रिशब्द पूर्वपद वाले विद्यान्त शब्द से अधीते और वेद अर्थ में ठक् प्रत्यय न हो यह कहना चाहिये ॥ अङ्गविद्यामधीते वेद वा आङ्गविद्यः । क्षात्रविद्यः । धार्मविद्यः । सांसर्गविद्यः । त्रैविद्यः ॥

४९१आख्यानाख्यायिकेतिहासपुराणेभ्यष्ठग्वक्तव्यः ॥६०॥

द्वितीया समर्थ आख्यानार्थ, आख्यायिकार्थ, इतिहास और पुराण शब्द से अधीते और वेद अर्थ में ठक् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ यवक्रीतमधीते वेद वा यावक्रीतिकः । वासवदत्तिकः । इतिहासं भारतादिकमधीते वेद वा—ऐतिहासिकः । पौराणिकः ॥

४९२. सर्वसादेर्द्विगोश्चलः ॥ ६० ॥

द्वितीया समर्थ सर्वादि, सादि और द्विगु संज्ञक शब्द से अधीते और वेद अर्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् हो ॥ सर्ववेदानधीते वेद वा सर्ववेदः । सर्वतन्त्रः । सादेः । सवार्त्तिकः । ससंग्रहः द्विगुसे—द्विवेदः । त्रिवेदः । चतुर्वेदः ॥

४९३—अनुसूर्लक्ष्यलक्षणे च ॥ ६१ ॥

द्वितीया समर्थ ग्रन्थवाची अनुसू, लक्ष्य और लक्षण शब्द से अधीते और वेद अर्थ में ठक् प्रत्यय हो ॥ अनुसूर्नाम ग्रन्थस्तमधीते—आनुसुकः । लक्ष्यमधीते लाक्षिकः । लक्षणमधीते लाक्षणिकः ॥

४९४—इकन्पदोत्तरपदात् ॥ ६० ॥

द्वितीया समर्थ पदोत्तरपद शब्द से अधीते और वेद अर्थ में इकन् प्रत्यय हो ॥ पूर्वपदमधीते वेद वा—पूर्वपदिकः । उत्तरपदिकः ॥

४९५—शतषष्टेः षिकन्पथः ॥ ६० ॥

शत और षष्टि शब्द से परे द्वितीया समर्थ पथिन् शब्द से अधीते और वेद अर्थ में षिकन् प्रत्यय हो ॥ शतपथमधीते वेद वा शतपथिकः । षष्टिपथिकः । शतपथिकी । षष्टिपथिकी ॥

४९६–संख्याप्रकृतेरिति वक्तव्यम् ॥ ६५ ॥

द्वितीया समर्थ ककारोपध संख्या प्रकृति सूत्रवाची शब्द से अधीते और वेद अर्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् हो यह कहना चाहिये ॥ पाणिनीयाष्टकं सूत्रं तदधीते–अष्टकाः पाणिनीयाः । संख्या प्रकृत्यभाव से यहां नहीं होता कि– महावार्त्तिकं सूत्रमधीते: । माहावार्त्तिकः कालापक ॥

४९७–महिषाच्चेति वक्तव्यम् ॥ ८७ ॥

और महिष शब्द से चातुरर्थिकड्मतुप् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये । महिषा अस्मिन् सन्ति महिष्मान् नाम देश ।

४९८-अवारपाराद्विगृहीतादपि विपरीताच्चेति वक्तव्यम् ॥९३॥

विगृहीत (पृथक्) और विपरीत भी अवतार पार शब्द से ख प्रत्यय हो यह कहना चहिये ॥ अवारे भवः अवारीणः । पारीणः । पारावारीणः । अवारपारीणः ॥

४९९–अमेहक्वतसित्रेभ्यएव ॥ १०४ ॥

अमा, इह, क्व, तसि, और त्र इन्हीं अव्ययों से शैषिक त्यप् प्रत्यय हो अमात्यः । इहत्यः । क्वत्यः । ततस्त्यः । तत्रत्यः । अत्रत्यः । कुत्रत्यः ॥

५००– त्यब्नेर्ध्रुवे ॥१०४॥

ध्रुवार्थ में नि अव्यय से त्यप् प्रत्यय हो ॥ नियतं ध्रुवम् । नित्यम् ॥

५०१—निसो गते ॥१०४॥

गतार्थ में निस् अव्यय से त्यप् प्रत्यय हो ॥ निष्ट्यः । निर्गतो वर्णाश्रमेभ्य-श्चाण्डालादिः ॥

५०२–अरण्याण्णः ॥१०४॥

अरण्य शब्द से शैषिक ण प्रत्यय हो ॥ अरण्ये भवा आरण्याः सुमनसः ॥

५०३–दूरादेत्यः ॥१०४॥

दूर शब्द से शैषिक एत्य प्रत्यय हो ॥ दूरेत्यःपथिकः ॥

५०४=उत्तरादाहञ् ॥ १०४ ॥

उत्तर शब्द से शैषिक आहञ् प्रत्यय हो । उत्तरे भव औत्तराहः ॥

५०५-आविसश्छन्दसि ॥ १०४ ॥

छन्दोविषय में आविस् अव्यय से त्यप् प्रत्यय हो ॥ आविष्ट्यो वर्धते ॥

५०६-आपदादिपूर्वपदात्कालान्तात् ॥ ११६ ॥

आपद् आदि पूर्वपद वाले कालान्त शब्द से शैषिक ठञ् और ञिठ प्रत्यय हो ॥ आपत्कालिकी । आपत्कालिका । तात्कालिकी । तात्कालिका ॥

५०७-पथ्यध्यायन्यायविहारमनुष्यहस्तिष्विति वक्तव्यम् ॥ १२९ ॥

पथिन्, अध्याय, न्याय, विहार, मनुष्य और हस्ती वाच्य हो तो अरण्य शब्द से शैषिक वुञ् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ अरण्ये भव आरण्यकः पन्थाः । आरण्यकोऽध्यायः । आरण्यको न्यायः । आरण्यको मनुष्यः आरण्यको हस्ती ॥

५०८-वा गोमयेषु ॥ १२९ ॥

गोमय अभिधेय हों तो अरण्य शब्द से शैषिक वुञ् प्रत्यय विकल्प से हो ॥ अरण्ये भवा आरण्यका गोमयाः । आरण्या वा ॥

५०९-वेणुकादिभ्यश्छण् वाच्यः ॥ १३८ ॥

वेणुकादि प्रातिपदिकों से शैषिक छण् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ वैणुकीयम् । वैत्रकीयम् । औत्तरपदकीयम् ॥ वेणुकादिराकृतिगणः ॥

५१०-अकेकान्तग्रहणे कोपधग्रहणं सौसुकाद्यर्थम् ॥ १४१ ॥

अकेकान्त ग्रहण के स्थान में सौसुकादि के लिये कोपध ग्रहण करना चाहिये ॥ सौसुकीयम् । मौसुकीयम् । ऐन्द्रवेणुकीयम् ॥

इति चतुर्थाध्यायस्य द्वितीय-पाद-परिशेषः ॥

५११—सपूर्वपदाट्ठञ् वक्तव्यः ॥ ४ ॥

विद्यमान पूर्वपद अर्ध शब्द से शैषिक ठञ् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ वालेयार्द्धे भवं-वालेयार्धिकम् । गौतमार्द्धिकम् ॥

५१२-अवोधसोर्लोपश्च ॥ ८ ॥

अवस् और अधस् शब्द से शैषिक म प्रत्यय और उक्त दोनों शब्दों के अन्त्य वर्ण का लोप हो ॥ अवमम् । अधमम् ॥

५१३--चिरपरुत्परारिभ्यस्त्नो वक्तव्यः ॥ २३ ॥

चिर, परुत् और परारि शब्द से शैषिक त्न प्रत्यय कहना चाहिये ॥ चिरत्नम् । परुत्नम् । परारित्नम् ॥

५१४-प्रगस्य च्छन्दसि गलोपश्च ॥ २३ ॥

छन्दोविषय में प्रग शब्द से शैषिक त्न प्रत्यय और गकार का लोप हो॥ प्रत्नम् ॥

५१५-अग्रादिपश्चाड्डिमच् ॥ २३ ॥

अग्र, आदि और पश्चात् शब्द से शैषिक डिमच् प्रत्यय हो ॥ अग्रे-भवम् अग्रिमम् । आदिमम् । पश्चिमम् ॥

५१६—अन्ताच्च ॥ २३ ॥

अन्त शब्द से शैषिक डिमच् प्रत्यय हो ॥ अन्तिमम् ॥

५१७-चित्रारेवतीरोहिणीभ्यः स्त्रियामुपसंख्यानम् ॥ ३४ ॥

सप्तमी समर्थ चित्रा-रेवती और रोहिणी शब्द से परे जातार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् हो स्त्री अभिधेय होतो॥ चित्रायां जाता कन्या चित्रा । रेवती । रोहिणी ॥

५१८—फल्गुन्यषाढाभ्यां टानौ वक्तव्यौ ॥ ३४ ॥

सप्तमी समर्थ फल्गुनी और अषाढ़ा शब्द से जातार्थ में यथासंख्य ट और अन् प्रत्यय कहना चाहिये स्त्री अभिधेय हो तो। फल्गुन्यां जाता स्त्री फल्गुनी । अषाढ़ा ॥

५१९--श्रविष्ठाषाढाभ्यां छणपि वक्तव्यः ॥ ३४ ॥

सप्तमी समर्थ श्रविष्ठा और अषाढ़ा शब्द से जातार्थ में छण् प्रत्यय भी कहना चाहिये पुमान् अभिधेय हो तो भी ॥ श्रविष्ठासु जातः श्राविष्ठीयः । आषाढीयः ॥ श्राविष्ठीया ॥ आषाढीया ॥

५२०-बहिर्देवपञ्चजनेभ्यश्चेति वक्तव्यम् ॥ ५८ ॥

सप्तमी समर्थ बहिष्, देव और पञ्चजन शब्द से भी भवार्थ में ञ्य प्रत्यय हो यह कहना चाहिये। बहिर्भवं बाह्यम् । देवेषु भवं दैव्यम्। पाञ्चजन्यम्॥

५२१-चतुर्मासाण्ण्यो यज्ञे ॥ ५८ ॥

सप्तमी समर्थ चतुर्मास शब्द से भवार्थमें ण्य प्रत्यय कहना चाहिये यज्ञवाच्य हो तो ॥ चातुर्मास्यानि व्रतानि । चतुर्षु चतुर्षु मासेषु भवानि चातुर्मास्यानि वैश्वदेवादिपर्वाणि चातुर्मास्यो यज्ञः ॥

५२२—परिमुखादिभ्यएवेष्यते ॥ ५९ ॥

सप्तमी समर्थ अव्ययीभाव संज्ञक परिमुखादि प्राति पदिकों से ही भवार्थ में ञ्य प्रत्यय इष्ट है ॥ परिमुखे भवं पारिमुख्यम् । पार्योष्ठ्यम् ॥ यहां नहीं होता कि—उपकूलंभव औपकूलः । औपशालः ॥

५२३ -समानशब्दाट्ठञ् वक्तव्यः ॥ ६० ॥

सप्तमीसमर्थ समान शब्द से भवार्थ में ठञ् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ सामानिकम् ॥

५२४--तदादेश्च ॥६०॥

समानशब्द जिस के आदि में हो ऐसे सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से भवार्थ में ठञ् प्रत्यय हो ॥ सामानग्रामिकम् । सामानदेशिकम् ॥

५२५--अध्यात्मादिभ्यष्ठञिष्यते ॥६०॥

अव्ययीभावसंज्ञक सप्तमीसमर्थ अध्यात्मादि शब्दों से भवार्थ में ठञ् प्रत्यय इष्ट है ॥ आध्यात्मिकम् । आधिदैविकम् । आधिभौतिकम् । अध्यात्मादिराकृतिगणः ॥

५२६--ऊर्ध्वं दमाच्च ॥६०॥

सप्तमीसमर्थ ऊर्ध्वंदम शब्द से भी भवार्थ में ठञ् प्रत्यय हो ॥ ऊर्ध्वं दमाद् भव और्ध्वन्दमिकः ॥

५२७ -ऊर्ध्वदेहाच्च ॥६०॥

सप्तमीसमर्थ ऊर्ध्वदेह शब्द से भी भवार्थ में ठञ् प्रत्यय हो ॥ ऊर्ध्वं देहाद्भवम्—और्ध्वदेहिकम् ॥

५२८—लोकोत्तरपदाच्च ॥६०॥

सप्तमीसमर्थ लोकोत्तरपद शब्द से भीभवार्थमें ठञ् प्रत्यय हो ॥ इहलोके भवम् ऐहलौकिकम् । पारलौकिकम् ॥

५२९—मुखपार्श्वशब्दाभ्यांतसन्ताभ्यामीयः प्रत्ययो-वक्तव्यः ॥६०॥

सप्तमीसमर्थ तस् प्रत्ययान्त मुख और पार्श्वशब्द से भवार्थ में ईय प्रत्यय कहना चाहिये ॥ मुखतोभवं मुखतीयम् । पार्श्वतीयम् ॥

५३०—जनपरयोः कुक्च ॥ ६० ॥

सप्तमीसमर्थ जन और पर शब्द से भवार्थ में ईय प्रत्यय और उक्त दोनों शब्दों को कुक् आगम हो ॥ जनेभवं जनकीयम् । परकीयम् ॥

५३१—मध्यशब्दादीयः ॥६०॥

सप्तमीसमर्थ मध्य शब्द से भवार्थ में ईय प्रत्यय हो ॥ मध्ये भवो मध्यीयः ।

५३२—मण्मीयौ च प्रत्ययौ वक्तव्यौ ॥६०॥

सप्तमीसमर्थ मध्य शब्द से भवार्थ में मण् और मीय प्रत्यय भी कहना चाहिये ॥ माध्यमः । मध्यमीयः ॥

५३३—मध्यो मध्यं दिनण् चास्मात् ॥६०॥

सप्तमीसमर्थ मध्य शब्द से दिनण् प्रत्यय और मध्य शब्द मध्यम्भाव को प्राप्त हो भवार्थ में ॥ मध्ये भवो माध्यन्दिन उपगायति ॥

५३४—स्थाम्नो लुग् वक्तव्यः ॥६०॥

सप्तमीसमर्थ स्थामन् शब्दान्त से भवार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् कहना चाहिये ॥ अश्वत्थाम्निभवोऽश्वत्थामा ॥

५३५=अजिनान्ताच्च ॥६०॥

सप्तमीसमर्थ अजिनान्त प्रातिपदिक से भवार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् हो ॥ वृकाजिनेभवो वृकाजिनः । सिंहाजिनः । उष्ट्राजिनः । मृगाजिनः ॥

तथा चास्य संग्रहः। समानस्य तदादेश्च अध्यात्मादिषु चेष्यते ।
ऊर्ध्वं दमाच्च देहाच्च लोकोत्तरपदस्य च ॥
मुखपार्श्वतसोरीयः कुग्जनस्य परस्य च ।
ईयः कार्योऽथ मध्यस्य मण्मीयौ प्रत्ययौ तथा ॥
मध्योमध्यंदिनण्चास्मात्—थाम्नोलुगजिनात्तथा ॥

५३६-लुबाख्यायिकार्थस्य प्रत्ययस्य बहुलम् ॥८७॥

द्वितीया समर्थ आख्यायिका वाची शब्दों से " अधि कृत्य कृते ग्रन्थे " इस विषय में उत्पन्न प्रत्यय का बाहुल्य से लुप् हो ॥ वासवदत्तामधिकृत्य कृताऽख्यायिका वासवदत्ता । सुमनोत्तरा । उर्वशी ॥ यहां लुप् नहीं होता कि—भैमरथी ॥

५३७-द्वन्द्वे देवासुरादिभ्यः प्रतिषेधः ॥ ८८ ॥

द्वन्द्व समास में द्वितीया समर्थ देवासुरादि शब्दों से " अधि कृत्य कृते ग्रन्थे " इस विषय में प्राप्त छ प्रत्यय का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ दैवासुरम् । राक्षोऽसुरम् । गौणमुख्यम् ॥ दैवासुरी । राक्षोऽसुरी ॥

५३८ वहेस्तुरणिट्च ॥ १२० ॥

षष्ठीसमर्थ तृच् प्रत्ययान्त वहि धातु से इदम् अर्थ में अण् प्रत्यय और वहि से विहित तृच् को इट् आगम हो ॥ संवोढुः स्वं सांवहित्रम् ॥

५३९=अग्नीधः शरणेरञ्भं च ॥ १२० ॥

षष्ठीसमर्थ अग्नीध् शब्द से इदम् अर्थ में शरण (गृह) वाच्य हो तो रञ् प्रत्यय हो और अग्नीध् शब्द भ संज्ञक हो । अग्नीध इदं शरणम्—आग्नीध्रम् (सोमयागादावाग्नीध्रशालोच्यते) । तात्स्थ्यात्सोऽप्याग्नीध्रः ॥

५४०—समिधामाधाने षेण्यण् ॥ १२० ॥

षष्ठी समर्थ समिध् शब्द से आधान अर्थ में षेण्यण् प्रत्यय हो ॥ समिधामाधानो मन्त्रः सामिधेन्यो मन्त्रः । सामिधेनी ऋक् ॥

५४१- रथसीताहलेभ्यो यद्विधाविति तदन्तविधिरुपसंख्यायते ॥ १२१ ॥

रथ, सीता और हल शब्द से यत् प्रत्यय के विधान में तदन्त विधि का भी उपसंख्यान करना चाहिये ॥ परमरथ्यम् । उत्तमरथ्यम् ॥ परमहल्यम् । परमसीत्यम् ॥

५४२—पत्त्राद्वाह्ये ॥ १२३ ॥

षष्ठी समर्थ पत्त्र वाची शब्द से वहनीय अर्थ में अञ् प्रत्यय हो ॥ अश्वस्य वहनीयमाश्वम् । औष्ट्रम् । गार्दभम् ॥

५४३—वैरे देवासुरादिभ्यः प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ १२५ ॥

षष्ठी समर्थ देवासुरादि शब्दों से वैरार्थ में वुन् प्रत्यय का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ देवासुराणां वैरं देवासुर वैरम् । राक्षोऽसुरम् ॥

५४४—चरणाद्धर्माम्नाययोरिति वक्तव्यम् ॥ १२६ ॥

षष्ठी समर्थ चरण वाची शब्द से धर्म और आम्नाय अर्थ में वुञ् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ कठानां धर्म आम्नायो वा काठकम् । कालापकम् । मौदकम् । पैप्पलादकम् ॥

५४५—घोषग्रहणमपि कर्त्तव्यम् ॥ १२७ ॥

संघादि प्रत्ययार्थ विशेषणों में घोष ग्रहण भी करना चाहिये । गर्गाणामयं गार्गो घोषः ॥

५४६—एकाचो नित्यम् ॥ १४४ ॥

षष्ठीसमर्थ एकाच् प्रातिपदिक से भक्ष्य और आच्छादन अभिधेय को छोड़ कर विकार और अवयव अर्थ में नित्य मयट् प्रत्यय हो ॥ त्वङ्मयम् । वाङ्मयम् ॥

५४७—तालाद्धनुषि ॥ १५२ ॥

षष्ठी समर्थ ताल शब्द से विकार और अवयव अर्थ में धनुष् वाच्य हो-तो अण् प्रत्यय हो ॥ तालस्य विकारः ताल धनुः । अन्यत्र तालमयम् ॥

५४८—फलपाकशुषामुपसंख्यानम् ॥ १६६ ॥

जो फल के पकने से सूखजाते हैं तद्वाची शब्दों से फलार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुप् हो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ व्रीहीणां फलानि व्रीहयः यवाः । माषाः । मुद्गाः । तिलाः ॥

५४९—पुष्पमूलेषु बहुलम् ॥ १६६ ॥

पुष्प अथवा मूल अभिधेय हो तो प्राति पदिक से परे उत्पन्न प्रत्यय का बाहुल्य से लुप् हो ॥ मल्लिकायाः पुष्पं मल्लिका । विदार्य्या मूलं विदारी ॥ यहां नहीं होता कि—पाटलानि पुष्पाणि ॥

इति चतुर्थाध्यायस्य तृतीयपादपरिशेषः ॥

५५०—तदाहेति माशब्दादिभ्य उपसंख्यानम् ॥ १ ॥

कर्ममात्र माशब्दादि से इति आह इस अर्थमें ठक् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ माशब्द इत्याह माशब्दिकः । नित्यः शब्द इत्याह नैत्यशब्दिकः । कार्यशब्दिकः ॥

५५१-आहौ प्रभूतादिभ्यः ॥ १ ॥

क्रियाविशेषण प्रभूतादि शब्दों से आह इस अर्थ में ठक् प्रत्यय हो ॥ प्रभूतमाह प्राभूतिकः । पार्याप्तिकः ।

५५२-पृच्छतौ सुस्नातादिभ्यः ॥ १ ॥

द्वितीया समर्थ सुस्नातादि शब्दों से पृच्छति अर्थ में ठक् प्रत्यय हो ॥ सुस्नातं पृच्छति सौस्नातिकः । सौखरात्रिकः । सौखशायनिकः ॥

५५३ गच्छतौ परदारादिभ्यः ॥ १ ॥

द्वितीया समर्थ परदार आदि शब्दों से गच्छति अर्थ में ठक् प्रत्यय हो ॥ परदारान्गच्छति पारदारिकः । गौरुतल्पिकः ॥

५५४-भावप्रत्ययान्तादिमब् वक्तव्यः ॥ २० ॥

तृतीया समर्थ भाव प्रत्ययान्त शब्द से निर्वृत्त अर्थ में इमप् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ पाकेन निर्वृत्तं पाकिमम् । त्यागिमम् । सेकिमम् । कुट्टिमम् ॥

५५५-वृद्धेर्वृधुषिभावो वक्तव्यः ॥ ३० ॥

वृद्धि शब्द को वृधुषिभाव कहना चाहिये ॥ वृद्धिं [वृद्ध्यर्थं] प्रयच्छति वार्धुषिकः ॥

५५६-अधर्माच्चेति वक्तव्यम् ॥ ४१ ॥

द्वितीया समर्थ अधर्म शब्द से भीचरति अर्थ में ठक् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ अधर्मं चरति-आधर्मिकः ॥

५५७-नराच्चेति वक्तव्यम् ॥ ४९ ॥

नर शब्द से „तस्य धर्म्यम्" इस विषय में अञ् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ नरस्य धर्म्या नारी ॥

५५८-विशसितुरिड्लोपश्च ॥४९॥

विशसितृशब्द से „ तस्य धर्म्यम् " इस विषय में अञ् प्रत्यय और इट् का लोप हो ॥ विशसितुर्धर्म्यं वैशस्त्रम् ।

५५९--विभाजयितुर्णिलोपश्च ॥९९॥

विभाजयितृ शब्द से " तस्य धर्म्यम् " इस विषय में अञ् प्रत्यय और णि का लोप हो ॥ विभाजयितुर्धर्म्यं वैभाजित्रम् ॥

५६०--लुगकारेकाररेफाश्च वक्तव्याः ॥१२८॥

मत्वर्थ में मास वाची शब्दों से लुक्, अकार, इकार और रेफ प्रत्यय भी हों ॥ लुक्-मधुः । माधव्यः । तपः । तपस्यः । नभः । नभस्यः । अकारः—इषो मासः । ऊर्जो मासः । इकारः—शुचिर्मासः । रेफः—शुक्रः ॥

५६१--अक्षरसमूहे छन्दसः स्वार्थ उपसंख्यानम् ॥१४०॥

अक्षरसमूह वाची छन्दस् शब्द से स्वार्थ में यत् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ ओश्रावयेति चतुरक्षरम् । अस्तुश्रौषडिति चतुरक्षरम् । यजेति द्व्यक्षरम् । येयजामहइति पञ्चाक्षरम् । द्व्यक्षरो वषट्कारः । एषवै सप्तदशाक्षरश्छन्दस्यः प्रजापतिर्यज्ञमनुविहितः । सप्तदशाक्षराण्येवच्छन्दस्यइत्यर्थः ॥

इति पाणिनीयाष्टकचतुर्थपादपरिशेषः ।

समाप्तश्चाध्यायः ॥

५६२--कर्मधारयादेवेष्यते ॥९॥

चतुर्थीसमर्थ कर्मधारय समास वाले विश्वजन शब्द से ही हित अर्थ में ख प्रत्यय हो ॥ विश्वजनाय हितं विश्वजनीनम् । षष्ठीतत्पुरुष और बहुव्रीहि से छ प्रत्यय ही होता है ॥ विश्वजनीयम् ॥

५६३--पञ्चजनादुपसंख्यानम ॥९॥

चतुर्थी समर्थ कर्मधारय संज्ञक पञ्चजन शब्द से हित अर्थ में ख प्रत्यय हो ॥ पञ्चजनाय हितः पञ्चजनीनः । अन्यत्र पञ्चजनीयो भवति ॥

५६४--सर्वजनाट्ठञ् खश्च ॥९॥

चतुर्थी समर्थ कर्मधारय संज्ञक सर्वजन शब्द से हित अर्थ में ठञ् और ख प्रत्यय हो ॥ सर्वजनेभ्यो हितः सार्वजनिकः । सर्वजनीनः ॥ अन्यत्र सर्वजनीयो भवति ॥

५६५--महाजनान्नित्यं ठञ् वक्तव्यः ॥९॥

चतुर्थी समर्थ तत्पुरुष संज्ञक महाजन शब्द से हित अर्थ में ठञ् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ महाजनाय हितो माहाजनिकः।बहुव्रीहौ महाजनीयो भवति

५६६—आचार्यादणत्वं च ॥९॥

भोगोत्तरपद आचार्य्य शब्द से परे णत्व न हो ॥ आचार्य्यभोगीनः ॥

५६७-सर्वाण्णस्य वा वचनम् ॥१०॥

चतुर्थी समर्थ सर्व शब्दसे ण प्रत्यय विकल्प से हो हित अर्थ में। सर्वस्मै हितं सार्वम् । सर्वीयम् ॥

५६८- पुरुषाद्वधविकारसमूहतेनकृतेष्वितिवक्तव्यम् ॥ १० ॥

वध, विकार और समूह अभिधेय होतो षष्ठी समर्थ पुरुष शब्द से ढञ् प्रत्यय हो । और तृतीया समर्थ पुरुष शब्द से कृत अर्थ में ढञ् प्रत्यय हो ॥ पुरुषस्य वधादिः पौरुषेयो वधो विकारः समूहो वा।तेन कृते–पुरुषेण कृतःपौरुषेयो ग्रन्थः ॥ न पौरुषेयोऽपौरुषेयो वेदः ॥

५६९--टिठन्नर्धाच्च ॥ २५ ॥

अर्ध शब्द से आर्हीय अर्थों में टिठन् प्रत्यय हो ॥ अर्धिकः । अर्धिकी ॥

५७०- कार्षापणाट्टु वा प्रतिश्च ॥ २५ ॥

कार्षापण शब्द से आर्हीय अर्थों में टिठन् प्रत्यय हो और कार्षापण शब्द को विकल्प से प्रति आदेश हो ॥ कार्षापणेन क्रीतः । कार्षापणिकः । कार्षापणिकी । प्रतिकः । प्रतिकी ॥

५७१--बहुपूर्वाच्चेति वक्तव्यम् ॥ ३० ॥

बहुपूर्व निष्कान्त द्विगु से परे आर्हीय प्रत्यय का विकल्प से लुक् हो यह कहना चाहिये ॥ बहुनिष्केन क्रीतं बहुनिष्कम् । बहुनैष्किकम् ॥

५७२ केवलायाश्चेति वक्तव्यम् ॥ ३३ ॥

केवल खारी शब्द से भी आर्हीय अर्थों में ईकन् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये । खारीकम् ॥

५७३--काकिण्याश्चोपसंख्यानम् ॥ ३३ ॥

अध्यर्ध पूर्व और द्विगु काकिण्यन्त से आर्हीय अर्थों में ईकन् प्रत्यय हो ॥ अध्यर्धकाकिणीकम् ॥ द्विकाकिणीकम् ॥

५७४ -केवलायाश्च ॥ ३३ ॥

केवल काकिणी शब्द से भी आर्हीय अर्थों में ईकन् प्रत्यय हो ॥ काकिणीकम् ॥

५७५–शताच्चेति वक्तव्यम् ॥ ३५ ॥

अध्यर्ध पूर्व और द्विगु शत शब्द से भी आर्हीय अर्थों में विकल्प से यत् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ अध्यर्धशत्यम् । अध्यर्धशतम् । द्विशत्यम् । द्विशतम् ॥

५७६–वातपित्तश्लेष्मभ्यः शमनकोपनयोरुपसंख्यानम् ॥ ३८ ॥

षष्ठीसमर्थ वात, पित्त और श्लेष्मन् शब्द से शमन और कोपन अर्थ में ठक् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ वातस्य शमनं कोपनं वा वातिकम् । पैत्तिकम् । श्लैष्मिकम् ॥

५७७–सन्निपाताच्चेति वक्तव्यम् ॥ ३८ ॥

षष्ठी समर्थ सन्निपात शब्द से भी शमन और कोपन अर्थ में ठक् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये । संनिपातस्य शमनं कोपनं वा सान्निपातिकम् ॥

५७८–ब्रह्मवर्चसादुपसंख्यानम् ॥ ३९ ॥

(तस्य निमित्तं संयोगोत्पातौ) इस विषय में ब्रह्मवर्चस शब्द से यत् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ ब्रह्मवर्चसस्य निमित्तं गुरुणासंयोगो ब्रह्मवर्चस्यम् ॥

५७९–चतुर्थ्यर्थ उपसंख्यानम् ॥ ४७ ॥

प्रथमा समर्थ से चतुर्थ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय हो । जो वह प्रथमासमर्थ वृद्ध्यादि दिया जाता हो तो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ पञ्चास्मै वृद्धिर्वा आयो वा लाभो वा शुल्को वा उपदा वा दीयते पञ्चको देवदत्तः ॥

५८०–तत्पचतीति द्रोणादण् च ॥ ५२ ॥

द्वितीयासमर्थ द्रोण शब्द से पचति अर्थ में अण् प्रत्यय और यथाविहित प्रत्यय हो ॥ द्रोणं पचति द्रौणी । द्रौणिकी ॥

५८१–संज्ञायां स्वार्थे ॥ ५८ ॥

संख्यावाची शब्द से स्वार्थ में संज्ञा विषय हो तो कन् प्रत्यय हो ॥ पञ्चैव पञ्चकाः शकुनयः । त्रिकाः शालङ्कायनाः । सप्तका ब्रह्मवृत्ताः ॥

५८२–स्तोमे डविधिः ॥ ५८ ॥

स्तोम अभिधेय हो तो संख्यावाची शब्द से "तदस्य परिमाणम्" इस विषय में ड प्रत्यय का विधान करना चाहिये ॥ पञ्चदश मन्त्राः परिमाणमस्य पञ्चदशः स्तोमः । सप्तदशः स्तोमः । एकविंशः ॥

५८३-शन्शतोर्डिनिश्छन्दसि ॥ ५८ ॥

शन् और शत् अन्त वाले संख्यावाची शब्दों से "तदस्य परिमाणम्" इस विषय में डिनि प्रत्यय हो छन्द में ॥ पञ्च दशपरिमाणमेषां पञ्चदशिनो-ऽर्ध मासाः । त्रिंशिनो मासाः ॥

५८४-विंशतेश्चेति वक्तव्यम् ॥ ५८ ॥

विंशति शब्द से भी "तदस्य परिमाणम्" इस विषय में छन्द में डिनि प्रत्यय हो ॥ विंशतिः परिमाणमेषां विंशिनोऽङ्गिरसः ॥

५८५-यज्ञर्त्विग्भ्यां तत्कर्मार्हतीत्युपसंख्यानम् ॥ ७१ ॥

द्वितीया समर्थ यज्ञ कर्म और ऋत्विक् कर्म शब्द से अर्हति इस अर्थ में यथासंख्य घ और खञ् प्रत्यय हो । और कर्म शब्द लुप्त हो जावे ॥ यज्ञ कर्मार्हति यज्ञियो देशः । ऋत्विक् कर्मार्हति-आर्त्विजीनं ब्राह्मणकुलम् ॥

५८६-क्रोशशतयोजनशतयोरुपसंख्यानम् ॥ ७४ ॥

द्वितीया समर्थ क्रोशशत योजनशत शब्द से गच्छति अर्थ में ठञ् प्रत्यय हो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ क्रोशशतं गच्छत्येकेनाह्ना क्रौशशतिकः । यौजनशतिकः ॥

५८७-ततोऽभिगमनमर्हतीति च वक्तव्यम् ॥ ७४ ॥

पञ्चमी समर्थ क्रोशशत और योजनशत शब्द से "अभिगमनमर्हति" इस विषय में ठञ् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ क्रोशशतादभिगमनमर्हति क्रौशशतिको भिक्षुः । यौजनशतिको गुरुः ॥

५८८-आहृतप्रकरणे वारिजङ्गलस्थलकान्तारपूर्वपदा दुपसंख्यानम् ॥ ७७ ॥

वारि, जङ्गल, स्थल, कान्तार ये हैं पूर्वपद जिस के ऐसे तृतीया समर्थ पथ शब्द से आहृत और गच्छति अर्थ में ठञ् प्रत्यय हो ॥ वारिपथेनाऽऽहृतं वारिपथिकम् । वारिपथेन गच्छति वारिपथिकः । नौयानेन समुद्रादिपारं-गच्छतीत्यर्थः । जाङ्गलपथिकम् । जाङ्गलपथिकः । स्थालपथिकम् । स्थालप-

थिकः । कान्तारपथिकम् । कान्तारपथिकः ॥

५८९-अजपथशङ्कुपथाभ्यां चोपसंख्यानम् ॥ ७७ ॥

तृतीया समर्थ अजपथ और शङ्कुपथ शब्द से आहृत और गच्छति अर्थ में ठञ् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये । अजपथेनाऽऽहृतम्-आजपथिकम् । अजपथेन गच्छति-आजपथिकः । शाङ्कुपथिकम् । शाङ्कुपथिकः ॥

५९०-मधुकमरिचयोरण्स्थलात् ॥

मधुक और मरिच अभिधेय हो तो तृतीयासमर्थ स्थलपूर्वपद पथ शब्द से आहृत और गच्छति अर्थ में अण् प्रत्यय हो ॥ स्थलपथेनाऽऽहृतं स्थालपथं मधुकम् । स्थालपथं मरिचम् ॥

५९१-महानाम्न्यादिभ्यः षष्ठीसमर्थेभ्य उपसंख्यानम् ॥९४॥

षष्ठीसमर्थ महानाम्नी आदि शब्दों से "ब्रह्मचर्यमस्य" इस विषय में ठञ् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ महानाम्नीनां ब्रह्मचर्यमस्य माहानाम्निकम् ॥

५९२-तच्चरतीति च ॥ ९४ ॥

द्वितीयासमर्थ महानाम्नी आदि शब्दों से चरति अर्थ में ठञ् प्रत्यय हो महानाम्नीश्चरति माहानाम्निकः । आदित्यव्रतिकः । गौदानिकः ॥

५९३-अवान्तरदीक्षादिभ्यो डिनिर्वक्तव्यः ॥ ९४ ॥

द्वितीयासमर्थ अवान्तर दीक्षादि शब्दों से चरति अर्थ में डिनि प्रत्यय कहना चाहिये ॥ अवान्तरदीक्षां चरति अवान्तरदीक्षी । तिलव्रती ॥

५९४-अष्टाचत्वारिंशतो ड्वुश्च डिनिश्च वक्तव्यः ॥९४॥

द्वितीयासमर्थ अष्टाचत्वारिंशत् शब्द से "व्रतं चरति" इस विषय में ड्वुन् और डिनि प्रत्यय कहना चाहिये ॥ अष्टाचत्वारिंशद्वर्षाणि व्रतं चरति अष्टाचत्वारिंशकः, अष्टाचत्वारिंशी ॥

५९५-चातुर्मास्यानां यलोपश्च ड्वुश्च डिनिश्च वक्तव्यः ॥९४॥

द्वितीयासमर्थ चातुर्मास्य शब्द से चरति अर्थ में ड्वुन् और डिनि प्रत्यय तथा चातुर्मास्य शब्द के यकार का लोप हो ॥ चातुर्मास्यानि चरति चातुर्मासकः । चातुर्मासी ॥

५९६--चतुर्मासाण्ण्यो यज्ञे तत्रभवे ॥ ९४ ॥

यज्ञ अभिधेय हो तो सप्तमीसमर्थ चतुर्मास शब्द से भव अर्थ में ण्य प्रत्यय हो ॥ चतुर्षु चतुर्षु मासेषु भवानि चातुर्मास्यानि यज्ञः ॥

५९७-संज्ञायामण् वक्तव्यः ॥ ९४ ॥

संज्ञाविषय में सप्तमी समर्थ चतुर्मास शब्द से भवार्थ में अण् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ चतुर्षु मासेषु भवा-चातुर्मासी आषाढ़ी पौर्णमासी। कार्त्तिकीच ॥

५९८-अण् प्रकरणेऽग्निपदादिभ्य उपसंख्यानम् ॥९७॥

सप्तमीसमर्थ अग्निपदादि शब्दों से „दीयते कार्यम्" इन अर्थों में अण् प्रत्यय हो ॥ अग्निपदे दीयते कार्यं वा—आग्निपदम् । पैलुमूलम् ॥

५९९=अर्थाभ्यां तु यथासंख्यं नेष्यते ॥९८॥

अर्थों के साथ तो यथासंख्य इष्ट नहीं है ॥ यथाकथाच दीयते कार्यं वा याथाकथाचम् । अनादरेण देयं कार्यं वेत्यर्थः । हस्तेन दीयते कार्यं वा हस्त्यम् ॥

६००-उपवस्त्रादिभ्य उपसंख्यानम् ॥१०५॥

प्रथमासमर्थ उपवस्तृ आदि शब्द से „अस्य प्राप्तम्" इस विषय में अण् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ उपवस्त्रा प्राप्तोऽस्य-औपवस्त्रम् । प्राशित्रम् ॥

६०१-चडादिभ्य उपसंख्यानम् ॥११०॥

प्रथमासमर्थ चूडादि शब्दों से „ अस्य प्रयोजनम्" इस विषय में अण् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ चूडा प्रयोजनमस्य चौडम् । श्रद्धाप्रयोजनमस्य श्राद्धम् ॥

६०२ विशिपूरिपतिरुहिप्रकृतेरनात्सपूर्वपदादुपसंख्यानम्॥१११॥

विद्यमान पूर्वपद अनान्त विशि, पूरि, पति और रुहि प्रकृतिक शब्द से „तदस्य प्रयोजनम्" इस विषय में छ प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ गृहानुप्रवेशनं प्रयोजनमस्य गृहानुप्रवेशनीयम् । प्रपापूरणीयम् । अश्वप्रपतनीयम् । प्रासादारोहणीयम् ॥

६०३-स्वर्गादिभ्यो यद्वक्तव्यः ॥१११॥

प्रथमासमर्थ स्वर्गादि शब्दों से " अस्य प्रयोजनम् " इस विषय में यत प्रत्यय कहना चाहिये ॥ स्वर्गः प्रयोजनमस्य स्वर्ग्यम् । यशस्यम् । आयुष्यम् । काम्यम् । धन्यम् ॥

६०४–पुण्याहवाचनादिभ्यो लुक् ॥१११॥

प्रथमासमर्थ पुण्याहवाचनादि शब्दों से परे " अस्य प्रयोजनम् " इस विषय में उत्पन्न ठ प्रत्यय का लुक् हो ॥ पुण्याहवाचनं प्रयोजन मस्य तत्कर्म पुण्याहवाचनम् । शान्तिवाचनम् । स्वस्तिवाचनम् ॥

६०५–आकालाट् ठंश्च ॥११४॥

प्रथमासमर्थ आकाल शब्द से "अस्य प्रयोजनम्" इस विषय में ठन् और चकार से ठञ् प्रत्यय हो ॥ आकालिका विद्युत् आकालिकी ॥

६०६–चतुर्वर्णादिभ्यः स्वार्थउपसंख्यानम् ॥१२४॥

चतुवर्णादि शब्दों से स्वार्थ में ष्यञ् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ चत्वारएव वर्णाश्चातुर्वर्ण्यम् । चातुराश्रम्यम् । त्रैलोक्यम् । सैन्यम् । त्रैस्वर्यम् । षाड्गुण्यम् । सान्निध्यम् । सामीप्यम् ॥

६०७–अर्हतो नुम् च ॥१२४॥

षष्ठीसमर्थ अर्हत् शब्द से कर्म और भाव अभिधेय हो तो ष्यञ् प्रत्यय और अर्हत् शब्द को नुम् आगम हो ॥ अर्हतो भावः कर्म वा–आर्हन्त्यम् । आर्हन्ती ॥

६०८–सर्ववेदादिभ्यः स्वार्थे ॥ १२४ ॥

सर्ववेद आदि शब्दों से स्वार्थ में ष्यञ् प्रत्यय हो ॥ सर्वे वेदाः सर्ववेदास्तानधीते सर्ववेदः । सर्वसादेर्द्विगोश्चल इति लुक् । सएव सार्ववेद्यः ॥

६०९–चतुर्वेदस्योभयपदवृद्धिश्च ॥१२४॥

चतुर्वेद शब्द से स्वार्थ में ष्यञ् प्रत्यय और पूर्वोत्तर दोनों पदों को वृद्धि हो । चतुरो वेदानधीते चतुर्वेदः सएव चातुर्वैद्यः ॥

६१०–दूतवणिग्भ्यां चेति वक्तव्यम् ॥ १२६॥

षष्ठीसमर्थ दूत और वणिज् शब्द से भी भाव और कर्म अर्थ में य प्रत्यय कहना चाहिये ॥ दूत्यम् । वणिज्यम् ॥ ब्राह्मणादि होने से वाणिज्यम् ॥

६११–श्रोत्रियस्य यलोपश्च वाच्यः ॥ १३० ॥

षष्ठीसमर्थ श्रोत्रिय शब्द से भाव और कर्म अर्थ में अण् प्रत्यय और यकार का लोप हो ॥ श्रोत्रियस्य भावः कर्म वा श्रौत्रम् ॥

६१२–सहायाद्वेति वक्तव्यम् ॥१३२॥

षष्ठीसमर्थ सहाय शब्द से भाव और कर्म अर्थ में विकल्प से वुञ् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ साहायकम् । साहाय्यम् । सहायत्वम् । सहायता ॥

इति पञ्चमाध्यायस्य प्रथम–पाद परिशेषः ॥

६१३-विपरीताच्च ॥ ११ ॥

द्वितीया समर्थ विपरीत भी अवारपार शब्द से गामी अर्थ में ख प्रत्यय हो ॥ पारावारं गामी पारावारीणः । अवारपारीणः ॥

६१४=विगृहीतादपीष्यते ॥ ११ ॥

द्वितीयासमर्थ विगृहीत भी अवार और पार शब्द से गामी अर्थ में ख प्रत्यय हो ॥ अवारं गामी अवारीणः । पारीणः ॥

६१५–पूर्वपदे सुपोऽलुग्वक्तव्यः ॥ १२ ॥

समां समाम् इस पद समुदाय में पूर्वपद में सुप् के लुक् का अभाव कहना चाहिये ॥ समांसमां विजायते समांसमीना गौः । समांसमीना वडवा ॥

६१६–अनुत्पत्तौ पूर्वोत्तरपदयोर्यलोपो वा वक्तव्यः ॥१२॥

ख प्रत्यय की अनुत्पत्ति में पूर्व और उत्तरपद के यकार का लोप विकल्प से कहना चाहिये ॥ समांसमां विजायते । समायां समायां वा ॥

६१७–अलाबूतिलोमाभङ्गाभ्योरजस्युपसंख्यानम् ॥ २९ ॥

षष्ठीसमर्थ अलाबू ,तिल,उमा और भङ्गा शब्द से रजस् अभिधेय हो तो कटच् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ अलाबूनां रजः–अलाबूकटम् । तिलकटम् । उमाकटम् । भङ्गाकटम् ॥

६१८–गोष्ठजादयः स्थानादिषु पशुनामभ्यः ॥ २९ ॥

षष्ठीसमर्थ पशुनाम वाची शब्दों से स्थानादि अर्थों में गोष्ठच् आदि प्रत्यय हों ॥ गवां स्थानं गोगोष्ठम् । महिषीगोष्ठम् । अश्वगोष्ठम् । अजागोष्ठम् । अविगोष्ठम् ॥

६१९—संघाते कटच् वक्तव्यः ॥ २९ ॥

षष्ठीसमर्थ पशुनामवाची शब्दों से संघात (समूह) अर्थ में कटच् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ अवीनां संघातः—अविकटम् । अजाकटम् ॥

६२०—विस्तारे पटच् वक्तव्यः ॥२९ ॥

षष्ठीसमर्थ पशुनाम वाची शब्दों से विस्तार अर्थ में पटच् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ अवीनां विस्तारोऽविपटम् ॥

६२१—द्वित्वे गोयुगच् ॥ २९ ॥

पशुनामवाची शब्दों से द्वित्वार्थ में गोयुगच् प्रत्यय हो । द्वावुष्ट्रौ—उष्ट्रगोयुगम् ॥

६२२—षट्त्वे षड्गवच् ॥ २९ ॥

पशुनामवाची शब्दों से षट्त्व अर्थ में षड्गवच् प्रत्यय हो । षडश्वा अश्वषड्गवम् ॥ वृषषड्गवम् । यत्रैकस्मिन्याने सहैव षडश्वा वृषा वा युज्यन्ते तत्रायं प्रयोगः ॥

६२३—विकारे स्नेहने तैलच् ॥ २९ ॥

षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से विकार और स्नेहन अर्थ में तैलच् प्रत्यय हो॥ एरण्डस्य विकारः स्नेहनं वा एरण्डतैलम् । इङ्गुदीतैलम् । तिलतैलम् ॥

६२४—भवने क्षेत्र इक्ष्वादिभ्यः शाकटशाकिनौ ॥ २९॥

षष्ठीसमर्थ इक्षुआदि शब्दों से भवन क्षेत्र अर्थ में शाकट और शाकिन प्रत्यय हों ॥ इक्षूणां भवनं क्षेत्रं इक्षुशाकटम् । मूलशाकटम् । इक्षुशाकिनम् । मूलशाकिनम् ॥

६२५—कप्रत्ययचिकादेशौ च वक्तव्यौ ॥ ३३ ॥

नासिका का नत अभिधेय हो तो नि शब्द से क प्रत्यय और नि शब्द को चिक् आदेश कहना चाहिये॥ नासिकाया नतं चिक्कं तद्योगात्पुरुषोऽपि चिक्कः॥

६२६—क्लिन्नस्य चिल्पिल् लश्चास्यचक्षुषी ॥ ३३ ॥

क्लिन्न शब्द से ल प्रत्यय और क्लिन्न शब्द को चिल् तथा पिल् आदेश हो "अस्य चक्षुषी" इस विषय में ॥ क्लिन्ने अस्य चक्षुषी चिल्लः । पिल्लः ॥

६२७—चुल् च ।। ३३ ॥

क्लिन्न शब्द से ल प्रत्यय और क्लिन्न शब्द को चुल् आदेश हो "अस्य चक्षुषी" इस विषय में ॥ चुल्लः ॥

६२८--चक्षुषोरेवाभिधाने प्रत्यय इष्यते ॥ ३३ ॥

दोनों चक्षुओं के अभिधान में ही क्लिन्न शब्द से ल प्रत्यय और क्लिन्न शब्द को चिल् पिल् और चुल् आदेश इष्ट हैं ॥ क्लिन्ने चक्षुषी चिल्ले । पिल्ले । चुल्ले ॥

६२९--प्रमाणे लो वक्तव्यः ॥ ३७ ॥

प्रसिद्ध प्रमाण शब्दों से उत्पन्न प्रत्यय का लुक् कहना चाहिये ॥ शमः प्रमाणमस्य शमः । वितस्तिः । दिष्टिः ॥

६३०--द्विगोर्नित्यम् ।। ३७ ॥

द्विगु संज्ञक शब्द से "अस्य प्रमाणम्" इस विषय में उत्पन्न प्रत्यय का नित्य लुक् हो ॥ द्वौ शमौ प्रमाणमस्य द्विशमः । त्रिशमः । द्विवितस्तिः ॥

६३१--प्रमाणपरिमाणाभ्यां संख्यायाश्चापि संशये मात्रज् वक्तव्यः ॥ ३७ ॥

प्रमाणवाची, परिमाणवाची और संख्यावाची शब्द से भी संशय अर्थ में मात्रच् प्रत्यय कहना चाहिये । शमः स्यान्नवा शममात्रम् । दिष्टिमात्रम् । प्रस्थमात्रम् । कुडवमात्रम् । पञ्चमात्रम् । दशमात्रा गावः ॥

६३२--वत्वन्तात्स्वार्थे द्वयसज्मात्रचौ बहुलम् ॥३७॥

वत्वन्त शब्द से स्वार्थ में द्वयसच् और मात्रच् प्रत्यय बाहुल्य से हों ॥ तावदेव तावद्द्वयसम् । तावदेव तावन्मात्रम् । एतावद्द्वयसम् । एतावन्मात्रम् ॥

६३३ शतसहस्रयोरेवेष्यते ॥४५॥

यदि शत और सहस्र अभिधेय हों तो दशान्त प्रातिपदिक से "तदस्मिन्नधिकमिति" इस विषय में ड प्रत्यय इष्ट है ॥ एकादश अधिका अस्मिन् शते—एकादशं शतम् । एकादश अधिका अस्मिन् सहस्रे—एकादशं सहस्रम् ॥ यहां नहीं होता कि—एकादश अधिका अस्यां त्रिंशतीति ॥

६३४-प्रकृतिप्रत्ययार्थयोः समानजातीयग्रहणमेवेष्यते ॥४५॥

प्रकृति और प्रत्ययार्थ के समानजातीयत्व में ही दशान्त प्रातिपदिक से "तदस्मिन्नधिकमिति" इस विषय में ड प्रत्यय इष्ट है ॥ इस से यहां ड प्रत्यय नहीं होता कि–एकादश माषा अधिका अस्मिन् सुवर्णशते ॥

६३५-संख्याग्रहणञ्च ॥४६॥

"तदस्मिन्नधिकमिति" इस विषय में संख्यावाची विंशति शब्द से ही ड प्रत्यय हो ॥ इस से यहां नहीं होता कि–गोविंशतिरधिकाऽस्मिञ्छते ॥

६३६=तदन्तादपीति वक्तव्यम् ॥ ४६ ॥

विंशति शब्दान्त संख्यावाची शब्द से भी " तदस्मिन्नधिकमिति " इस विषय में ड प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ एकविंशतिरधिकाअस्मिन्शते एकविंशं शतम् । द्वाविंशं सहस्रम् ॥

६३७-चतुरश्छयतावाद्यक्षरलोपश्च ॥५१ ॥

षष्ठीसमर्थ चतुर् शब्द से छ और यत् प्रत्यय हो पूरण अर्थ में और आद्यक्षर (च) का लोप हो ॥ चतुर्णां पूरणस्तुरीयः । तुर्यः ॥

६३८-तावतिथेन गृह्णातीति कन्वक्तव्यः पूरणप्रत्ययस्य च नित्यं लुक् ॥ ७७ ॥

पूरण प्रत्ययान्त तावतिथ शब्द से "गृह्णाति" इस अर्थ में कन् प्रत्यय कहना चाहिये और पूरण प्रत्यय का नित्य लुक् हो ॥ षष्ठेन रूपेण ग्रन्थं गृह्णाति षट्को देवदत्तः । पञ्चकः । चतुष्कः ।

६३९-वटकेभ्यइनिर्वक्तव्यः ॥ ८२ ॥

वटक शब्द से " तदस्मिन्नन्नं प्राये संज्ञायाम् " इस विषय में इनि प्रत्यय कहना चाहिये ॥ वटकाः प्रायेऽन्नमस्यां पौर्णमास्यां वटकिनी पौर्णमासी ॥

६४०-गुणवचनेभ्यो मतुपो लुक् ॥ ९४ ॥

प्रथमासमर्थ गुणवचन शब्दों से " अस्याऽस्ति " और " अस्मिन्नस्ति " इस अर्थ में उत्पन्न मतुप् प्रत्यय का लुक् हो ॥ शुक्लो गुणोऽस्याऽस्ति शुक्लः पटः । कृष्णः । नीलः । श्वेतः । पीतः ॥

६४१=प्राण्यङ्गादिति वक्तव्यम् ॥ ९६ ॥

प्राण्यङ्ग प्राणिस्थवाची आकारान्त शब्द से मत्वर्थ में लच् प्रत्यय विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ चूडाऽस्यास्तिचूडालः । चूडावान् ॥ प्राण्यङ्ग के न होने से यहां नहीं होता कि—मेधावान् । चिकीर्षावान् ॥

६४२—वातदन्तबलललाटगलानामूङ् च ॥ ९७ ॥

वात, दन्त बल, ललाट, और गल शब्द से लच् प्रत्यय और उक्त शब्दों को ऊङ् आदेश हो मत्वर्थ में ॥ भूयान् वातो वातूलः । महान् दन्तो दन्तूलः । बलूलः । ललाटूलः । गलूलः ॥

६४३—क्षुद्रजन्तूपतापाच्चेष्यते ॥ ९७ ॥

मत्वर्थ में क्षुद्रजन्तुवाची और उपतापवाची शब्दों से लच् प्रत्यय इष्ट है । क्षुद्रजन्तुवाचिनः-यूका अस्य सन्ति यूकालः । मक्षिकालः । उपतापाच्च—मूर्च्छालः । विपादिकालः ॥

६४४—अङ्गात्कल्याणे ॥ १०० ॥

मत्वर्थ में अङ्ग शब्द से न प्रत्यय हो कल्याण द्योत्य हो तो ॥ कल्याणान्यङ्गानि अस्या सा अङ्गना ॥

६४५—विष्वगित्युत्तरपदलोपश्चाकृतसन्धेः ॥ १०० ॥

मत्वर्थ में विष्वक् शब्द से न प्रत्यय और अकृत सन्धि उत्तर पद का लोप हो ॥ विषुणः ॥

६४६—दद्र्वा ह्रस्वत्वं च ॥ १०० ॥

मत्वर्थ में दद्रू शब्द से न प्रत्यय और ह्रस्वत्व हो ॥ दद्रू विद्यतेऽस्य दद्रुणः ॥

६४७—लक्ष्म्या अच्च ॥ १०० ॥

मत्वर्थ में लक्ष्मी शब्दसे न प्रत्यय और लक्ष्मी शब्द को अकारान्तादेश हो लक्ष्मीरस्यास्तीति लक्ष्मणः । लक्ष्मीवान् ॥

६४८-वृत्तेश्च ॥ १०१ ॥

मत्वर्थ में वृत्ति शब्द से ण प्रत्यय हो ॥ वार्त्तः । वार्त्ता ॥

६४९ ज्योत्स्नादिभ्य उपसंख्यानम् ॥ १०३ ॥

मत्वर्थ में ज्योत्स्नादि शब्दों से अण् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ ज्योत्स्नाविद्यतेऽस्मिन्पक्षे ज्यौत्स्नः पक्षः शुक्लइत्यर्थः । तामिस्रः । कौण्डिनः । कौतपः ॥

६५०—खमुखकुञ्जेभ्य उपसंख्यानम् ॥ १०७ ॥

मत्वर्थ में ख मुख और कुञ्ज शब्द से र प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ खं कण्ठविवरं महदस्यास्ति स खरः । अग्रे मुखमस्यास्ति स मुखरः । कुञ्जरः ॥

६५१—नगपांसुपाण्डुभ्यश्चेति वक्तव्यम् ॥ १०७ ॥

मत्वर्थ में नग, पांसु और पाण्डु शब्द से भी र प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ नगमुच्चप्रासादादिकमस्मिन्नस्ति तत्—नगरम् । पांसुरः । पाण्डुरः ॥

६५२—कच्छ्वा ह्रस्वत्वं च ॥१०७॥

मत्वर्थ में कच्छू शब्द से र प्रत्यय और कच्छू शब्द को ह्रस्व हो ॥ कच्छुरम् ॥

६५३—वप्रकरणेऽन्येभ्योऽपि दृश्यतइति वक्तव्यम् ॥ १०९॥

व प्रत्यय के प्रकरण में अन्य शब्दों से भी मत्वर्थ में व प्रत्यय देख पड़ता है यह कहना चाहिये ॥ मणिरस्यास्ति मणिवो नागविशेषः । हिरण्यवो निधिविशेषः ॥

६५४—अर्णसो लोपश्च ॥ १०९ ॥

अर्णस् शब्द से मत्वर्थ में व प्रत्यय और अन्त्य सकार का लोप हो ॥ अर्णांस्युदकान्यस्मिन्सन्तीति—अर्णवः समुद्रः ॥

६५५—छन्दसीवनिपौ वक्तव्यौ ॥१०९॥

छन्दोविषय में शब्द से ई, वनिप्, व और मतुप् प्रत्यय हों ॥ सुमङ्गलमस्याअस्ति सुमङ्गलीरिय वधूः । मघवानमीमहे । उद्वाच । उद्वतीच ॥

६५६—मेधारथाभ्यामिरन्निरचौ वक्तव्यौ ॥१०९॥

छन्दोविषय में मेधा और रथ शब्द से मत्वर्थ में इरन् और इरच् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ मेधाऽस्यास्ति मेधिरः । रथिरः ॥

६५७—अन्येभ्योऽपि दृश्यते ॥११२॥

मत्वर्थ में अन्य शब्दों से भी वलच् प्रत्यय देख पड़ता है ॥ भ्राताऽस्यास्तीति भ्रातृवलः । पुत्रवलः । उत्साहवलः ॥ संज्ञायांतु—पुत्रावलः । उत्सङ्गावलः (२०७३) ॥

६५८—शिखामालासंज्ञादिभ्य इनिः ॥११६॥

व्रीह्यादि शब्दों में से शिखा, माला और संज्ञादि शब्दों से मत्वर्थ में इनि प्रत्यय हो ॥ महती शिखास्यास्ति स शिखी । माली । संज्ञी ।

६५९–यवखदादिभ्य इकः ॥११६॥

व्रीह्यादि शब्दों में से यवखदादि शब्दों से मत्वर्थ में इक प्रत्यय हो ॥ यवखदिकः । कुमारिकः । नाविकः ॥

६६०–अन्येभ्य उभयम् ॥११६॥

व्रीह्यादिगण पठित अन्य शब्दों से मत्वर्थ में इनि और ठन् दोनों प्रत्यय हों ॥ और पक्ष में मतुप् भी हो ॥ व्रीही । व्रीहिकः । व्रीहिमान् । मायी । मायिकः । मायावान् ॥

६६१–यप्प्रकरणेऽन्येभ्योऽपि दृश्यतइति वक्तव्यम् ॥१२०॥

यप् प्रत्यय के प्रकरण में अन्य शब्दों से भी यप् प्रत्यय देख पड़ता है यह कहना चाहिये ॥ बहु हिमं येष्वस्ति ते हिम्याः पर्वताः । गुण्या ब्राह्मणाः ॥

६६२–छन्दसि विनिप्रकरणेऽष्ट्रामेखलाद्वयोभयरुजाहृदयानां दीर्घश्च ॥१२२॥

छन्दोविषय में विनि प्रत्यय के प्रकरण में अष्ट्रा, मेखला, द्वय, उभय, रुजा और हृदय शब्द से मत्वर्थ में विनि प्रत्यय और इन शब्दों में से ह्रस्वान्त शब्दों को दीर्घ हो ॥ अष्ट्रावी । प्रशस्ता मेखलाऽस्यास्ति स मेखलावी । द्वयावी । उभयावी । रुजावी । हृदयावी ॥

६६३–मर्मणश्चेति वक्तव्यम् ॥१२२॥

छन्दोविषय में मर्मन् शब्द से मत्वर्थ में विनि प्रत्यय और दीर्घ हो यह कहना चाहिये ॥ प्रशस्तानि मर्माण्यस्य सन्ति मर्मावी ॥

६६४–सर्वत्राऽऽमयस्योपसंख्यानम् ॥१२२॥

लोक और वेद में आमय शब्द से मत्वर्थ में विनि प्रत्यय और दीर्घ हो ॥ आमयो रोगोऽस्यास्तीति स आमयावी ॥

६६५–शृङ्गवृन्दाभ्यामारकन्वक्तव्यः ॥१२२॥

मत्वर्थ में शृङ्ग और वृन्द शब्द से आरकन् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ शृङ्गमुच्चं प्रशस्तं वाऽस्यास्ति शृङ्गारकः । वृन्दारकः ॥

६६६-फलबर्हाभ्यामिनज्वक्तव्यः ॥ १२२ ॥

मत्वर्थ में फल और बर्ह शब्द से इनच् प्रत्यय हो ॥ बहूनि प्रशस्तानि वा फलान्यस्य सन्ति स फलिनः । प्रशस्ता बर्हाः पक्षा अस्य सन्ति स बर्हिणो मयूरः ॥

६६७-हृदयाच्चालुरन्यतरस्याम् ॥ १२२ ॥

मत्वर्थ में हृदय शब्द से आलु प्रत्यय विकल्प से हो । पक्ष में इनि, ठन् और मतुप् हो ॥ प्रशस्तं हृदयमस्यास्ति स हृदयालुः । हृदयी । हृदयिकः । हृदयवान् ॥

६६८-शीतोष्णतृप्रेभ्यस्तन्नसहतइति चालुर्वक्तव्यः ॥१२२॥

द्वितीयासमर्थ शीत, उष्ण और तृप्र शब्द से " नसहते " इस अर्थ में आलु प्रत्यय कहना चाहिये ॥ शीतं न सहते शीतालुः । उष्णालुः । तृप्रः पुरोडाशः । तृप्रं दुःखमिति केचित् । तन्न सहते । तृप्रालुः ॥

६६९-हिमाच्चेलुर्वक्तव्यः ॥ १२२ ॥

द्वितीया समर्थ हिम शब्द से " नसहते " इस अर्थ में इलु प्रत्यय कहना चाहिये ॥ हिमं न सहते हिमेलुः ॥

६७०-बलाच्चोलः ॥ १२२ ॥

द्वितीया समर्थ बल शब्द से " न सहते " इस अर्थ में ऊल प्रत्यय हो । बलूलः ॥

६७१-वातात्समूहेच ॥ १२२ ॥

वात शब्द से " तन्नसहते " और समूह अर्थ में ऊल प्रत्यय हो ॥ वातं न सहते वातूलः । वातानां समूहो वा वातूलः ॥

६७२-तप्पर्वमरुद्भ्यां वक्तव्यः ॥ १२२ ॥

मत्वर्थ में पर्वन् और मरुत् शब्द से तप् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ महान्ति पर्वाण्यस्य सन्ति सपर्वतः । मरुत्तः ॥

६७३-कुत्सितइति वक्तव्यम् ॥ १२५ ॥

वाच् शब्द से मत्वर्थ में आलच और आटच प्रत्यय हों कुत्सित बहुभाषी

अभिधेय हो तो ॥ कुत्सितं बहु भाषते वाचालः । वाचाट । यो हि सम्यग् बहु-भाषते वाग्मीत्येव स भवति ॥

६७४ प्राण्यङ्गान्नेष्यते ॥ १२८ ॥

मत्वर्थ में प्राण्यङ्गवाची शब्द से इनि प्रत्यय इष्ट नहीं है ॥ पाणिपादवती॥

६७५–पिशाचाच्चेति वक्तव्यम् ॥ १२९ ॥

पिशाच शब्द से मत्वर्थ में इनि प्रत्यय और उक्त शब्द को कुक् आगम हो यह कहना चाहिये । पिशाचा अस्य सन्ति पिशाचकी ॥

६७६–रोगे चायमिष्यते ॥ १२९ ॥

वात और अतिसार शब्द से मत्वर्थ रोग में इनि प्रत्यय और कुक् आगम इष्ट है॥ वातकी वातरोगवानित्यर्थः । यहां नहीं होता कि–वातवती गुहा॥

६७७–इनिप्रकरणे बलाद्बाहूरुपूर्वादुपसंख्यानम् ॥१३५॥

इनि प्रत्यय के प्रकरण में बाहूरु पूर्वपद–बलशब्द से मत्वर्थ में इनि प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ बाहुबलं महदस्यास्ति सबाहुबली । ऊरुबली ॥

६७८–सर्वादेश्चेति वक्तव्यम् ॥१३५॥

सर्वादि शब्द से मत्वर्थ में इनि प्रत्यय हो। सर्वधनमस्यास्ति ससर्वधनी । सर्वबीजी ।

६७९–अर्थाच्चासंनिहिते ॥१३५॥

असंनिहित मत्वर्थ में अर्थ शब्द से इनि प्रत्यय हो ॥ अर्थी । असंनिहि तइति किम्–अर्थवान् ॥

६८०–तदन्ताच्चेति वक्तव्यम् ॥१३५॥

असंनिहित मत्वर्थ में अर्थान्त शब्द से इनि प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ धान्यार्थी । हिरण्यार्थी ॥

इति पञ्चमाध्यायस्य द्वितीय–पाद परिशेषः

६८१–बहुग्रहणे संख्याग्रहणम् ॥२॥

बहु शब्द के ग्रहण में संख्यावाची बहु शब्द का ग्रहण करना चाहिये ॥

बहुतः । बहुत्र ॥ यहां नहीं होता कि-बह्वोः सूपात् । बह्वी सूपद्दति ॥

६८२—पर्य्यभिभ्यां सर्वोभयार्थे ॥९॥

यथासंख्य सर्वार्थ और उभयार्थ में वर्त्तमान परि और अभि शब्द से तसिल् प्रत्यय हो ॥ परितः । सर्वत इत्यर्थः । अभितः । उभयत इत्यर्थः ॥

६८३—द्युश्चोभयात् ॥२२॥

काल में वर्त्तमान सप्तम्यन्त उभय शब्द से द्यु प्रत्यय हो ॥ उभयोरह्नोः—उभयद्युः ॥

६८४—एतदो वाच्यः ॥२४॥

प्रकार वचन में एतद् शब्द से भी थमु प्रत्यय हो ॥ अनेन एतेन वा प्रकारेण-इत्थम् ॥

६८५—दिक्पूर्वपदस्यापरस्य पश्चभावो वक्तव्य आतिश्च प्रत्ययः ॥३२॥

दिक् पूर्वपद अपर शब्द को पश्च आदेश और उक्त शब्द से आति प्रत्यय कहना चाहिये अस्ताति के अर्थ में ॥ दक्षिणापरस्यां । दिशीति दक्षिणपश्चात् नैऋंत्याम् । उत्तरपश्चात् वायव्यामित्यर्थः ॥

६८६—अर्द्धोत्तरपदस्य दिक्पूर्वपदस्य पश्च भावो वक्तव्यः ॥३२॥

दिक् पूर्वपद अर्धोत्तरपद—अपर शब्द को पश्च भाव कहना चाहिये ॥ दक्षिणापरार्धे इति दक्षिणपश्चार्द्धः । उत्तरपश्चार्द्धः ॥

६८७—विनाऽपि पूर्वपदेन पश्च भावो वक्तव्यः ॥३२॥

पूर्वपद रहित अर्धोत्तरपद अपर शब्दको पश्च भाव कहना चाहिये ॥ पश्चार्धः॥

६८८—थमुअन्तात्स्वार्थे डदर्शनम् ॥४५॥

थमुअन्त प्रातिपदिक से स्वार्थ में ड प्रत्यय देख पड़ता है ॥ पथिद्वैधानि संश्रयन्ते । पथि त्रैधानि संश्रयन्ते ॥

६८९—ओकारसकारभकारादौसुपि सर्वनाम्नष्टेः प्रागकच् ॥७१॥

ओकारादि, सकारादि और भकारादि सुप् परे हो तो सर्वनाम के टि से पूर्व अकच् प्रत्यय हो ॥ युवकयोः । आवकयोः । युष्मकासु । अस्मकासु । युष्मकाभिः । अस्मकाभिः ।

६९०-अकच्प्रकरणेतूष्णीमःकाम्वक्तव्यः ॥७१॥

अकच् प्रकरण में तूष्णीं शब्द से काम् प्रत्यय हो ॥ मित होने से अन्त्य अच् से परे होता है । तूष्णीकमास्ते ॥

६९१ शीले को मलोपश्च ॥ ७१ ॥

तूष्णीं शब्द से शील अर्थ में क प्रत्यय हो और तूष्णीं के मकार का लोप हो । तूष्णीं शीलः--तूष्णीकः ॥

६९२-चतुर्थादचऊर्ध्वस्यलोपोवाच्यः ॥ ८३ ॥

चतुर्थ अच् से ऊर्ध्वभाग का लोप हो ठ और अजादि प्रत्यय परे हो तो अनुकम्पिता बृहस्पतिदत्तो-बृहस्पतिकः । बृहस्पतियः । बृहस्पतिलः ॥

६९३-अनजादौ च विभाषालोपोवक्तव्यः ॥८३॥

अजादि से भिन्न प्रत्यय परे हो तो द्वितीय अच् से ऊपरी भाग का विकल्प से लोप हो ॥ अनुकम्पितो देवदत्तः । देवदत्तकः । देवकः ॥

६९४-लोपःपूर्वपदस्य ठाजादावनजादौ च वक्तव्यः ॥८३॥

ठ अजादि और अनजादि प्रत्यय परे हों तो पूर्वपद का लोप हो ॥ अनुकम्पितो देवदत्त-दत्तिकः । दत्तियः । दत्तिलः । दत्तकः ॥

६९५-विनापिप्रत्ययेनपूर्वोत्तरपदयोर्वालोपोवक्तव्यः ॥ ८३ ॥

प्रत्यय हुये विना भी पूर्वपद और उत्तरपद का लोप विकल्प से कहना चाहिये ॥ देवदत्तो दत्तः-देवइति वा । सत्यभामा-भामा-सत्यावा ॥

६९६-उवर्णाल्लइलस्य च ॥ ८३ ॥

उवर्णान्त शब्द के द्वितीय अच् से ऊर्ध्व भाग का लोप और इल प्रत्यय के आदि का ल नाम लोपहो ॥ अनुकम्पितो भानुदत्तो भानुलः । अनुकम्पितो वसुदत्तो-वसुलः॥

६९७-ऋवर्णादपि ॥ ८३ ॥

ऋवर्णान्त शब्द के द्वितीय अच् से भी ऊर्ध्व भागका लोपहो ठ और अजादि प्रत्यय परे हों तो ॥ अनुकम्पितः सवितृदत्तः-सवित्रियः । सवितृकः । सवित्रिलः॥

६९८-द्वितीयादचोलोपेसन्ध्यक्षरद्वितीयत्वेतदादेर्लोपवचनम् ८३

द्वितीय अच् से लोप कहने में सन्ध्यक्षर द्वितीय हो तो तदादि का लोप कहना चाहिये ॥ अनुकम्पितः कहोडः कहिकः । लहिकः ॥

६९०—एकाक्षरपूर्वपदानामुत्तरपदलोपो वक्तव्यः ॥८३॥

इस प्रकरण में ठ और अजादि प्रत्यय परे हों तो एकाक्षर पूर्वपद शब्दों के उत्तरपद का लोप कहना चाहिये ॥ अनुकम्पितो वागाशीर्दत्तः । वाचिकः । स्रुचिकः । त्वचिकः ॥

६९१—षषष्ठाजादिवचनात्सिद्धम् ॥ ८३ ॥

" षडङ्गुलिदत्त " इस शब्द में एतत्प्रकरणस्थ ठ और अजादि प्रत्यय परे हों तो द्वितीय अच् से परे जो शब्द रूप उसका लोप " ठाजादावूर्ध्वं द्वितीयादचः " इस से हो ही ॥ अनुकम्पितः षडङ्गुलिदत्तः । षडिकः षडङ्गुलिर्वा षडिकः ॥

६९२ शेवलादीनां तृतीयादचो लोपः सचाऽकृतसन्धीनामिति वक्तव्यम् ॥ ८४ ॥

इस प्रकरण में ठ और अजादि प्रत्यय परे हों तो शेवलादि शब्दों के तृतीय अच् से परे जो लोप हो वह अकृत सन्धियों का हो यह कहना चाहिये॥ अनुकम्पितः शेवलेन्द्रदत्तः शेवलिकः । अनुकम्पितः सुपर्णाशीर्दत्तः सुपरिकः ।

इति पञ्चमाध्यायस्य तृतीयपादपरिशेषः

६९३—कन्प्रकरणे चञ्चद्बृहतोरुपसंख्यानम् ॥३॥

कन् प्रत्यय के प्रकरण में चञ्चत् और बृहत् शब्द से कन् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ चञ्चत्प्रकारः । चञ्चत्कः । बृहत्कः ॥

६९४—चञ्चबृहयोरिति केचित्पठन्ति ॥ ३ ॥

कोई आचार्य कन् प्रत्यय के प्रकरण में चञ्च और बृह शब्द से कन् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये यह पढ़ते हैं ॥ चञ्चप्रकारः । चञ्चकः । बृहकः ॥

६९५—समशब्दादावतुःप्रत्ययो वक्तव्यः ॥ २५ ॥

छन्दो विषय में सम शब्द से आवतु प्रत्यय हो स्वार्थ में ॥ समावद्वसतु । समावद्वसति ॥

६९६—नवस्य नूआदेशस्त्नप्तनप्खाश्च प्रत्यया वक्तव्याः॥२५॥

स्वार्थमें नव शब्दको नू आदेश और नव शब्दसे तप् तनप् और ख प्रत्यय हो ॥ नूत्नम् । नूतनम् । नवीनम् । ये स्वार्थिक प्रत्यय विकल्प से होते हैं इस से पक्षान्तर में पूर्वरूप ज्यों का त्यों रहता है । नवम् ॥

६९७-नश्च पुराणे प्रात् ॥ २५ ॥

पुराणार्थ में वर्त्तमान प्र शब्द से न, तप्, तनप् और ख प्रत्यय हो ॥ प्रणम् प्रत्नम् । प्रतनम् । प्रीणम् ॥

६९८-भागरूपनामभ्यो धेयः प्रत्ययो वक्तव्यः ॥२५॥

स्वार्थ में भाग, रूप और नामन् शब्द से विकल्प करके धेय प्रत्यय कहना चाहिये ॥ भागएव भागधेयम् । रूपमेव रूपधेयम् । नामैव नामधेयम् । भागः । रूपम् । नाम ॥

६९९-मित्राच्छन्दसि ॥ २५ ॥

छन्दो विषय में मित्र शब्द से स्वार्थिक धेय प्रत्यय हो ॥ मित्रधेये यतस्व॥

७००-आग्नीध्रसाधारणादञ् ॥२५॥

स्वार्थ में आग्नीध्र और साधारण शब्द से अञ् प्रत्यय हो ॥ आग्नीध्रम्। साधारणम् ॥

७०१-आभ्यां स्त्रियां ङीप् ॥२५॥

स्त्रीलिङ्ग में आग्नीध्र और साधारण शब्द से ङीप् प्रत्यय हो ॥ आग्नीध्री । साधारणी ॥

७०२-अयवसमरुद्भ्यां छन्दस्यञ् वक्तव्यः ॥२५॥

स्वार्थ में छन्दोविषय में अयवस और मरुत् शब्द से अञ् प्रत्यय कहना चाहिये । आयवसे रमन्ते । मारुतं शर्द्धः ॥

७०३-लोहितालिङ्गबाधनं वा वक्तव्यम् ॥ ३१ ॥

लोहित शब्द से लिङ्गबाधन विकल्प से कहना चाहिये ॥ लोहितिका कोपेन । लोहिनिका कोपेन ॥ लोहितकः कोपेन ॥

७०४-अण्प्रकरणे कुलालवरुडनिषादकर्मारचण्डालमित्रामित्रेभ्यश्छन्दस्युपसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥ ३६

छन्दो विषय में अण् प्रकरण में कुलाल, वरुड, निषाद, कर्मार, चाण्डाल

मित्र और अमित्र शब्द से स्वार्थिक अण् प्रत्यय का विकल्प से उपसंख्यान करना चाहिये ॥ कौलालः।कुलालः।वारुडः। वरुडः।नैषाद। निषादः। कार्मारः। कर्मारः। चाण्डालः। चण्डालः। मैत्रः। मित्रम्। आमित्रः। अमित्रः॥

७०५–सान्नाय्यानुजावरानुषूकचातुष्प्राश्यराक्षोघ्नवैयातवैकृतवारिवस्कृताग्रायणाग्रहायणसान्तपनानि निपात्यन्ते॥३६॥

छन्दो विषय में स्वार्थिक अण् प्रत्ययान्त सान्नाय्य आदि शब्द निपातित हैं॥ सान्नाय्यः। आनुजावरः। आनुषूकः। चातुष्प्राश्यः। राक्षोघ्नः। वैयातः। वैकृतः। वारिवस्कृतः। आग्रायणः। आग्रहायणः। सान्तपनः॥

७०६–एतेऽण्णन्ताःस्वार्थिकाश्छन्दसिभाषायांचेष्यन्ते ॥३६॥

स्वार्थिक अण् प्रत्ययान्त ये कौलालादि सान्तपनान्त शब्द छन्द और भाषा दोनों में इष्ट हैं॥ चाण्डालः। चण्डालः। सान्तपनः॥

७०७–नवसूरमर्त्तयविष्ठेभ्यो यत् ॥ ३६ ॥

छन्दो विषय में नव, सूर, मर्त्त और यविष्ठ शब्द से स्वार्थिक यत् प्रत्यय हो॥ नव्यः। सूर्यः। मर्त्यः। यविष्ठ्यः॥

७०८–क्षेमाद्यः ॥ ३६ ॥

छन्दो विषय में क्षेम शब्द से स्वार्थिक य प्रत्यय हो॥ क्षेम्यः॥

७०९–बह्वल्पार्थान्मङ्गलाऽमङ्गलवचनम् ॥ ४२ ॥

कारकाभिधायी बह्वर्थ और अल्पार्थ शब्द से शस् प्रत्यय विकल्प से हो यथाक्रम मङ्गल और अमङ्गल कर्म में यह कहना चाहिये॥ बहुशो ददाति। इष्टेषु प्राशित्रादिषु यथास्यात्। अनिष्टेषु श्राद्धादिषु माभूत्। मरणनिमित्तनिमित्तगौर्ध्वदेहिकं श्राद्धमपि तथा। अल्पशो ददाति, अनिष्टेषु श्राद्धादिषु यथास्यात् इष्टेषु प्राशित्रादिषु माभूत्॥

७१०–तसिप्रकरण आद्यादिभ्य उपसंख्यानम् ॥ ४४ ॥

तसि प्रत्यय के प्रकरण में आदि आदि शब्दों से तसि प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये॥ आदौ आदितः। मध्यतः। अन्ततः। पृष्ठतः। पार्श्वतः॥ आकृतिगणश्चाऽयम्। स्वरेण स्वरतः। वर्णतः॥

७११–च्विविधावभूततद्भावग्रहणं कर्त्तव्यम् ॥ ५० ॥

च्वि प्रत्यय के विधान में अभूततद्भाव का ग्रहण करना चाहिये ॥ अशुक्लः शुक्लः सम्पद्यते तं करोति--शुक्लीकरोति मलिनं शुक्लीभवति। शुक्लीस्यात् ॥

७१२-भद्राच्चेति वक्तव्यम् ॥ ६७ ॥

कृञ् के योग में भद्र शब्दसे परिवापण अर्थ में डाच् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये ॥ भद्राकरोति नापितः कुमारम् ॥

७१३-पूजायां स्वतिभ्यामेव ॥ ६९ ॥

पूजन वचन सु और अति शब्द से ही परे समासान्त विधि न हो ॥ सुराजा । अतिराजा ॥

७१४-प्राग्बहुव्रीहिग्रहणं च कर्त्तव्यम् ॥ ६९ ॥

न पूजनात् ॥ ६९ । इस सूत्र से पूर्व बहुव्रीहि ग्रहण करना चाहिये जिससे सुसक्थः । अतिसक्थः । स्वक्षः । अत्यक्षः । इत्यादि में समासान्त विधि का निषेध नहीं होता ॥

७१५-डच्प्रकरणेसंख्यायास्तत्पुरुषस्योपसंख्यानं कर्त्तव्यं निस्त्रिंशाद्यर्थम् ॥ ७३ ॥

डच् प्रत्यय के प्रकरण में निस्त्रिंशादि की सिद्धि के लिये संख्यान्त तत्पुरुष से डच् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ निर्गतानि त्रिंशतः, निस्त्रिंशानि वर्षाणि देवदत्तस्य । निश्चत्वारिंशानि यज्ञदत्तस्य ॥

७१६-कृष्णोदक्पाण्डुपूर्वाया भूमेरच्प्रत्ययःस्मृतः । गोदावर्याश्चनद्याश्च संख्यायाउत्तरेयदि ॥ ७५ ॥

कृष्ण, उदक् और पाण्डु शब्द से परे भूमि शब्द से अच् प्रत्यय हो । तथा संख्यासे परे गोदावरी और नदी शब्द से भी अच् प्रत्यय हो॥ कृष्णाभूमिरस्य कृष्णभूमः । उदग्भूमः । पाण्डुभूमः प्रासादः । सप्तगोदावरम् । पञ्चनदम् ॥

७१७-भूमेरपि संख्य पूर्वाया अच् प्रत्ययइष्यते ॥ ७५ ॥

संख्या से परे भूमि शब्द से भी अच् प्रत्यय इष्ट है ॥ द्वेभूमीअस्य द्विभूमः प्रासादः । त्रिभूमः । दशभूमकंसूत्रम् ॥

७१८-अन्यत्रापि च दृश्यते ॥ ७५ ॥

अन्यत्र भी अच् प्रत्यय देख पड़ता है। पद्मं नाभावस्य पद्मनाभ इवनाभिरस्येति वा पद्मनाभोविष्णुः । ऊर्णनाभावस्य सऊर्णनाभः । दीर्घरात्रः ॥

७१९ -चतुरोऽच्प्रकरणे त्र्युपाभ्यामुपसंख्यानम् ॥७७॥

अच् प्रत्यय के प्रकरण में त्रि और उप शब्द से परे चतुर् शब्द से अच् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ त्रयश्चत्वारो वेति त्रिचतुराः । चतुर्णां समीपे ये सन्ति उपचतुराः ॥

७२०-पल्यराजभ्यां चेति वक्तव्यम् ॥ ७८ ॥

पल्य और राजन् शब्द से परे वर्चस् शब्द से समासान्त अच् प्रत्यय हो यह कहना चाहिये। पलं मांसमर्हति पल्यो मांसभोजी तस्य वर्चः पल्यवर्चसम्। राज्ञो वर्चो राजवर्चसम् ॥

७२१-अनसन्तान्नपुंसकाच्छन्दसि वेति वक्तव्यम् ॥१०३॥

नपुंसक लिङ्ग अन्नन्त और असन्त तत्पुरुष से परे छन्दोविषय में टच् प्रत्यय विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ ब्रह्मणः साम ब्रह्मसाम । ब्रह्मसामम् । देवच्छन्दः । देवच्छन्दसम् ॥

७२२-प्रतिपरसमनुभ्योऽक्ष्णः पथश्च ॥ १०७ ॥

अव्ययीभाव में प्रति, पर, सम्, और अनु शब्द से परे अक्षिन् और पथिन् शब्द से समासान्त टच् प्रत्यय हो॥ अक्षि प्रति प्रत्यक्षम् । अक्ष्णः परं परोक्षम् । समक्षम् । अन्वक्षम् । प्रतिपथम् । परपथम् । संपथम् । अनुपथम् ॥

७२३-अपि प्रधानपूरणीग्रहणं कर्त्तव्यम् ॥ ११६ ॥

अप प्रत्यय के विधान में प्रधान पूरणी का ग्रहण करना चाहिये ॥ कल्याणी पञ्चमी आसां रात्रीणां ताः कल्याणीपञ्चमा रात्रयः । अप्रधान होने से यहां अप् प्रत्यय नहीं होता जैसे-कल्याणी पञ्चमी अस्मिन् पक्षे कल्याणी पञ्चमीकः पक्षः ॥

७२४--नेतुर्नक्षत्रउपसंख्यानम् । ११६ ।

नक्षत्रादि नेतृ शब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त अप् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ मृगो नेता आसां रात्रीणां मृगनेत्रा रात्रयः । पुष्यनेत्राः ॥

७२५-छन्दसि च नेतुरुपसंख्यानम् ।११६।

छन्दो विषय में नेतृ शब्दान्त बहुव्रीहि से अप् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ बृहस्पतिर्नेता एषां देवानां बृहस्पतिनेत्रा देवाः । सोमनेत्राः॥

७२६—मासाद्भृतिप्रत्ययपूर्वपदाट्ठज्विधिः ॥ ११६ ॥

भृत्यर्थ प्रत्ययान्त पूर्वपद वाले मास शब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त ठच् प्रत्यय का विधान करना चाहिये ॥ पञ्च रूप्याणि भृतिर्वेतनमस्य स पञ्चकः। पञ्चको मासोऽस्य पञ्चकमासिकः कर्मकरः। दशकमासिकः ॥

७२७ खुरखराभ्यां नस् वक्तव्यः ॥ ११८ ॥

खुरखरादि नासिकान्त बहुव्रीहि से कोई प्रत्यय न हो परन्तु नासिका शब्द को नस् आदेश हो जावे ॥ खुरवन्नासिकाऽस्य खुरणाः। खरस्येवनासिकास्य खरणाः ॥

७२८--पक्षेऽच्प्रत्ययोऽपीष्यते ॥ ११८ ॥

पक्ष में खुरखरादि नासिकान्त बहुव्रीहि से अच् प्रत्यय भी इष्ट है। और नासिका शब्द को नस् आदेश हो ॥ खुरणसः। खरणसः। निर्वचनं पूर्ववत् ॥

७२९--शितिनाः, अहिनाः, अर्चनाः, इति निगमे इष्यते॥ ११८॥

बहुव्रीहि समास में शिति,अहि और अर्च पूर्वपद वाले नासिका शब्द को नस् आदेश इष्ट है निगम विषय में ॥ शितिर्नासिकाऽस्य शितिनाः। अहिनाः। अर्चनाः ॥

७३०-वेर्ग्रो वक्तव्यः ॥ ११९ ॥

वि उपसर्ग से परे जो नासिका शब्द तदन्त बहुव्रीहि से अच् प्रत्यय और नासिका शब्द को ग्र आदेश हो ॥ विगता नासिकाऽस्य विग्रः ॥

७३१--ख्यश्च ॥ ११९ ॥

वि उपसर्ग से परे जो नासिका शब्द तदन्त बहुव्रीहि से अच् प्रत्यय और नासिका शब्द को ख्य आदेश भी हो ॥ विगता नासिकाऽस्य विख्यः ॥

७३२- ऊधसोऽनङि स्त्रीग्रहणं कर्त्तव्यम् ॥ १३१ ॥

ऊधस् शब्द को अनङ् आदेश में स्त्रीलिङ्ग का ग्रहण करना चाहिये ॥ कुण्डोध्नी गौः। स्त्रीलिङ्ग के अभाव से यहां नहीं होता कि महोधाः पर्जन्यः।

७३३ -गन्धस्येत्वेतदेकान्तग्रहणम् । १३५ ।

बहुव्रीहि समास में गन्ध शब्द को इकारादेश होने में एकान्त का ग्रहण करना चाहिये ॥ इस से खास २ उदाहरणों में ही इकारादेश होता है सर्वत्र नहीं सुगन्धि पुष्पं सलिलं च। नेह शोभनोगन्धोऽस्य शुगन्ध आपणः ॥

एकान्त एकदेश इव । अविभागेन वक्ष्यमाण इत्यर्थः ॥

इति पाणिनीयाष्टकस्य पञ्चमाध्यायस्य चतुर्थपादपरिशेषः समाप्तश्च पञ्चमाध्यायः ॥

७३४—वकारस्याप्ययं प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ३ ॥

द्वितीय एकाच् के अवयव वकार को भी द्विर्वचन का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ उन्दिदिषति ॥

७३५—यकारपरस्य रेफस्य प्रतिषेधो न भवतीति वक्तव्यम् ॥ ३ ॥

द्वितीय एकाच् के अवयव यकार परक रेफ को द्विर्वचन का प्रतिषेध नहीं होता यह कहना चाहिये ॥ अरार्यते ॥

७३६—ईर्ष्यतेस्तृतीयस्य द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥ ३ ॥

ईर्ष्यति धातु के तृतीय व्यञ्जन अथवा तृतीय एकाच् को द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये ॥ ईर्ष्यियिषति । द्वितीय पक्ष में—ईर्षिषिषति ॥

७३७—कण्ड्वादीनां तृतीयस्यैकाचो द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥ ३ ॥

कण्ड्वादि धातुओं वा प्रातिपदिकों के तृतीय एकाच् को द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये ॥ कण्डूयियिषति । असूयियिषति ॥

७३८—वा नामधातूनां तृतीयस्यैकाचो द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥ ३ ॥

नाम धातुओं के तृतीय एकाच् को विकल्प से द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये ॥ अश्वीयियिषति । अशिश्वीयिषति ॥

७३९—यथेष्टं नामधातुष्विति वक्तव्यम् ॥ ३ ॥

किन्हीं आचार्यों का मत है कि—नामधातुओं में यथेष्ट द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये । पुपुत्रीयिषति । पुतित्रीयिषति ॥ पुत्रीयियिषति । पुपुतित्रीयियिषति । पुत्रीयियिषति ॥

७४०—द्विर्वचनप्रकरणे छन्दसि वेति वक्तव्यम् ॥ ८ ॥

छन्दो विषय में द्विर्वचन प्रकरण में विकल्प से द्विर्वचन हो यह कहना

चाहिये ॥ यो जागार तमृचः कामयन्ते । दाति प्रियाणीति । पक्षे जजागार । ददाति ॥

७४१--कृञादीनां के द्वे भवतइति वक्तव्यम् ॥ १२ ॥

घञर्थ क प्रत्यय परे हो तो कृञादि धातुओं को द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये ॥ क्रियतेऽनेनेति चक्रम् । चिक्लिदम् । चक्नसम् ॥

७४२—चरिचलिपतिवदीनां द्वित्वमच्याक्चाभ्यासस्य ॥ १२॥

अच् प्रत्यय परे हो तो चरि चलि, पति और वदि धातु को द्वित्व और अभ्यास को आक् आगम हो ॥ चराचरः । चलाचलः । पतापतः । वदावदः ॥

७४३—वेति वक्तव्यम् ॥ १२ ॥

अच् प्रत्यय परे हो तो चरिप्रभृति धातुओं को द्वित्वादि विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ तेन चरः पुरुषः। चलो रथः । पतं पत्रम् । वदो मनुष्यः । इत्येवमाद्यपि सिद्धं भवति ॥

७४४—हन्तेर्घत्वं च ॥ १२ ॥

अच् प्रत्यय परे हो तो हन धातु को विकल्प से द्वित्व और द्वित्व पक्ष में ही अभ्यास को आक् आगम तथा हन धातुओं को घत्व हो यह कहना चाहिये घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम् । पक्षे हनइति भवति ॥

७४५-पाटेर्णिलुकूचोक्च दीर्घश्चाभ्यासस्य ॥३०॥

अच् प्रत्यय परे हो तो पाटि धातु को द्वित्व, णिलुक् और अभ्यास को ऊक् आगम तथा दीर्घ विकल्प से हो ॥ पाटूपटः । पक्षेपाटः । एतद्वार्त्तिक चतुष्टयं कृदन्तेऽपि लिखितम् ॥

७४६--ऋचि त्रेरुत्तरपदादिलोपश्छन्दसि ॥ ३७ ॥

ऋच् शब्द परे हो तो त्रिशब्द को संप्रसारण और ऋच् शब्द के आदि का लोप हो छन्दो विषय में॥ तिस्र ऋचो यस्मिन्-तत् तृचं सूक्तम् । तृचं साम॥

७४७-रयेर्मतौ बहुलम् ॥ ३७ ॥

मतुप् प्रत्यय परे होतो रयि शब्द को बाहुल्य से संप्रसारण हो छन्दोविषय में ॥ आरेवानेतु नो विशः । न च भवति । रयिमान् पुष्टिवर्धनः ॥

७४८—आत्वे णौ लीयतेरुपसंख्यानं प्रलम्भनशालीनीकरणयोः ॥ ४८ ॥

प्रलम्भन और शालीनीकरण अर्थ में आत्वप्रकरण में लीयति धातु का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ प्रलम्भने तावत्—जटाभिरालापयते । शालीनीकरणे—श्येनो वर्त्तिकामुल्लापयते ॥

७४९—निमिमीलियां खल्चोः प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ५१ ॥

खल् और अच् प्रत्यय परे हों तो निमि, मी और ली धातु को आत्वादेश का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ ईषन्निमयः । ईषत्प्रमयः । ईषद्विलयः । अचि—निमयः । प्रमयः । विलयः ॥

७५०—वा केशेषु ॥ ६१ ॥

केश वाच्य हों तो शिरस् शब्द को शीर्षन् आदेश विकल्प से हो ॥ शिरसि भवाः शीर्षण्याः केशाः । शिरस्या वा ॥

७५१—अचि शीर्षः * ॥ ६१ ॥

अजादि प्रत्यय परे हों तो शिरस् शब्द को शीर्ष आदेश हो ॥ हस्तिशिरसोऽपत्यं हास्तिशीर्षिः । पैलुशीर्षिः । स्थूलशिरसइदं स्थौलशीर्षम् ॥

७५२—छन्दसि च ॥ ६१ ॥

छन्दोविषय में अजादि प्रत्यय परे हो तो शिरस् शब्द को शीर्ष आदेश हो ॥ द्विशीर्षे ।

७५३—नस् नासिकाया यत्तस्क्षुद्रेषु ॥ ६२ ॥

यत्, तस्, और क्षुद्र शब्द परे हों तो नासिका शब्द को नस् आदेश हो नस्यम् । नस्तः । नःक्षुद्रः ॥

७५४—यति वर्णनगरयोर्नेति वक्तव्यम् ॥ ६२ ॥

वर्ण और नगर वाच्य हों तो यत् प्रत्यय परे होने पर नासिका शब्द को नस् आदेश न हो यह कहना चाहिये ॥ नासिक्यो वर्णः । नासिक्यं नगरम् । दक्षिण में नासिक नामक नगर प्रसिद्ध प्राचीन है ॥

---

* यह सूत्रपाठ में ऐसा ही भूल से छप गया है वास्तव में सूत्रों में नहीं चाहिये प्रमाद से प्रक्षिप्त कर दिया है ॥

७५५-सादेशे सुब्धातुष्ठिवुष्वस्कतीनां सत्वप्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ६१ ॥

स आदेश विधान में सुब्धातु, ष्ठिवु और ष्वस्क धातु के सत्व का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ सुब्धातुः । षोडीयति । षण्डीयति । ष्ठिवु । ष्ठीवति । ष्वस्क । ष्वस्कते । ष्ठिवुइत्यस्य द्वितीयस्थकारष्ठकारश्चेष्यते । तेन तेष्ठीव्यते । टेष्ठीव्यते । इति चाभ्यासरूपं द्विधा भवति ॥

७५६-विश्वजनादीनां छन्दसि वा तुगागमो भवतीति वक्तव्यम् ॥ ७५ ॥

छन्दो विषय में विश्वजनादि शब्दों को तुक् आगम विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ विश्वजनस्य-छत्रम् । विश्वजनच्छत्रम् । विश्वजनछत्रम् । नच्छायां कुरवोऽपराम् । नछायांकुरवोऽपराम् ॥

७५७-इकः प्लुतपूर्वस्य यणादेशो वक्तव्यः ॥७६॥

प्लुत पूर्व इक् के स्थान में यणादेश कहना चाहिये ॥ गो३इन्द्र । गो३यिन्द्र॥

७५८-गोर्यूतौ छन्दसि ॥ ७८ ॥

छन्दोविषय में यूति शब्द परे हो तो गो शब्द को वान्तादेश (अव) हो ॥ आनोमित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् ॥ छन्दसीति किम्-गोयूतिः ॥

७५९-अध्वपरिमाणे च ॥ ७८ ॥

मार्ग का परिमाण वाच्य होने पर यूति शब्द परे होतो गो शब्द को वान्तादेश (अव्) हो ॥ गव्यूतिमात्रमध्वानं गतः । अन्यत्र गोयूतिरित्येव ॥

७६०-हृदय्या आप उपसंख्यानम् ॥ ८२ ॥

छन्दो विषय में " हृदय्या आपः ,, इस का उपसंख्यान करना चाहिये अर्थात् " हृदे भवा आपः ,, इस विग्रह में " भवे छन्दसि ,, इस सूत्र से यत् प्रत्यय करने पर सप्तमी का लुक् न करके अय् आदेश निपातित किया है ॥

७६१-संप्रसारणङीट्सु प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥८६ ॥

संप्रसारण, ङि और इट् में षत्व और तुक् के असिद्धत्व का प्रतिषेध कहना चाहिये । सम्प्रसारणे-अक्षहूषु । परिवीषु । ङौ=वृक्षेच्छत्रम् । वृक्षेछत्रम् । इटि-अपचेच्छत्रम् । अपचेछत्रम् । लङुत्तमैकवचनस्यात्रेड्बोध्यः ॥

७६२-अक्षादूहिन्याम् ॥ ८८ ॥

अक्ष शब्द से ऊहिनी शब्द परे हो तो पूर्व पर के स्थान में वृद्धि एकादेश हो ॥ अक्षौहिणी सेना । अक्षानूहतेऽवश्यमित्यावश्यके णिनिः ॥

७६३-प्रादूहोढोढ्येषैष्येषु ॥ ८८ ॥

प्र शब्द से ऊह, ऊढ, ऊढि, एष और एष्य शब्द परे हों तो पूर्वपर के स्थान में वृद्धि एकादेश हो ॥ प्रौहः । प्रौढः । प्रौढिः । प्रैषः । प्रैष्यः ॥

७६४-स्वादीरेरिणोः ॥ ८८ ॥

स्व शब्द से ईर और ईरिन् शब्द परे हों तो पूर्वपर के स्थान में वृद्धि एकादेश हो ॥ स्वैरम् । स्वैरी । स्त्रीचेत्-स्वैरिणी ॥ ईरिन्ग्रहणं शक्यमकर्त्तुम् कथं स्वैरीति । इनिनैतन्मत्वर्थीयेन सिद्धम् । स्वैरोऽस्यास्तीति स्वैरी ॥

७६५-ऋते च तृतीयासमासे ॥ ८८ ॥

तृतीया समास में अवर्ण से ऋत शब्द परे हो तो पूर्वपर के स्थान में वृद्धि एकादेश हो ॥ सुखेन ऋतः-सुखार्त्तः । दुःखार्त्तः।ऋत इति किम्-सुखेन इतः । सुखेतः । तृतीयेति किम्-परमर्त्तः । समास इति किम्-सुखेनर्त्तः ॥

७६६-प्रवत्सतरकम्बलवसनार्णदशानामृणे ॥ ८८ ॥

प्र, वत्सतर, कम्बल, वसन, ऋण, दश, इन शब्दों से ऋण शब्द परे हो तो पूर्वपर के स्थान में वृद्धि एकादेश हो ॥ प्रार्णम् । वत्सतरार्णम् । कम्बलार्णम् । वसनार्णम् । ऋणार्णम् । दशार्णो देशः । दशार्णा नदी ॥

७६७-एवेचाऽनियोगे ॥ ९३ ॥

अवर्ण से अनियोगार्थ (अनिश्चयार्थ) एव शब्द परे हो तो पूर्वपर के स्थान में पररूप एकादेश हो ॥ क्वेव भोक्ष्यसे । अनवक्लृप्तावेव शब्दः । अनियोग इति किम्-तवैव गृहे भोक्ष्ये ॥

७६८-शकन्ध्वादिषु पररूपं वक्तव्यम् ॥९३॥

शकन्धु आदि शब्दों में पररूप कहना चाहिये । तच्च टेः । शक अन्धुः । शकन्धुः । कर्कन्धुः । कुल अटा । कुलटा । सीमन्तः केशवेशे । अन्यत्र सीमान्तः। मनीषा । हलीषा । लाङ्गलीषा । पतञ्जलिः । सारङ्गः पशुपक्षिणोः । अन्यत्र साराङ्गः । आकृतिगणोऽयम् ॥

७६९-ओत्वोष्ठयोः समासे वा ॥ ९३ ॥

समासविषय में अवर्ण से ओतु और ओष्ठ शब्द परे हों तो पूर्व पर के स्थान में विकल्प से पररूप एकादेश हो ॥ स्थूलोतुः । । स्थूलौतुः । बिम्बोष्ठी । बिम्बौष्ठी ॥

७७०-एमन्नादिषु छन्दसि पररूपं वक्तव्यम् ॥९३॥

छन्दो विषय में एमन् आदि शब्द परे हों तो पूर्वपर के स्थान में पररूप एकादेश कहना चाहिये ॥ अपां त्वा एमन् । अपां त्वेमन् । अपां त्वा ओद्मन् । अपांस्वोद्मन् ॥

७७१-अनेकाच इति वक्तव्यम् ॥ ९७ ॥

अनेकाच् अव्यक्तानुकरण के अत् शब्द से इति शब्द परे हो तो पूर्वपर के स्थान में पररूप एकादेश हो यह कहना चाहिये ॥ पटत् इति, पटिति । घटत् इति घटिति ॥

७७२-नित्यमाम्रेडिते डाचि ॥ ९८ ॥

डाच् परक आम्रेडित परे हो तो पूर्व अव्यक्तानुकरण का जो अन्त्यतकार उस को तथा आम्रेडित के पकार को नित्य पररूप एकादेश हो॥ पटपटा करोति । पटपटायति । दमदमा करोति । दमदमायति ॥

७७३-सवर्णदीर्घत्वे ऋति ॠ वावचनम् ॥९९॥

सवर्णदीर्घत्व में ऋकार से ऋकार परे हो तो पूर्वपर के स्थान में विकल्प से ॠकार हो यह कहना चाहिये॥ होतृ ऋकारः होतॄकारः। पक्षे–होतृकारः ॥

७७४-ऌति ऌ वा ॥ ९९ ॥

सवर्ण दीर्घत्व में ऋकार से ऌकार परे हो तो पूर्वपर के स्थान में विकल्प से ऌकार हो यह कहना चाहिये ॥ होतृ ऌकारः । होतॢकारः । पक्षे दीर्घऌकारस्याभावाद् दीर्घ ॠकारो भवति । होतृ ऌकारः । होतॄकारः ॥

७७५-वा छन्दसीत्येव ॥ १०५ ॥

छन्दो विषय में अक् से अजादि अम् परे हो तो पूर्वरूप विकल्प से हो॥ शमीं च । शम्यं च । गौरीं च । गौर्यं च । अर्थात (वा छन्दसि) सूत्र की अनुवृत्ति इस सूत्र में वाक्यभेद से दिखाने के लिये वार्त्तिक है अपूर्व नहीं है जिस से लोक में नित्य पूर्वरूप हो ॥

७७६-सिन्नित्यसमासयोः शाकलप्रतिषेधः ॥१२५॥

सित् प्रत्यय परे हो और नित्य समास में शाकल्य आचार्य के मत से होने वाले प्रकृतिभाव और इक् को ह्रस्वत्व का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ सिति-अयं ते योनिर्ऋत्वियः । नित्यसमासे-व्याकरणम् । वाप्यश्वः ॥

७७७-ईषाअक्षादिषु च्छन्दसि प्रकृतिभावमात्रं वक्तव्यम् ॥ १२५ ॥

छन्दो विषय में ईषा अक्षादि शब्दों में प्रकृतिभावमात्र कहना चाहिये ॥ ईषा अक्षः । का ईमरे पिशङ्गिला । यथा अगमन् । इस से ईषा आदि शब्दों को ह्रस्वादेश नहीं होता ॥

७७८-णमुलत्र वक्तव्यः ॥१३८ ॥

उप उपसर्ग से किरति धातु परे हो तो ककार से पूर्व सुट् आगम हो लवन विषय में-इस विषय में णमुल् प्रत्यय कहना चाहिये ॥ उपस्कारं मद्रका लुनन्ति । उपस्कारं काश्मीरका लुनन्ति । विक्षिप्य लुनन्तीत्यर्थः ॥

७७९-हर्षजीविकाकुलायकरणेष्विति वक्तव्यम् ॥१४०॥

हर्ष, जीविका, कुलायकरण इन अर्थों में अप उपसर्ग से किरति धातु परे हो तो ककार से पूर्व सुट् आगम हो चतुष्पाद् और शकुनि विषयक आलेखन में यह कहना चाहिये ॥ हर्षे-अपस्किरते वृषभो हृष्टः । जीविकायाम्-अपस्किरते कुक्कुटो भक्ष्यार्थी । कुलायकरणे-अपस्किरते श्वा आश्रयार्थी ॥

७८०-हर्षजीविकाकुलायकरणेष्वेवकिरतेरात्मनेपदस्योपसंख्यानम् ॥ १४० ॥

हर्ष, जीविका और कुलायकरण में हो किरति धातु से आत्मनेपद का उपसंख्यान करना चाहिये । तथा चैवोदाहृतम् ॥

७८१-समो हिततततयोर्वा लोपः ॥ १४२ ॥

हित और तत शब्द परे हों तो सम् के "म्" का लोप विकल्प से हो ॥ सहितम् । संहितम् । सततम् । संततम् ॥

७८२-समतुमुनोः कामे लोपो वक्तव्यः ॥१४२॥

काम शब्द परे होतो सम् और तुमुन् शब्द के मकार का लोप कहना चाहिये ॥ सकामः । भोक्तुकामः ॥

७८३–मनसि च ॥ १४२ ॥

मनस् शब्द परे हो तो सम् और तुमुन् के मकार का लोप कहना चाहिये ॥ समनाः । भोक्तुमनाः ॥

७८४–अवश्यमः कृत्ये लोपो वक्तव्यः ॥१४२॥

कृत्य प्रत्यय परे हो तो "अवश्यम्" शब्द के मकार का लोप कहना चाहिये ॥ अवश्यभाव्यम् । अवश्यलाव्यम् । अवश्यपाव्यम् ॥

अयमत्र संग्रहः

लुम्पेदवश्यमःकृत्ये तुंकाममनसोरपि ।

७८५–समोवाहिततयोर्मांसस्य पचियुड्घञोः ॥१४२॥

मांस शब्द के अन्त्य "अ" का लोप अलोन्त्य परिभाषानुसार ल्युट् घञ् प्रत्ययान्त पच धातु के परे होता है । परन्तु यह संग्रह महाभाष्य में ऐसा नहीं है ॥ मांस्पचनी उखा । मांस्पाकः ।

७८६- तद्बृहतोः करपत्योश्चोरदेवतयोः सुट्तलोपश्च ॥१५४॥

चोर और देवता वाच्य हों तो यथासंख्य तत् और बृहत् शब्द से परे कर और पति शब्द को सुट् आगम और पूर्वोक्त दोनों शब्दों के तकारका लोप हो ॥ तस्करश्चोरः । बृहस्पतिर्देवता ॥

७८७ -प्रात्तुम्पतौ गवि कर्त्तरि ॥ १५४ ॥

गौ कर्त्ता हो तो प्र शब्द से परे तुम्पति धातुको सुट् आगम हो ॥ प्रस्तुम्पति गौः ॥

७८८--प्रायस्य चित्तिचित्तयोः ॥ १५४ ॥

प्राय शब्द से परे चित्ति और चित्त शब्द को सुट् आगम हो ॥ प्रायश्चित्तिः । प्रायश्चित्तम् ॥

७८९--आगमस्य विकारस्य प्रकृतेः प्रत्ययस्यच ।
पृथक्स्वरनिवृत्त्यर्थमेकवर्जंपदस्वरः ॥ १५५ ॥

आगम, विकार, प्रकृति और प्रत्यय की पृथक् स्वर निवृत्ति के लिये ए-

क को छोड़ कर पदस्वर होता है ॥ आगमस्य चत्वारः । विकारस्य अर्स्यान । प्रकृतेः गोपायति । प्रत्ययस्य कर्तव्यम् ।

१६०--विभक्तिस्वरान्नञ्स्वरो बलीयानिति वक्तव्यम् ॥१५५

विभक्ति स्वर से नञ् स्वर बलीयान् है यह कहना चाहिये ॥ अतिस्रः (२५९९) । अत्र तिसृभ्योजसइति सति शिष्टेऽपि विभक्तिस्वरो नञ्स्वरेण बाध्यते ॥

१६१--विभक्तिनिमित्तस्वराच्च नञ्स्वरो बलीयानिति वक्तव्यम ॥ १५५ ॥

विभक्ति निमित्त स्वर से नञ् स्वर बलीयान् है यह कहना चाहिये ॥ अचत्वारः ॥ यस्य विभक्तिर्निमित्तमामस्तस्य यदुदात्तत्वं तन्नञ्स्वरेण बाध्यते । तेन चतुरनडुहोरामुदात्त इत्युदात्तो न भवति ।

१६२··बृहन्महतोरुपसंख्यानम् ॥ १७०

बृहत् और महत् शब्द से परे नदी और अजादि विभक्ति असर्वनाम स्थान उदात्त हो इस का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ बृहती । महती । बृहता । महता ॥

१६३--रैशब्दाच्च मतुप उदात्तत्वं वक्तव्यम् ॥ १७३ ॥

रै शब्द से परे मतुप् प्रत्यय उदात्त हो ॥ आरैवान् ॥

१६४--त्रेश्च प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ १७३ ॥

त्रिशब्द से परे मतुप् प्रत्यय उदात्त न हो॥ त्रिवतीर्याज्यानुवाक्या भवन्ति॥

१६५· सिचआद्युदात्तत्वेऽनिटः पितः पक्षउदात्तत्वंवाच्यम् १८४

सिच् के आद्युदात्त होने में पक्ष में अनिट् पित् सिजन्त को उदात्तत्व कहना चाहिये । माहि कार्षम् ।

१६६--सर्वस्वरोऽनकच्कस्येति वक्तव्यम् ॥ १८८ ॥

अकच् प्रत्यय रहित सर्व शब्द को आद्युदात्त हो सुप् परे हो तो यह कहना चाहिये । सर्वः ।सर्वौ।सर्वे । यहां नहीं होता कि--सर्वकः । चित्स्वर (२५९६) से अन्तोदात्त होता है ॥

७९७-चावतद्धित इति वक्तव्यम् ॥ २१९ ॥

तद्धित वर्जित चु परे हो तो पूर्वपद को अन्तोदात्त हो यह कहना चाहिये॥ दधीचः। तद्धित होने से यहां नहीं होता कि-दाधीचः। प्रत्ययस्वर एवात्रभवति ॥

इति षष्ठाध्यायस्य प्रथमपाद परिशेषः ॥

७९८ अव्यये नञ्कुनिपातानामिति वक्तव्यम् ॥२॥

तत्पुरुष समास में पूर्वपद अव्ययों के प्रकृति स्वर विधान में नञ्, कु और निपात को प्रकृतिस्वर हो ॥ अब्राह्मणः। कुब्राह्मणः। निष्कौशाम्बिः। यह वार्त्तिक अव्ययों का परिगणनरूप है किन्तु अपूर्व नहीं इससे यहां नहीं होता कि-स्नात्वा कालकः ॥

७९९-कुरुवृज्योर्गार्हपतइति वक्तव्यम् ॥ ४२ ॥

कुरुगार्हपत और वृजिगार्हपत में पूर्वपद प्रकृतिस्वर हो यह कहना चाहिये ॥ कुरुगार्हपतम्। वृजिगार्हपतम् ॥

८००-पण्यकम्बलः संज्ञायामिति वक्तव्यम् ॥४२॥

सञ्ज्ञा विषय में ही "पण्यकम्बल" शब्द में पूर्वपद प्रकृतिस्वर हो यह कहना चाहिये ॥ पण्यकम्बलः। अन्यत्र पण्यकम्बलः ॥ नियतप्रमाणो नियतमूल्यो व्यावहारिको यः कम्बलस्तस्य पण्यकम्बल इति संज्ञेत्याहुः ॥

८०१-द्वितीयाऽनुपसर्गइति वक्तव्यम् ॥४७॥

अहीनवाची समास में उपसर्गरहित पर पद हो तो द्वितीयान्त, पूर्वपद प्रकृतिस्वर हो यह कहना चाहिये ॥ ग्रामगतः। उपसर्ग होने से यहां नहीं होता कि-सुखप्राप्तः ॥

८०२-आद्युदात्तप्रकरणे दिवोदासादीनांछन्दस्युपसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥ ९१ ॥

छन्दोविषय में आद्युदात्त प्रकरण में दिवोदासादि शब्दों का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ दिवोदासाय गायते। वध्र्यश्वाय दाशुषे ॥

८०३-ऋषिप्रतिषेधो मित्रे ॥१६५॥

संज्ञा विषय में बहुव्रीहि समास में ऋषि वाच्य हो तो परपद मित्र के अन्त उदात्तत्व का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ विश्वामित्र ऋषिः ॥

८०४-अतेर्धातुलोपइति वक्तव्यम् ॥१९१॥

अति उपसर्ग से परे धातु लोप होने पर परपद अन्तोदात्त हो यह कहना चाहिये ॥ अतिक्रान्तोऽश्वा । अतिकारकः । इह माभूत्-शोभनो गार्ग्यः-अतिगार्ग्यः । अत्र धातुलोपाभावादन्तोदात्तो न भवति ॥

८०५-अन्तोदात्तप्रकरणे त्रिचक्रादीनां छन्दस्यु-पसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥१९९॥

छन्द में अन्तोदात्त प्रकरण में त्रिचक्रादि शब्दों का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ त्रिचक्रेण । त्रिबन्धुरेण । त्रिवृता रथेन ॥

८०६-पूर्वपदान्तोदात्तप्रकरणे मरुद्वृद्धादीनां छन्दस्युपसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥१९९॥

पूर्वपद के अन्तोदात्त प्रकरण में मरुद्वृद्धादि शब्दों का छन्दो विषय में उपसंख्यान करना चाहिये ॥ मरुद्वृद्धः ॥

इति षष्ठाध्यायस्य द्वितीयपाद-परिशेषः ॥

८०७-ब्राह्मणाच्छंसिन उपसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥२॥

ब्राह्मण शब्द से परे पञ्चमी का अलुक् हो शंसिन् शब्द उत्तरपद परे हो तो इस का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ ब्राह्मणाद्ब्रह्मस्वर्णमादाय शंसतीति ब्राह्मणाच्छंसी ॥

८०८-अञ्जसउपसंख्यानम् ॥ ३ ॥

अञ्जस् शब्द से परे तृतीया का अलुक् हो उत्तरपद परे हो तो ॥ अञ्जसाकृतम् ॥

८०९-पुंसानुजो जनुषान्धो विकृताक्षइति चोपसंख्यानम् ॥३॥

पुंसाऽनुजः, जनुषाऽन्धः विकृताक्षः, इन शब्दों में तृतीया के अलुक् का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ पुंसाहेतुनाऽनुजः । पुंसानुजः । इत्यादि ॥

८१० आत्मनेभाषपरस्मैभाषयोरुपसंख्यानं कर्तव्यम् ॥८॥

आत्मन् और पर शब्द से परे चतुर्थी का अलुक् हो भाष उत्तरपद परे हो तो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ आत्मनेभाषः । परस्मैभाषः । भाष्ये तु खण्डितमेतत् ॥

८११—हृद्द्युभ्यां ङेः ॥१०॥

हृद् और दिव् शब्द से परे ङि विभक्ति का अलुक् हो उत्तरपद परे हो तो ॥ हृदिस्पृक् । दिविस्पृक् ॥

८१२—अन्ताच्चेति वक्तव्यम् ॥११॥

अन्त शब्द से परे सप्तमी का अलुक् हो गुरु शब्द उत्तरपद परे हो तो यह कहना चाहिये । अन्तेगुरुः ॥

८१३—अपो योनियन्मतुषु सप्तम्या अलुग् वक्तव्यः ॥१८॥

अप् शब्द से परे सप्तमी का अलुक् कहना चाहिये योनि, यत् और मतुप् प्रत्यय परे हों तो । अप्सुयोनिः । अप्सव्यः । अप्सुमन्तौ ॥

८१४—षष्ठीप्रकरणेवाग्दिक्पश्यद्भ्यो युक्तिदण्डहरेषु यथासंख्यमलुग् वक्तव्यः ॥ २१ ॥

षष्ठी विभक्ति के प्रकरण में यथासंख्य युक्ति, दण्ड और हर शब्द परे हो तो वाच्, दिश् और पश्यत् शब्द से परे षष्ठी का अलुक् कहना चाहिये। वाचो युक्तिः । दिशोदण्डः । पश्यन्तमनादृत्यहरतीति—पश्यतोहरः । षष्ठी-चानादरइतिषष्ठी ॥

८१५—आमुष्यायणाऽऽमुष्यपुत्रिकाऽऽमुष्यकुलिकेति चाऽलुग्वक्तव्यः ॥ २१ ॥

आमुष्यायण, आमुष्यपुत्रिका और आमुष्यकुलिका इन शब्दों में षष्ठी विभक्ति का अलुक् कहना चाहिये॥ अमुष्याऽपत्यम् -आमुष्यायणः । अमुष्य पुत्रस्य भावः—आमुष्यपुत्रिका । अमुष्य कुलस्य भावः—आमुष्यकुलिका ॥

८१६-देवानांप्रियइत्यत्र षष्ठ्या अलुग् वक्तव्यः ॥ २१ ॥

प्रिय शब्द परे हो तो देव शब्द से परे षष्ठी विभक्ति के बहुवचन आम् का अलुक् कहना चाहिये ॥ देवानां प्रियः । मूर्खइत्यर्थः—ब्रह्मतत्त्वज्ञानरहिताः संसारिणः पण्डिताअपि यागाद्यनुष्ठानेन देवानां प्रीतिजनकास्ते च तत्त्वज्ञापेक्षया मूर्खाएव अत्यन्तमूढेषु प्रयोगस्तु गौणएव न तु मुख्यः ॥

८१७–शेपपुच्छलाङ्गूलेषु शुनः संज्ञायां षष्ठ्या अलुग् वक्तव्यः ॥ २१ ॥

संज्ञा विषय में शेप, पुच्छ और लाङ्गूल शब्द परे हों तो श्वन् शब्द से परे षष्ठी का अलुक् कहना चाहिये ॥ शुनःशेपः । शुनःपुच्छः । शुनोलाङ्गूलः ॥

८१८–दिवश्च दासे षष्ठ्या अलुग् वक्तव्यः ॥ २१ ॥

दिव् शब्द से दास शब्द परे हो तो षष्ठी का अलुक् कहना चाहिये ॥ दिवोदासाय गायति ॥

८१९–देवताद्वन्द्वे–उभयत्र वायोः प्रतिषेधः ॥ २६ ॥

देवताद्वन्द्व में वायु शब्द परे हो तो देवतावाची पूर्वपद को आनङ् आदेश न हो तथा देवतावाची उत्तरपद परे हो तो भी वायु शब्द को आनङ् आदेश न हो ॥ अग्निवायू । वाय्वग्नी ॥

८२०–इद्वृद्धौ विष्णोः प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ २८ ॥

कृतवृद्धि विष्णु शब्द परे हो तो अग्नि शब्द को इकार आदेश का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ आग्नावैष्णवं चरुं निर्वपेत् ॥

८२१–शसि बह्वल्पार्थस्य पुंवद्भावो वक्तव्यः ॥३५॥

शस् प्रत्यय परे हो तो स्त्री प्रत्ययान्त बह्वर्थ और अल्पार्थ शब्दों को पुंवद्भाव कहना चाहिये । बह्वीभ्यो देहि । बहुशो देहि । अल्पाभ्यो देहि । अल्पशो देहि ॥

८२२–त्वतलोर्गुणवचनस्य पुंवद्भावो वक्तव्यः ॥ ३५ ॥

त्व और तल् प्रत्यय परे हों तो गुणवाची शब्द को पुंवद्भाव कहना चाहिये ॥ पट्व्याभावः पटुत्वम् । पटुता ॥

८२३–भस्याऽढेतद्धिते पुंवद्भावो वक्तव्यः ॥ ३५ ॥

ढ प्रत्यय को छोड़कर तद्धित प्रत्यय परे हो तो भसंज्ञक स्त्री प्रत्यय को पुंवद्भाव कहना चाहिये ॥ हस्तिनीनां समूहो हास्तिकम् । अढइति किम् रौहिणेयः (१३७०) ॥

८२४–ठक्छसोश्च पुंवद्भावो वक्तव्यः ॥ ३५ ॥

ठक् और छस् प्रत्यय परे हों तो भी स्त्री प्रत्ययान्त शब्द को पुंवद्भाव कहना चाहिये ॥ भवत्याश्छात्रा भावत्काः । भवदीयाः ॥

८२५- कोपधप्रतिषेधे वुतद्धितग्रहणं कर्त्तव्यम् ॥ ३७ ॥

कोपध के प्रतिषेध में वु प्रत्यय और तद्धित के ककार का ग्रहण करना चाहिये ॥ कारिकाभार्यः । मद्रिकाभार्यः । तेनेह न—पाकभार्यः ॥

८२६- अयं प्रतिषेध औपसंख्यानिकस्य पुंवद्भावस्य नेष्यते ॥ ४१ ॥

अस्मानिन् परे हो तो जातिवाची स्त्री को पुंवद्भाव न हो यह प्रतिषेध औपसंख्यानिक पुंवद्भाव का इष्ट नहीं है ॥ तेनेह न—हस्तिनीनां समूहो हास्तिकम् ॥

८२७- कुक्कुट्यादीनामण्डादिषु पुंवद्भावो वक्तव्यः ॥ ४२ ॥

अण्डादि शब्द परे हों तो कुक्कुटी आदि शब्दों को पुंवद्भाव कहना चाहिये ॥ कुक्कुट्याः अण्डम्-कुक्कुटाण्डम् । मृग्याः पदम्-मृगपदम् । मृग्याः क्षीरम्-मृगक्षीरम् । काक्याः शावः-काकशावः ॥

८२८- पुंवद्भावाद्ध्रस्वत्वं खिद्घादिषु भवति विप्रतिषेधेन ॥ ४३ ॥

खित् और घादि प्रत्यय परे हों तो पुंवद्भाव से ह्रस्वत्व विप्रतिषेध से होता है ॥ खित्-कालिंमन्या । घादिषु पटि्वतरा पटि्वतमा । पटि्वरूपा । पटि्वकल्पा । के-पटि्वका । मृदि्वका ॥

८२९—कृन्नद्याः प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ४४ ॥

घादि प्रत्यय परे हों तो कृत् संज्ञक नदी को विकल्प से ह्रस्व होने का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ लक्ष्मीतरा । तन्त्रीतरा ॥

८३०—महदात्वे घासकरविशिष्टेषूपसंख्यानं पुंवद्वचनं चासमानाधिकरणार्थम् ॥ ४५ ॥

महत् शब्द के आत्व प्रकरण में घास, कर और विशिष्ट शब्द परे हों तो महत् शब्द को आकारादेश और पुंवद्भाव हो । यह विधान असमानाधिकरण के लिये है । महत्या घासः—महाघासः । महत्याः करः—महाकरः । महत्या विशिष्टः—महाविशिष्टः ॥

८३१—अष्टनः कपाले हविष्युपसंख्यानम् ॥ ४६ ॥

कपाल शब्द परे हो तो अष्टन् शब्द को आकारादेश का उपसंख्यान करना चाहिये यदि हविष् वाच्य हो तो ॥ अष्टाकपालं चरुं निर्वपेत् ॥

८३२ गवि च युक्तेऽष्टन उपसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥४६॥

युक्तार्थ में गो शब्द परे हो तो अष्टन् शब्द को आकारादेश का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ अष्टागवेन शकटेन । युक्तइति किम्—अष्टगवं ब्रिप्रस्य॥

८३३—प्राक्शतादिति वक्तव्यम् ॥ ४७ ॥

द्वि और अष्टन् शब्द को आकारादेश शत शब्द से पूर्व ही हो यह कहना चाहिये ॥ इहमाभूत्—द्विशतम् । द्विसहस्रम् । अष्टशतम् । अष्टसहस्रम् ॥

८३४—प्राक्शतादिति वक्तव्यम् ॥ ४८ ॥

त्रि शब्द को त्रयस् आदेश शतसंख्या से पूर्व ही हो यह कहना चाहिये। इह माभूत्—त्रिशतम् । त्रिसहस्रम् ॥

८३५—प्राक्शतादिति वक्तव्यम् ॥ ४९ ॥

द्वि, अष्टन् और त्रि शब्द को जो पूर्व आदेश विधान विकल्प से कहा है वह शतसंख्या से पूर्व ही हो यह कहना चाहिये ॥ इहमाभूत्—द्विशतम् । अष्टशतम् । त्रिशतम् ॥

८३६—पद्भावे इके चरतावुपसंख्यानम् ॥ ५३ ॥

पद्भाव प्रकरण में चरति अर्थ में विहित इक प्रत्यय परे हो तो पाद शब्द को पद् आदेश का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ पादाभ्यां चरति—पदिकः॥

८३७—निष्के चोपसंख्यानम् ॥ ५६ ॥

निष्क शब्द परे हो तो पाद शब्द को पद् आदेश विकल्प से हो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ पन्निष्कः । पादनिष्कः ॥

८३८—संज्ञायामुत्तरपदस्योदकशब्दस्य—उदादेशो भवतीति वक्तव्यम् ॥ ५७ ॥

संज्ञा विषय में उत्तरपद उदक शब्द को उद आदेश हो यह कहना चाहिये ॥ लोहितोदः । नीलोदः । क्षीरोदः ॥

८३९—इयङुवङ्व्ययप्रतिषेधः ॥ ६१ ॥

उत्तरपद परे हो तो इयङ् और उवङ् भावी शब्द तथा अव्ययों को गालव आचार्य के मत से ह्रस्व विधान का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ श्रीकुलम् । भ्रूकुलम् । काण्डीभूतम् ॥

८४०—अभ्रूकुंसादीनामिति वक्तव्यम् ॥ ६१ ॥

परन्तु भ्रूकुंसादि शब्दों को छोड़ कर ह्रस्वत्व का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ इस से यहां ह्रस्व होता है कि—भ्रुकुंसः । भ्रुकुटिः ॥

८४१- अपरआह । भ्रूकुंसादीनामकारो भवतीति वक्तव्यम् । ६१ ।

दूसरे आचार्य्य कहते हैं कि भ्रूकुंसादि शब्दों को अकारादेश हो यह कहना चाहिये ॥ भ्रकुंसः । भ्रकुटिः ॥

८४२- अस्तुसत्यागदस्य कारइति वक्तव्यम् । ७० ।

कार शब्द उत्तरपद परे हो तो अस्तु, सत्य और अगद शब्द को मुम् आगम हो यह कहना चाहिये ॥ अस्तुंकारः । सत्यंकारः । अगदंकारः ॥

८४३- भक्षस्यच्छन्दसि कारे मुम् वक्तव्यः । ७० ।

छन्दो विषय में कार शब्द परे हो तो भक्ष शब्द को मुम् आगम कहना चाहिये ॥ भक्षं करोतीति भक्षस्य वा कारः—भक्षंकारः ॥

८४४- धेनोर्भव्यायां मुम् वक्तव्यः ॥ ७० ॥

भव्या शब्द परे हो तो धेनु शब्द को मुम् आगम हो यह कहना चाहिये ॥ धेनुंभव्या ॥

८४५- लोकस्य पृणे ॥ ७० ॥

पृण शब्द परे हो तो लोक शब्द को मुम् आगम हो ॥ लोकम्पृणस्य धन्विनः ॥

८४६- इत्येऽनभ्याशस्य ॥ ७० ॥

इत्य शब्द परे हो तो अनभ्याश शब्द को मुम् आगम हो ॥ अनभ्याशमित्यः । दूरादेव परिहर्त्तव्य इत्यर्थः ॥

८४७ भ्राष्ट्राग्न्योरिन्धे ॥ ७० ॥

इन्ध शब्द उत्तरपद परे हो तो भ्राष्ट्र और अग्नि शब्द को मुम् आगम हो यह कहना चाहिये ॥ भ्राष्ट्रमिन्धः । अग्निमिन्धः ॥

८४८- गिलेऽगिलस्य ॥ ७० ॥

गिल शब्द उत्तरपद परे हो तो गिल वर्जित पूर्वपद को मुम् आगम हो यह कहना चाहिये ॥ तिमिंगिलः । अगिलस्येतिकिम्—गिलगिलः ॥

८४९-गिलगिले च ॥ ७० ॥

गिलगिल उत्तरपद परे हो तो पूर्वपद को मुम् आगम हो ॥ तिमिंगिलगिलः ॥

८५०-उष्णभद्रयोः करणे ॥ ७० ॥

करण शब्द उत्तरपद परे हो तो उष्ण और भद्र शब्द को मुम् आगम हो यह कहना चाहिये ॥ उष्णं करणम् । भद्रं करणम् ॥

८५१-सूतोग्रराजभोजकुलमेरुभ्यो दुहितुः पुत्रड्वा ॥ ७० ॥

सूत, उग्र, राजन्, भोज, कुल और मेरु शब्द से परे दुहितृ शब्द को पुत्रट् आदेश विकल्प से कहना चाहिये॥ सूतपुत्री । सूतदुहिता।उग्रपुत्री । उग्रदुहिता । राजपुत्री । राजदुहिता । भोजपुत्री । भोजदुहिता । कुलपुत्री । कुलदुहिता । मेरुपुत्री । मेरुदुहिता ॥

८५२-केचित्तु शार्ङ्गरवादिषु पुत्रशब्दं पठन्ति । ७० ॥

कोई आचार्य तो पुत्र शब्द को शार्ङ्गरवादि गण में पढ़ते हैं इस से पुत्री शब्द सिद्ध हो जावेगा ॥ पुत्री ॥

८५३--अन्यत्रापि हि दृश्यते ॥ ७० ॥

उक्त से अन्यत्र भी पूर्वपद से परे दुहितृ शब्द को पुत्रट् आदेश विकल्पसे होता हुआ दीख पड़ता है ॥ यथा—शैलपुत्री ॥

८५४--नञो नलोपोऽवक्षेपे तिङ्युपसंख्यानम् ॥ ७३ ॥

अवक्षेप अर्थ में तिङ् उत्तरपद परे हो तो नञ् के न लोप का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ अपचसि त्वं जाल्म । अकरोषि त्वं जाल्म ॥

८५५ -दृक्षे चेति वक्तव्यम् ॥ ८९ ॥

दृक्ष शब्द उत्तरपद परे हो तो समान शब्द को स आदेश हो यह कहना चाहिये ॥ सदृक्षः ॥

८५६ दृक्षे चेति वक्तव्यम् ॥ ९० ॥

दृक्ष शब्द उत्तरपद परे हो तो इदम् और किम् शब्द को यथासंख्य ईश् और की आदेश हो यह कहना चाहिये ॥ ईदृक्षः । कीदृक्षः ॥

८५७--दृक्षे चेति वक्तव्यम् ॥ ९१ ॥

दृक्ष शब्द उत्तरपद परे हो तो सर्वनाम संज्ञक शब्दों को आकारादेश हो यह कहना चाहिये ॥ यादृक्षः । तादृक्षः ॥

८५८--अद्रिसध्र्योरन्तोदात्तवचनं कृत्स्वरनिवृत्त्यर्थम् ॥ ९२ ॥

अद्रि और सध्रि आदेश अन्तोदात्त इस लिये हों कि कृत्स्वर निवृत्त हो जावे ॥ विष्वद्र्यङ् । सध्र्यङ् । तेनान्तोदात्तनिवृत्तिस्वरेण (३६८५) स्वरितत्वम् ॥

८५९--छन्दसि स्त्रियां बहुलमिति वक्तव्यम् ॥ ९३ ॥

छन्दो विषय में स्त्रीवाच्य हो तो विष्वक्, देव और सर्वनाम के टि को अद्रिआदेश बाहुल्य से हो अप्रत्ययान्त अञ्चति परे हो तो यह कहना चाहिये॥ विश्वाची च घृताची चेत्यत्र न भवति । कद्रीची-इत्यत्र तु भवत्येव ।

८६०--समापईत्वप्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ९७ ॥

समाप शब्द में ईकारत्व का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ समापं नाम देवयजनम् ॥

८६१--अपर आह-ईत्वमनवर्णादिति वक्तव्यम् ॥ ९७ ॥

दूसरे आचार्य कहते हैं कि अनवर्णान्त से परे अप् शब्द को ईकारादेश हो यह कहना चाहिये ॥ समापम् । इहनाभूत्-प्रापम् । परापम् ॥

८६२-दुगागमोऽविशेषेण, वक्तव्यः कारकच्छयोः । षष्ठीतृतीययोर्नेष्ट-आशीरादिषु सप्तसु ॥ ९९ ॥

कारक और छ प्रत्यय परे हों तो सामान्य से अन्य शब्द को दुक् आगम हो यह कहना चाहिये परन्तु आशीरादि सात शब्द उत्तरपद परे हों तो षष्ठीस्थ तथा तृतीयास्थ अन्य शब्द को दुक् आगम इष्ट नहीं है ॥ अन्यस्य कारकमन्यत्कारकम् । अन्यस्येदम्-अन्यदीयम् ।

८६३-कद्भावे त्रावुपसंख्यानम् ॥ १०१ ॥

कद्भाव प्रकरण में त्रि शब्द उत्तरपद परे हो तो कु शब्द को कत् आदेश होने का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ कुत्सितास्त्रयः-कत्त्रयः । के वा त्रयो न विदुः कत्त्रयइति ॥

८६४-दिक्शब्देभ्यस्तीरस्य तारभावो वा ॥ १०९ ॥

दिग्वाची शब्दों से परे तीर शब्द को तार आदेश विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ दक्षिणतारम् । दक्षिणतीरम् । उत्तरतारम् । उत्तरतीरम् ॥

८६५- वाचो वादे डत्वं च लभावश्चोत्तरपदस्येञि ॥ १०९ ॥

इञ् प्रत्यय में वाद शब्द परे हो तो वाच् शब्द को डत्व और उत्तरपद वाद शब्द को लत्व हो ॥ वाचं वदतीति-वाग्वादः-तस्यापत्यं-वाड्बालिः ॥

८६६—षषउत्वं दतृदशसूत्तरपदादेः ष्टुत्वं च ॥ १०९ ॥

दतृ और दशन् शब्द परे हों तो षष् शब्द को उकारादेश और उत्तरपद के आदि को ष्टुत्व हो ॥ षड् दन्ता अस्य-षोडन् । षट् च दश च-षोडश ॥

८६७--धासु वा ॥ १०९

धा प्रत्यय परे हो तो षष् शब्द को उत्व और उत्तरपद के आदि को ष्टुत्व विकल्प से हो ॥ षोढा । षड्धा कुरु ॥

८६८--दुरोदाशनाशदभध्येषूत्वमुत्तरपदादेश्च ष्टुत्वम् ॥ १०९ ॥

दाश, नाश, दभ और ध्य शब्द परे हों तो दुर् शब्द को उत्व और उत्तरपदों के आदि को ष्टुत्व हो यह कहना चाहिये ॥ कृच्छ्रेण दाश्यते दभ्यते च यः स-दूडाशः । दूणाशः । दूडभः । दुष्टं ध्यायतीति-दूढ्यः ॥

८६९--स्वरो रोहतौ छन्दस्युत्वम् ॥ १०९ ॥

रोहति धातु का कोई भी रूप परे हो तो स्वर् शब्द को उकारादेश हो छन्दो विषय में ॥ एहि त्व जाये स्वो रोहाव ॥

८७० -पीवोपवसनादीनां छन्दसि लोपः ॥ १०९ ॥

छन्दो विषय में पीवोपवसनादि शब्दों के सकारादि का लोप हो यह कहना चाहिये ॥ पीवोपवसनानाम् । पयोपवमनानाम् । पीवस् पयस् इत्येतयोः सलोपः । श्रिये-इदम् । इति स्थित्यां श्रियेदम् इत्यत्रैकारलोपो बोध्यः ॥

८७१ -वर्णागमो वर्णविपर्ययश्च, द्वौ चापरौ वर्णविकारनाशौ धातोस्तदर्थातिशयेनयोगस्तदुच्यते पञ्चविधंनिरुक्तम् ॥१०९॥

१ वर्णागम । २-वर्णविपर्यय । ३-वर्णविकार । ४-वर्णनाश और ५-धातु का धातु के अर्थातिशय के साथ योग । यह पांच प्रकार का निरुक्त (निर्वचन) पृषोदरादि में कहा जाता है ॥

८७२--अपील्वादीनामिति वक्तव्यम् ॥ १२१ ॥

पील्वादि को छोड़ कर इगन्त पूर्वपद को दीर्घ हो वह शब्द उत्तर-पद परे हो तो ॥ इहापि भाभूत्-रुचिवहम् । चारुवहम् ॥

८७३-शुनो दन्तदंष्ट्राकर्णकुन्दवराहपुच्छपदेषु ॥१६७॥

दन्त, दंष्ट्रा, कर्ण, कुन्द, वराह, पुच्छ और पद शब्द उत्तरपद परे हों तो श्वन् शब्द को दीर्घ हो ॥ शुनइव दन्ता यस्य-श्वादन्तः। श्वादंष्ट्रः। श्वाकर्णः। श्वाकुन्दः। श्वावराहः। श्वापुच्छः। श्वापदः॥

इति पाणिनीयाष्टकषष्ठाध्यायतृतीय-पादस्य परिशेषः ॥

८७४-वुग्युटावुवङ्यणोः सिद्धौ वक्तव्यौ ॥२२॥

उवङ् और यण् की प्राप्ति में वुक् और युट् आगम सिद्ध कहने चाहिये॥ उवङादेशे वुक्-बभूव। यणादेशे युट्-उपदिदीये॥

८७५-अनिदितां नलोपे लङ्गिकम्प्योरुपतापशरीरयोरुप-संख्यानम् ॥ २४ ॥

अनिदित् अङ्गों के नलोपप्रकरण में लङ्गि और कम्पि अङ्गों की उपधा नकार का लोप हो यथासंख्य उपताप और शरीर अभिधेय हों तो॥ विलगितः। विकपितः॥

८७६-रञ्जेर्णौ मृगरमणउपसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥ २४ ॥

मृगरमण वाच्य हो तो रञ्जि अङ्ग की उपधा नकार के लोप का उपसंख्यान करना चाहिये यदि णिच् प्रत्यय परे हो तो ॥ रजयति मृगान्॥

८७७-घिनुणि च ॥ २४ ॥

घिनुण् प्रत्यय परे हो तो रञ्जि अङ्ग की उपधा नकार का लोप हो ॥रागी॥

८७८-रजकरजनरजःसूपसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥२४॥

रजक, रजन और रजस् शब्द में उपधा नकार के लोप का उपसंख्यान करना चाहिये॥ रजकः। रजनम्। रजः॥

८७९-क्वौ च शासइत्वं भवतीति वक्तव्यम् ॥३४॥

क्विप् प्रत्यय परे हो तो शास् धातु की उपधा को इकारादेश हो यह कहना चाहिये ॥ आर्यान् शास्तीति-आर्यशीः । मित्रशीः ॥

८८०-गमादीनामिति वक्तव्यम् ॥ ४० ॥

क्विप् प्रत्यय परे हो तो गमादि अङ्गों के अनुनासिक का लोप हो यह कहना चाहिये ॥ अङ्गगत् । संयत् । परीतत् ॥

८८१-ऊङ् च ॥ ४१ ॥

क्विप् प्रत्यय परे हो तो गमादि अङ्गों के अनुनासिक का लोप और गमादि अङ्गों को ऊङ् आदेश हो यह कहना चाहिये ॥ अग्रेगूः । अग्रेभ्रूः ॥

८८२-वृद्धिदीर्घाभ्यामतोलोपः पूर्वविप्रतिषेधेन ॥४८॥

वृद्धि और दीर्घ से अत् लोप पूर्वविप्रतिषेध से होता है ॥ चिकीर्षकः । जिहीर्षकः । चिकीर्ष्यते । जिहीर्ष्यते ॥

८८३-इयङुवङ्प्रकरणे तन्वादीनां छन्दसि बहुलम् ॥७७॥

इयङ् और उवङ् के प्रकरण में छन्दो विषय होने पर तनु आदि शब्दों को बाहुल्य से इयङ् और उवङ् आदेश हो ॥ तन्वं पुषेम । तनुवं पुषेम । विष्वं पुषेम । विषुवं पुषेम । स्वर्गो लोकः । सुवर्गो लोकः । त्र्यम्बकं यजामहे । त्रियम्बकं यजामहे ॥

८८४-गतिकारकाभ्यामन्यपूर्वस्य नेष्यते ॥८२॥

गति और कारक से भिन्न पूर्वपद वाले को यण् इष्ट नहीं है ॥ परमनियौ । परमनियः ॥

८८५-दृन्कारपुनःपूर्वस्य भुवइति वक्तव्यम् ॥ ८४ ॥

दृन्, कार और पुनर् शब्द जिस के पूर्व हों ऐसे भू शब्द को यणादेश हो यह कहना चाहिये ॥ दृन्भ्वौ । दृन्भ्वः । कारभ्वौ । कारभ्वः । पुनर्भ्वौ । पुनर्भ्वः ॥

८८६-अद्विप्रभृत्युपसर्गस्येति वक्तव्यम् ॥ ९६ ॥

दो उपसर्गों से लेके उपसर्ग जिस के पूर्व न हों ऐसे छादि अङ्ग की उपधा को ह्रस्व हो घ प्रत्यय परे हो तो यह कहना चाहिये ॥ तेनेह न-समुपच्छादः । समुपातिच्छादः ॥

८८७--दरिद्रातेरार्धधातुके लोपो वक्तव्यः ॥ ११४ ॥

सिद्धश्च प्रत्ययविधौ ॥ ११४ ॥

आर्धधातुक विषय में दरिद्रा धातु का लोप कहना चाहिये ॥ और वह लोप प्रत्ययविधि में सिद्ध है । दरिद्रातीति–दरिद्रः । आकारान्त लक्षण से ण प्रत्यय नहीं होता किन्तु पचादित्व से अच् प्रत्यय ही होता है ॥

८८८–नदरिद्रायकेलोपो, दरिद्राणेचनेष्यते ।

दिदरिद्रासतीत्येके, दिदरिद्रिषतीतिवा ॥ ११४ ॥

दरिद्रायक और दरिद्राण में दरिद्रा धातु के आकार का लोप इष्ट नहीं है । कोई आचार्य "दिदरिद्रासति" इस शब्द में उक्त धातु के आकारलोप को नहीं चाहते और कोई आचार्य तो आकार का लोप करके "दिदरिद्रिषति" ऐसा प्रयोग शुद्ध मानते हैं ॥

८८९–अद्यतन्यां वा ॥ ११४ ॥

लुङ् लकार में दरिद्रा धातु के आकार का लोप विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ अदरिद्रीत् । अदरिद्रासीत् ॥

८९०--दम्भेरेत्वं वक्तव्यम् ॥१२०॥

दम्भ् धातु को एकारादेश और अभ्यास का लोप हो कित ङित् लिट् परे हो तो ॥ देभतुः । देभुः ॥

८९१–नशिमन्योरलिट्येत्वम् ॥ १२० ॥

लिट् न परे हो तो नशि और मन्य धातु को एत्व हो ॥ अनेशम् । नशेर्लुङि रूपम् । मेनका । मनेराशिषि चेति वुन् ॥

८९२–छन्दस्यमिपचोरप्यलिटि एत्वं वक्तव्यम् ॥ १२० ॥

छन्दो विषय में लिट् न परे हो तो अमि और पच् धातु को एत्व कहना चाहिये ॥ अेमानम् । अमतेर्विपूर्वात्ताच्छील्यादिषु चानश्छान्दसः शपो लुक् । पेचिरन् । पचेरलिटि प्राप्ते । छान्द से एत्वहस्वत्वे ॥

८९३–यजिवप्योश्च ॥ १२० ॥

छन्दो विषय में लिट् न परे हो तो यज और वप धातु को एत्व हो यह कहना चाहिये ॥ आयेजे । आवेपे ॥

८९४-श्रन्थेश्चेति वक्तव्यम् ॥ १२२ ॥

श्रन्थ अङ्ग के अत् को एत्त्व और अभ्यास का लोप हो क्ङित् लिट् और सेट् थल् परे हो तो यह कहना चाहिये । श्रेथतुः । श्रेथुः ॥

८९५-वसुसंप्रसारणे क्वसोरपि ग्रहणमिष्यते ॥ १३१ ॥

वसु के संप्रसारणप्रकरण में क्वसु प्रत्यय का ग्रहण भी इष्ट है ॥ पेचुषः पश्य ॥

८९६-आङोऽन्यत्रापि च्छन्दसि लोपो दृश्यते ॥ १४१ ॥

छन्दो विषय में आङ् से अन्यत्र भी आत्मन् शब्द के आदि का लोप दीख पड़ता है ॥ त्मन्या समञ्जन् मद्यम् । त्मनो रन्तरस्त्वइति ॥

८९७--नान्तस्य टिलोपे सब्रह्मचारिपीठसर्पिकलापिकौथुमितैतिलिजाजलिलाङ्गलिशिलालिशिखण्डिसूकरसद्मसुपर्वणामुपसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥ १४४ ॥

नान्त शब्दों के टिलोप प्रकरण में सब्रह्मचारिन् आदि शब्दों का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ सब्रह्मचारिण इमे सब्रह्मचाराः । पैठसर्पाः । कालापाः । कौथुमाः । तैतिलाः । जाजलाः । लाङ्गलाः । शैलालाः । शैखण्डाः । सौकरसद्माः । सौपर्वाः ॥

८९८--चर्मणः कोशे ॥ १४४ ॥

भसंज्ञक चर्मन् शब्द की टि का लोप हो कोश वाच्य हो तो तद्धित परे होने पर ॥ चर्मणोऽयं चार्म्मः कोशः । कोशादन्यत्र-चार्मणः ।

८९९-अश्मनो विकार उपसंख्यानम् ॥ १४५ ॥

भसंज्ञक अश्मन् शब्द के टिभाग का लोप हो विकार अर्थ में तद्धित परे हो तो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ अश्मनो विकार-आश्मः । आश्मनोऽन्यत्र ।

९००-शुनः संकोचे ॥ १४४ ॥

भसंज्ञक श्वन् शब्द के टिभाग का लोप हो तद्धित परे हो तो संकोच की वाच्यता में ॥ शौवः संकोचः ॥ शौवनोऽन्यत्र ॥

९०१-अव्ययानां च सायंप्रातिकाद्यर्थम् ॥ १४४ ॥

सायंप्रातिक आदि शब्दों की सिद्धि के लिये अव्ययों के टिलोप का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ सायम्प्रातर्भवः —सायंप्रातिकः । पौनः पुनिकः । शाश्वः । कौतस्कुतः ॥

९०२—शाश्वतिकादिषु प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ १४४ ॥

शाश्वतिक आदि शब्दों में टिलोप का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ शाश्वतिकः । आरातीयः । शाश्वतम् ॥

९०३—सायंप्रातिकादिषु ल्युट्युलौ नेष्येते ॥१४४॥

सायंप्रातिकादि शब्दों में "कालाट्ठञ्" इस से ठञ् प्रत्यय तो होता ही है परन्तु अव्यय होने से ल्युट्युल् प्रत्यय प्राप्त होते हैं वे इष्ट नहीं हैं॥ शाश्वतिकः॥

९०४—यस्येत्यौङः श्यां प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ १४८ ॥

औङ् की शी परे हो तो इवर्ण अवर्ण के लोप का प्रतिषेध कहना चाहिये॥ काण्डे । कुड्ये । सौर्ये ॥

९०५—इयङुवङ्भ्यां लोपो भवति विप्रतिषेधेन ॥१४८॥

इयङ् और उवङ् को बाध कर विप्रतिषेध से लोप होता है ।वत्सान् प्रीणातीति—वत्सप्रीः—तस्यापत्यम्—वात्सप्रेयः।चतुष्पाद्भ्यो ढञ् इति ढञ् प्रत्ययः । लेखाभ्रूः शुभ्रादिः । तस्यापत्यं—लैखाभ्रेयः ॥

९०६—मत्स्यस्य ङ्यामिति वक्तव्यम् ॥१४९॥

मत्स्य शब्द की उपधा यकार का लोप हो ङी प्रत्यय परे हो तो यह कहना चाहिये । मत्सी ॥ इह माभूत्—मत्स्यस्येदं मांसं मात्स्यम् ॥

९०७—सूर्यागस्त्ययोश्छे च ङ्यां च ॥ १४९ ॥

छ और ङी प्रत्यय परे हों तो सूर्य और अगस्त्य शब्द की उपधा यकार का लोप हो यह कहना चाहिये ॥ सौरीयः । सौरी । अगस्तीयः । अगस्ती । इह माभूत्—सौर्यं चरुं निर्वपेत् । आगस्त्यः ॥

९०८—तिष्यपुष्ययोर्नक्षत्राणि ॥ १४९ ॥

नक्षत्र सम्बन्धी अण् प्रत्यय परे हो तो तिष्य और पुष्य शब्द की उपधा यकार का लोप हो यह कहना चाहिये॥तिष्येण नक्षत्रेण युक्तः कालः—तैषः । पुष्येण नक्षत्रेण युक्तः कालः—पौषः ॥

९०९—अन्तिकस्य तसि कादिलोपश्चाद्युदात्तत्वं च ॥ १४९ ॥

तस् प्रत्यय परे हो तो अन्तिक शब्द के ककारादि भाग का लोप और उस को आद्युदात्तता हो ॥ अन्तितो न दूरात् ।

९१०—तमे तादेश्च ॥ १४९ ॥

तम प्रत्यय परे हो तो अन्तिक शब्द के तकारादि भाग और ककारादि भाग का लोप हो यह कहना चाहिये ॥ अग्ने त्वं नो अन्तमः । अन्तितमे अवरोहति ॥

९११—कादिलोपे बहुलमिति वक्तव्यम् ॥ १४९ ॥

कादिलोप प्रकरण में बाहुल्य हो यह कहना चाहिये क्योंकिः—

९१२—अन्यत्रापि हि दृश्यते ॥ १४९ ॥

अन्यत्र उत्तरपद परे हो तो अन्तिक शब्द के कादि भाग का लोप दीख पड़ता है ॥ अन्तिषत् । अन्तिके सीदतीत्यर्थः ॥

९१३—ये च ॥ १४९ ॥

अथर्ववेद में य प्रत्यय परे हो तो अन्तिक शब्द के ककारादि भाग का लोप हो ॥ अन्तियः ॥

९१४—णाविष्ठवत्प्रातिपदिकस्य ॥ १५४ ॥

इष्ठन् प्रत्यय परे हो तो जो २ कार्य्य होते हैं उसी प्रकार णि प्रत्यय परे होने पर वे २ सब कार्य्य हों ॥ वे कार्य्य ये हैं:—

९१५—णाविष्ठवत्प्रातिपदिकस्य पुंवद्भावरभावटिलोपयणादिपरप्रादिविन्मतोर्लुक्कन्विध्यर्थमिति ॥ १५५ ॥

जैसे इष्ठन् प्रत्यय परे होने पर प्रातिपदिक को पुंवद्भावादि कार्य्य होते हैं वैसे ही णि प्रत्यय परे हो तो प्रातिपदिक को पुंवद्भाव, रभाव, टिलोप, यणादि पर लोप, प्रादि आदेश, विन् मतुप् का लुक् और कन् आदेश हो ॥ पुंवद्भावः—एनीमाचष्टे (२८९०) एतयति । रभावः—पृथुमाचष्टे (३१५५) प्रथयति । टिलोपः (३१४९) पटुमाचष्टे—पटयति । यणादि परलोपः (३१५०) स्थूलमाचष्टे—स्थवयति । प्रादयः (३१५१) प्रियमाचष्टे— प्रापयति । विनो-

लुक् (२२२२) स्रग्विणमाचष्टे—स्रजयति । मतुपोलुक् (२२२२) वसुमन्तमाचष्टे— वसयति । युवानमाचष्टे (२२२१) कनयति । यवयति ॥

९१६—प्रकृत्याऽके राजन्यमनुष्ययुवानः ॥ १६३ ॥

अक प्रत्यय परे हो तो राजन्य, मनुष्य और युवन् शब्द प्रकृति से रहें ॥ राजन्यानां समूहो-राजन्यकम् । (१४६५) मनुष्याणां समूहो—मानुष्यकम् । यूनो भावो यौवनिका ॥

९१७—मपूर्वप्रतिषेधे वा हितनाम्नः ॥ १७० ॥

अपत्यार्थ में मपूर्वप्रतिषेध में हितनामन् शब्द का मपूर्व अन् विकल्प कर के प्रकृति से न रहे ॥ हितनाम्नोऽपत्यं—हैतनामः । हैतनामनः ॥

इति षष्ठाध्यायस्य चतुर्थपाद—परिशेषः॥

अध्यायश्च समाप्तः ॥

९१८—जॄविशिभ्यां झच् ॥ ३ ॥

जॄ और विश धातुसे परे झ प्रत्यय को झच् आदेश हो । चित् होने से प्रत्ययाद्युदात्तत्व नहीं होता है जरन्तः । वेशन्तः ॥

९१९—तिङांचतिङो भवन्तीति वक्तव्यम्॥३९॥

तिङों के स्थान में तिङ् आदेश हों यह कहना चाहिये॥ चषालं ये अश्वयूपाय तक्षति । तक्षन्तीति प्राप्ते ।

९२०—सुपां च सुपो भवन्तीति वक्तव्यम्॥ ३९ ॥

सुपों के स्थान में सुप् आदेश हों यह कहना चाहिये ॥ धुरि दक्षिणायाः । दक्षिणायामिति प्राप्ते ॥

९२१—आङयाजयारामुपसंख्यानम्॥३९॥

छन्दो विषय में सुपोंके स्थान में आङ्, अयाच् और अयार् प्रत्ययका उपसंख्यान करना चाहिये ॥ आङ् । प्रबाहवा। प्रबाहुनेति प्राप्ते । अयाच् । स्वप्नयाव-सेचनम् । स्वप्नेनेति प्राप्ते । अयार् ।सन : सिन्धु मिव नावया । नावेतिप्राप्ते ॥

९२२—इयाडियाजीकाराणामुपसंख्यानम् ॥ ३९ ॥

छन्दोविषय में सुपों के स्थान में इया,डियाच् और ईकार प्रत्यय का उपसं-

ध्यान करना चाहिये ॥ इया । उर्विया परिज्मन् । दार्विया । ड्रियाद् । सुक्षे-त्रिया । सुगात्रिया सुक्षेत्रिणा । सुगात्रिणेति प्राप्ते । ईकारः । दृतिं न शुष्कं सरसी शयानम् । सरसि शयानमिति प्राप्ते ॥

९२३–अश्ववृषयोर्मैथुनेच्छायामिति वक्तव्यम् ॥ ५१ ॥

अश्व और वृष शब्द को असुक् आगम हो क्यच् प्रत्यय परे हो तो मैथुनेच्छा में यह कहना चाहिये ॥ अश्वस्यति वडवा । वृषस्यति गौः (६२७) ॥

९२४– क्षीरलवणयोर्लालसायामिति वक्तव्यम् ॥ ५१ ॥

लालसा अर्थ में क्षीर और लवण शब्द को असुक् आगम हो क्यच् प्रत्यय परे हो तो यह कहना चाहिये ॥ क्षीरस्यति माणवकः । लवणस्यत्युष्ट्रः । अन्यत्रात्मप्रीतावपि न भवति । क्षीरीयति । लवणीयति ॥

९२५–अपरआह—सर्वप्रातिपदिकेभ्यो लालसायामिति वक्तव्यम् ॥ ५१ ॥

दूसरे आचार्य्य कहते हैं कि–सर्व प्रातिपदिकों से लालसा अर्थ में असुक् आगम हो क्यच् प्रत्यय परे हो तो यह कहना चाहिये ॥ दधीच्छसि दध्यस्यति । मध्वस्यति ॥

९२६–अपरआह–सुग् वक्तव्यः ॥ ५१ ॥

कोई आचार्य्य कहते हैं कि–सर्व प्रातिपदिकों से लालसा अर्थ में क्यच् प्रत्यय परे हो तो सुक् आगम कहना चाहिये ॥ दधिस्यति । मधुस्यति ॥

९२७–शे तृम्फादीनाम् ॥ ६९ ॥

श प्रत्यय परे हो तो तृम्फादि धातुओं को नुम् आगम हो । तृम्फति । तृम्फति ॥

९२८— मस्जेरन्त्यात्पूर्वो नुम् वक्तव्यः ॥ ६०

मस्ज् धातु के अन्त्य अक्षर जकार से पूर्व नुम् आगम कहना चाहिये यह (मिदचोऽन्त्यात्परः) का अपवाद है ॥ मङ्क्ता ॥

९२९–बहूर्जि प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ७२ ॥

सर्वनाम स्थान परे हो तो" बहूर्ज्" झलन्त नपुंसक को नुम् आगम न हो ॥ बहूर्जि ब्राह्मणकुलानि ॥

९३०—अन्त्यात्पूर्वं नुममेक इच्छन्ति ॥ ७२ ॥

कोई आचार्य—फलन्त नपुंसक बहूर्ज् शब्द में अन्त्य अक्षर से पूर्व नुम् को चाहते हैं ॥ बहूर्ञ्जि ब्राह्मणकुलानि ॥

९३१—उशनसः संबुद्धौ वाऽनङ् नलोपश्च वा वाच्यः ॥ ९४ ॥

संबुद्धि परे होते उशनस् शब्द को अनङ् आदेश विकल्प से हो । और अनङ् आदेश के पक्ष में संबुद्धि परे हो तो नकार का लोप विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ हे उशनन् । हे उशन । हे उशनः ॥ तथा चोक्तम्—

९३२—सम्बोधनेतूशनसस्त्रिरूपं, सान्तंतथानान्तमथाप्यदन्तम् ।
माध्यन्दिनिर्वष्टिगुणं त्विगन्ते, नपुंसकेव्याघ्रपदांवरिष्ठः ॥९४॥

संबुद्धि में उशनस् शब्द के तीन रूप होते हैं १—सान्त २—नान्त और ३—अदन्त । माध्यन्दिनि आचार्य जो व्याघ्रपदों में श्रेष्ठ हैं वे इगन्त नपुंसक शब्दों में गुण को चाहते हैं ॥ उशनस् के रूप कहदिये । इगन्त नपुंसके गुणः हे वारे । हे वारि ॥

९३३—नुमचिरतृज्वद्भावेभ्यो नुट् पूर्वविप्रतिषेधेन ॥ ९७ ॥

अच् परे हो तो नुम्, रभाव और तृज्वद्भाव से नुट् (३२२३) पूर्व विप्रतिषेध से होता है ॥ नुमचि (३२४१) वारीणाम् । रभावः (३३७२) । तिसृणाम् । तृज्वद्भावः (३२६४) क्रोष्टूनाम् ॥

९३४—वृद्ध्यौत्वतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम्पूर्वविप्रतिषेधेन ॥ ९७ ॥

वृद्धि, औत्व, तृज्वद्भाव और गुण से नुम् पूर्व विप्रतिषेध से होता है ॥ वृद्धिः—अतिसखीनि । औत्वम्—वारिणि । तृज्वद्भावः—अतिक्रोष्टूनि । गुणः—वारिणे । इन सब प्रयोगों में वृद्धि आदि को बाध कर नुम् ही होता है ॥

इति सप्तमाध्यायस्यप्रथमपादपरिशेषः ॥

९३५—तितुत्रेष्वग्रहादीनामिति वक्तव्यम् ॥ ९ ॥

ति,तु और त्र प्रत्यय परे हो तो ग्रहादि धातुओं को इडागम का प्रतिषेध नहो॥ अर्थात् इडागमहो यह कहना चाहिये। निगृहीतिः। निकुचितिः । निपठि..

तिः । ग्रहादयो यद्यप्रकारा येषामिट् क्तिनि दृश्यते ते गृह्यन्ते ॥

९३६-वाच्य ऊर्णोर्णुवद्भावो यङ्प्रसिद्धिः प्रयोजनम् ।
आमश्च प्रतिषेधार्थमेकाचश्चेडुपग्रहात् ॥११॥

ऊर्णुञ् धातु को नुवद्भाव कहना चाहिये इसका प्रयोजन यह है कि इस धातु से यङ्प्रत्यय (६४१) हो जावे तथा आम् प्रत्यय (६५५) न हो इसी लिये [अनिट्कारिकाओं में] इस को एकाच् धातु मान कर इड्विधान का निषेध किया है॥ यङ्-प्रोर्णोनूयते। आमः प्रतिषेधः। प्रोर्णुनाव। इड्निषेध-प्रोर्णुतः॥

९३७-कृञोऽसुट इति वक्तव्यम् ॥ १३ ॥

सुट् रहित कृञ् धातु को लिट् में इट् आगम न हो यह कहना चाहिये ॥ जिससे यहां होता ही है कि:-संचस्करिथ । संचस्करिम ॥

९३८- ऋतोभारद्वाजस्येत्येतदप्यसुट एवेष्यते॥१३॥

(ऋतो भारद्वाजस्य७।२।६३) इस से जो थल् में इडागम का प्रतिषेध होता है वह भी सुट् रहित धातु का ही हो यह इष्ट है ॥ तेनेह न-संचस्करिथ ॥

९३९-विस्मितप्रतिघातयोश्चेति वक्तव्यम्॥२९॥

विस्मित और प्रतिघात वाच्य हों तो हृषि धातु को निष्ठा प्रत्यय में इट् आगम विकल्प से कहना चाहिये ॥ हृष्टो देवदत्तः । हृषितो देवदत्तः । विस्मित इत्यर्थः । हृष्टा दन्ताः । हृषिता दन्ताः । प्रतिहता इत्यर्थः ॥

९४०-क्तिनि नित्यमिति वक्तव्यम्॥३०॥

क्तिन् प्रत्यय परे हो तो चायति धातु को नित्य चि भाव निपातित है यह कहना चाहिये ॥ अपचितिः ॥

९४१-क्रमस्तु कर्त्तर्यात्मनेपदविषयादसत्यात्मनेपदे कृति-प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ३६॥

आत्मनेपद न होने पर भी आत्मनेपद विषयक क्रमु धातु को कर्त्ता में कृत् प्रत्यय में इडागम का प्रतिषेध कहना चाहिये॥ प्रक्रन्ता । उपक्रन्ता ॥

९४२-इषेस्तकारे श्यन्प्रत्ययात्प्रतिषेधः ॥ ४८ ॥

श्यन् प्रत्ययान्त अर्थात् दिवादिगणस्थ इष धातु को तकारादि आर्धधातुक में

इडागम का विकल्प न हो किन्तु नित्य इट् हो ॥ प्रेषिता । प्रेषितुम् । प्रेषितव्यम् ॥

९४३—दृशेश्चेति वक्तव्यम् ॥ ६८ ॥

दृशिर् धातु को वसु प्रत्यय में इट् आगम विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ ददृशिवान् । ददृश्वान् ॥

९४४—तिसृभावे संज्ञायां कन्युपसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥ ९९ ॥

तिसृभाव प्रकरण में संज्ञाविषय होने पर कन् प्रत्यय परे हो तो त्रि शब्द को तिसृ आदेश का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ तिसृका नाम ग्रामः ॥

९४५—चतसर्य्याद्युदात्तनिपातनं कर्त्तव्यम् ॥ ९९ ॥

चतसृ शब्द में आद्युदात्त निपातन करना चाहिये ॥ चतस्रःपश्य । चतुरःश-सीति स्वरो माभूत् ॥

९४६—त्यदादीनां द्विपर्य्यन्तानामकारवचनम् ॥१०२॥

द्विपर्यन्त त्यदादि शब्दों को अकारादेश कहना चाहिये ॥ तेनेह न—भवान्ः भवन्तौ ॥

९४७—संज्ञोपसर्जनीभूतानां त्यदादीनामत्त्वं न भवति ॥१०२॥

संज्ञा से अप्रधान हुए त्यदादि शब्दों को अकारादेश नहीं होता ॥ त्यद् । त्यदौ । त्यदः ॥

९४८—त्यदादिप्रधाने तु भवत्येव ॥१०२॥

त्यदादि प्रधान शब्द में तो त्यदादि शब्दों को अकारादेश होही जावे ॥ परमसः ॥

९४९—उत्तरपदभूतानां त्यदादीनामकृतसन्धीनामादेशा वक्तव्याः ॥१०७॥

जिन में सन्धि नहीं हुई ऐसे उत्तरपद त्यदादि शब्दों को आदेश कहने चाहिये ॥ परमाहम् । परमायम् । परमानेन ॥

इति सप्तमाध्यायस्य द्वितीयपादपरिशेषः ॥

९५०—वहीनरस्येद्वचनम् ॥१॥

वृद्धि विषय में अचों के आदि अच् के स्थान में वहीनर शब्द को इ-

कारादेश कहना चाहिये ॥ वहीनरस्यापत्यं -वैहीनरिः । केचित्तु विहीनरस्यैव वैहीनरिमिच्छन्ति ॥

९५१–अव्ययानां भमात्रे टिलोपो वक्तव्यः ॥४॥

भ संज्ञामात्र में अव्ययों के टिभाग का लोप कहना चाहिये ॥ स्वर्गमन माह–सौवर्गमिक ॥

९५२–अनाचमिकमिवमीनामिति वक्तव्यम् ॥३५॥

आचमि, कमि और वमि धातु को छोड़कर उदात्तोपदेश मान्त धातु अङ्ग को वृद्धि न हो चिण् और ञित् णित् कृत् प्रत्यय परे हों तो यह कहना चाहिये । तेनेह वृद्धिनिषेधो न भवति–आचामः । कामः । वामः ॥

९५३ – णिप्रकरणे धूञ्प्रीञोर्नुग्वचनम् ॥३७॥

णिच् प्रत्यय के प्रकरण में धूञ् और प्रीञ् धातु को नुक् आगम हो यह कहना चाहिये ॥ धूनयति । प्रीणयति ॥

९५४--पातेर्लुग्वचनम् ३७॥

अदादि गणस्थ पा धातु को लुक् आगम हो णिच् प्रत्यय परे हो तो यह कहना चाहिये ॥ पालयति ॥

९५५—मामकनरकयोरुपसंख्यानं कर्त्तव्यमप्रत्ययस्थत्वात्॥४४॥

ककार के प्रत्ययस्थ न होनेसे मामक और नरक शब्द के ककार से पूर्व अकार को इकारादेश होने का उपसंख्यान करना चाहिये आप् परे हो तो ॥ ममेयं मामिका । अणि ममकादेशः । नरान्कायतीति । नरिका । आतोऽनुपसर्गेकइतिकप्रत्ययः ॥

९५६--त्यक्त्यपोश्च प्रतिषिद्धत्वात् ॥४४॥

उदीचामात इत्यादि सूत्र से प्रतिषिद्ध होने के कारण त्यक् और त्यप् प्रत्यय का इकार विधान में उपसंख्यान करना चाहिये ॥ दाक्षिणात्यिका । इहत्यिका ॥

९५७–नयत्तदोरिति वक्तव्यम् ॥ ४५ ॥

या और सा इन को इकारादेश न हो इतना ही न कहना चाहिये किन्तु कुछ अधिक शब्दों का प्रतिषेध वचनीय है । यहां भी नहीं होता कि–यकामधीते । तकां पचामहे ॥

९५८–प्रतिषेधे त्यकन उपसंख्यानम् ॥ ४५ ॥

इकारादेश प्रतिषेध में त्यकन् प्रत्यय का उपसंख्यान करना चाहिये॥ उपत्यका । अधित्यका (२०५१) ॥

९५९–पावकादीनां छन्दस्युपसंख्यानम् ॥ ४५ ॥

छन्दो विषय में पावकादि शब्दों को इकारादेश प्रतिषेध में उपसंख्यान करना चाहिये ॥ हिरण्यवर्णाः शुचयः पावकाः । यासु अलोमकाः । छन्दसीति किम्–पाविका । अलोमिका ॥

९६०–आशिषि चोपसंख्यानम् ॥ ४५ ॥

आशीर्विषय में इकारादेश प्रकरण में इकारादेश प्रतिषेध का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ जीवतात्–जीवका । नन्दतात्–नन्दका ॥ भवतात्–भवका ॥

९६१–उत्तरपदलोपे चोपसंख्यानम् ॥ ४५ ॥

उत्तरपद लोप होने पर इकारादेश प्रकरण में इकारादेश प्रतिषेध का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ देवदत्तिका । देवका । यज्ञदत्तिका । यज्ञका ॥

९६२–क्षिपकादीनां चोपसंख्यानम् ॥ ४५ ॥

इकारादेश प्रकरण में क्षिपकादि शब्दों में इकारादेश का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ क्षिपका । ध्रुवका ॥

९६३–तारका ज्योतिष्युपसंख्यानम् ॥ ४५ ॥

नक्षत्रवाचिका तारका हो तो इस में इकारादेश का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ तारका । ज्योतिषीति किम्–तारिका दासी ॥

९६४–वर्णका तान्तव उपसंख्यानम् ॥ ४५ ॥

तन्तुओं के विकार में वर्त्तमान वर्णका शब्द में इकारादेश प्रतिषेध का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ वर्णका । प्रावरणविशेषः । तान्तव इति किम्–वर्णिका व्याख्यात्रीत्यर्थः ॥

९६५–वर्त्तका शकुनौ प्राचामुपसंख्यानम् ॥ ४५ ॥

प्राग्देशवासियों के मत से शकुनि वाच्य हो तो वर्त्तका शब्द में इकारादेश प्रतिषेध का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ वर्त्तका शकुनिः । शकुनाविति किम्–वर्त्तिका ॥ प्राचांमतादन्यत्र वर्त्तिका ॥

९६६–अष्टका पितृदैवत्यउपसंख्यानम् ॥ ४५ ॥

पितृदैवत्य विषय में अष्टका शब्द में इकारादेश प्रतिषेध का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ अष्टका । पितृदैवत्यइति किम् । अष्टिकाखारी ॥

९६७–वा सूतकापुत्रकावृन्दारकाणामुपसंख्यानम् ॥ ४५ ॥

सूतका, पुत्रका और वृन्दारका शब्द में इकारादेश प्राप्त होने पर इकारादेश के प्रतिषेध का उपसंख्यान विकल्प से करना चाहिये ॥ सूतका । सूतिका । पुत्रका । पुत्रिका । वृन्दारका । वृन्दारिका ॥

९६८–यकपूर्वधात्वन्तप्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ४६ ॥

धात्वन्त यकार और ककार से परे आकार के स्थान में जो अकार उस को इकारादेश के प्रतिषेध का प्रतिषेध हो अर्थात् इकारादेश हो ही जावे ॥ सुशयिका । सुपाकिका । अज्ञातादयर्थविवक्षायां कः प्रत्ययोऽत्र बोध्यः ॥

९६९–नञ्पूर्वाणामपीऽयपिशब्दादन्तपूर्वाणां केवलानां च विधिरयमिष्यते ॥ ४७ ॥

उदङ् आचार्यों के मत से नञ् पूर्व भी भस्त्रादि शब्दों के आकार के स्थान में जो अकार उस को इत्व नहीं होता । इस सूत्र में अपि शब्द के ग्रहण से अन्य पूर्व और केवल भस्त्रादि शब्दों को भी यह विधि इष्ट है ॥ तेनात्रापि भवति–निर्भस्त्रका । निर्भस्त्रिका । बहुभस्त्रका । बहुभस्त्रिका ॥

९७०–दोष उपसंख्यानम् ॥ ५१ ॥

दोष् शब्द से परे ठ प्रत्यय को क आदेश होने का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ दोर्भ्यां चरति–दौष्कः ॥

९७१–ण्यति प्रतिषेधे त्यजेरुपसंख्यानम् ॥ ६६ ॥

ण्यत् प्रत्यय परे हो तो त्यजि धातु को कुत्व का प्रतिषेध हो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ त्याज्यम् ॥

९७२–डलकवतीनां प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ १०७ ॥

ड, ल और क अक्षर वाले अम्बार्थ शब्दों को ह्रस्व का प्रतिषेध कहना चाहिये सम्बुद्धि परे हो तो ॥ हे अम्बाडे । हे अम्बाले । हे अम्बिके ॥

९७३–छन्दसि वेति वक्तव्यम् ॥ १०७ ॥

छन्दो विषय में संबुद्धि परे हो तो ड, ल और क अक्षर वाले अम्बार्थ शब्दों को ह्रस्व विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ हे अम्बाडे । हे अम्बाड हे अम्बाले । हे अम्बाल । हे अम्बिके । हे अम्बिक ।

९७४–छन्दसि तलो ह्रस्वो वा ङिसंबुद्ध्योः ॥ १०७ ॥

छन्दो विषय में तल् प्रत्ययान्त को ह्रस्व विकल्प से हो ङि और संबुद्धि परे हो तो ॥ देवते भक्तिः । देवतायां भक्तिः । हे देवत । हे देवते ॥

९७५--मातृणां मातजादेशो वक्तव्यः संबुद्धौ पुत्रार्थमर्हते॥१०७॥

संबुद्धि परे हो तो मातृ शब्द को मातच् आदेश हो यदि मातृ शब्द श्लाघनीय पुत्र को कहने के लिये गृहीत किया गया हो तो ॥ हे गार्गीमात । हेवात्सीमात ॥

९७६–जसादिषु च्छन्दसि वा वचनं प्राङ्णौ चङ्युपधाया ह्रस्व इत्येतस्मात् ॥ १०९ ॥

णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः ॥७ । ४ । १ इस सूत्र से पूर्व २ जसादि में विधियों का विकल्प कहना चाहिये छन्दो विषय में ॥ अम्बे । अम्ब । पूर्वा दर्वि । पूर्वादर्वी । शतक्रत्वः । शतक्रतवः । पश्वे भृत्यः । पशवे भृत्यः । किकिदीव्या । किकिदीविना ॥

इति सप्तमाध्यायस्य तृतीयपाद-परिशेषः

९७७–उपधाह्रस्वत्वे णौ णिच्युपसंख्यानम् ॥१॥

उपधा ह्रस्वत्व प्रकरण में चङ् परक णिच् परे हो तो णयन्त अङ्ग की उपधा को ह्रस्व हो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ वादितवन्तं प्रयोजितवाम्–अवीवदद्वीणां परिवादकेन ॥ अथवा यथाकृतिनिर्देशात् सिद्धम् ॥

९७८–काण्यादीनां वेति वक्तव्यम् ॥ ३ ॥

चङ् परक णि प्रत्यय परे हो तो काणि आदि अङ्गों की उपधा को विकल्प से ह्रस्व हो यह कहना चाहिये ॥ अचीकणत् । अचकाणत् । अवीवणत् । अववाणत् ॥

९७९–संयोगादेर्गुणविधाने संयोगोपधग्रहणं कृञर्थं कर्त्तव्यम् ॥ १० ॥

संयोगादि गुणविधान में संयोगोपध का ग्रहण कृञ् धातु के अर्थ करना चाहिये ॥ तेनेहापि भवति ॥ सञ्चस्करतुः । संचस्करुः॥

९८०–हन्तेर्हिंसायां यङि घ्नीभावो वक्तव्यः ॥३०॥

यङ् प्रत्यय परे हो तो हिंसा अर्थ में हन् धातु को घ्नी आदेश कहना चाहिये ॥ जेघ्नीयते । हिंसायामिति किम् । जङ्घन्यते ॥

९८१–अपुत्रादीनामिति वक्तव्यम् ॥ ३५ ॥

छन्दो विषय में पुत्रादि शब्दों को छोड़ कर क्यच् प्रत्यय परे हो तो अवर्णान्त अङ्ग को जो कहा है (दीर्घ,ईत्व) सो न हो ॥ तेनेहापि प्रतिषेधो माभूत्–जनीयन्तोऽन्वग्रवः । जनमिच्छन्तइत्यर्थः ॥

९८२–श्यतेरित्वं व्रते नित्यमिति वक्तव्यम् ॥ ४१ ॥

व्रत विषय में शो धातु को नित्य इकारादेश हो तकारादि कित् प्रत्यय परे हो तो यह कहना चाहिये ॥ संशितो ब्राह्मणः । संशितव्रतइत्यर्थः ॥

९८३–अवदत्तंविदत्तंच, प्रदत्तंचाऽऽदिकर्मणि । सुदत्तमनुदत्तं च निदत्तमितिचेष्यते ॥ ४७ ॥

अवदत्त, विदत्त, प्रदत्त ये शब्द तो आदि कर्म में और सुदत्त, निदत्त ये शब्द सामान्य से निपातित हैं । अथवा ये अवादि उपसर्ग नहीं हैं इन को क्रियान्तर विषय जानना चाहिये इसी से–अच् उपसर्गात्तः । ७ । ४ । ४७ । प्रवृत्त नहीं होता ॥

९८४–द्यतेरित्त्वादचस्तइत्येतद्भवतिविप्रतिषेधेन ॥४७॥

दो अवखण्डने इस दिवादिस्थ धातु को "द्यतिस्यति इत्यादि ७।४।४०" से प्राप्त इकारादेश को बाधकर विप्रतिषेध से "अच् उपसर्गात्तः ७ । ४ । ४७" इस से त आदेश ही होता है ॥ अवत्तम् । प्रत्तम् ॥

९८५–स्ववस्स्वतवसोर्मासउषसश्च तइष्यते छन्दसि भादौ॥४८॥

छन्दो विषय में भकारादि प्रत्यय परे हो तो स्ववस् , स्वतवस् , मास् उषस् शब्द को तकारादेश इष्ट है ॥ स्ववद्भिः । स्वतवद्भिः। समुषद्भिरजायथाः । माद्भिरिन्द्रो वृत्रहा ॥

९८६–इस्त्वं सनि राधो हिंसायाम् ॥ ५४ ॥

सन् प्रत्यय परे हो तो हिंसा अर्थ में वर्त्तमान राध् धातु के अच् के स्थान में इस् आदेश हो ॥ प्रराद्धुमिच्छति–प्रतिरित्सति ॥

९८७–अभ्यासस्यानचि ॥ ५९ ॥

अभ्यास को जो कुछ कहा जाता है वह अच् न परे हो तो हो । तेनेह न भवति ॥ पतापतः । चराचरः । चलाचलः । वदावदः ॥

९८८--खर्पूर्वाः खय इति वक्तव्यम् ॥ ६१ ॥

अभ्यास के खर्पूर्व खय् शेष रहते हैं । अन्य हल् लुप्त हो जाते हैं यह कहना चाहिये ॥ उचिच्छिषति । इस प्रयोग में अन्तरङ्ग होने से उच्छि धातु को तुक् आगम कर लेने पर पीछे द्विर्वचन किया उस में (हलादिः शेषः । ७ ४ । ६०) इस सूत्र के प्रवृत्त होने पर अभ्यास में तकार सुन पड़े इस से खपूर्व खय् शेष रहे यह कहना चाहिये ॥ उचिच्छिषति ॥

९८९--अनुस्वारागमो वक्तव्यः ॥८५ ॥

यङ् और यङ् लुक् परे हो तो अनुनासिकान्त अङ्ग के अभ्यास को अनुस्वार आगम कहना चाहिये ॥ तेनेदमपि सिद्धं भवति–यंयम्यते । रंरम्यते ॥

९९०--पदान्तवच्चेति वक्तव्यम् ॥ ८५ ॥

यङ् और यङ् लुक् परे होने पर अनुनासिकान्त अङ्ग के अभ्यास को जो नुक् आगम होता है उस का जो अनुस्वार वह पदान्तवत् हो यह कहना चाहिये । तंतन्यते । तन्तन्यते । तंतनीति । तन्तनीति । यँय्यम्यते (३९६६)

९९१--रीगृत्वतः संयोगार्थम् ॥ ९० ॥

यङ् और यङ् लुक् परे हो तो ऋकारवान् अङ्ग के अभ्यास को रीक् आगम हो यह उपसंख्यान संयोगान्त धातु के लिये है । तेनेहापि स्यात्–वरीवृश्च्यते । परीपृच्छ्यते । बरीभृज्यते ॥

९९२--मर्मृज्यतेमर्मृज्यमानास इति चोपसंख्यानम् ॥९१॥

मर्मृज्यते और मर्मृज्यमानासः इन का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ मर्मृज्यते । मर्मृज्यमानासः ॥

इति सप्तमाध्यायस्य चतुर्थपादपरिशेषः ।

सप्तमाध्यायश्च समाप्तः ॥

९९३-आनुपूर्व्ये द्वेभवतइति वक्तव्यम् ॥ १२ ॥

आनुपूर्व्य में द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये ॥ मूलेमूले स्थूलाः । अग्रेअग्रे सूक्ष्माः । ज्येष्ठंज्येष्ठं प्रवेशय ॥

९९४-स्वार्थेऽवधार्यमाणेऽनेकस्मिन्द्वेभवतइतिवक्तव्यम् ॥१२

स्वार्थ में अवधार्यमाण अनेक में द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये ॥ अस्मात्कार्षापणादिह भवद्भ्यांमाषंमाषंदेहि ॥ स्वार्थएतद् द्विर्वचनं न तु वीप्सायाम् ।

९९५-चापले द्वेभवतइति वक्तव्यम् ॥ १२॥

शीघ्र प्रतिपादन (चापल) में पद को द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये ॥ अहिरहिर्बुध्यस्वबुध्यस्व । न चात्रय द्वेएव । यावद्भिः शब्दैः सोऽर्थोऽवगम्यते तावन्तः प्रयोक्तव्याः । अहिरहिरहिर्बुध्यस्व बुध्यस्व बुध्यस्व ॥

९९६-क्रियासमभिहारे द्वे भवतइति वक्तव्यम्॥१२॥

क्रियासमभिहार में द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये ॥ सभवान् लुनीहि लुनीहीत्येवायं लुनाति । पुनीहि पुनीहीत्येवाय पुनाति ॥

९९७-आभीक्ष्ण्ये द्वे भवतइति वक्तव्यम्॥१२।

आभीक्ष्ण्य में द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये ॥ भुक्त्वा भुक्त्वा व्रजति । भोजंभोजं व्रजति

९९८-डाचि द्वे भवतइति वक्तव्यम् ॥ १२ ॥

डाच्प्रत्यय विषय में द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये ॥ पटपटाकरोति । पटपटायति । घटघटायति । शरशरायति ॥

९९९-अव्यक्तानुकरणडाजन्तस्य द्विर्वचनमिष्यते॥१२॥

अव्यक्तानुकरण डाजन्त को द्विर्वचन होना इष्ट है॥ तेनेह न द्वितीया करोति ।

१०००--पूर्वप्रथमयोरर्थातिशयविवक्षायां द्वे भवतइति वक्तव्यम् ॥ १२ ॥

अर्थातिशय विवक्षामें पूर्व और प्रथम शब्द को द्विर्वचन हो यह कहना चाहिये ॥ पूर्वं पूर्वं पुष्यन्ति । प्रथमं प्रथमं पच्यन्ते ॥ आतिशयिकोऽपि दृश्यते पूर्वतरं पुष्यन्ति । प्रथमतरं पच्यन्ते ॥

१००१--डतरडतमयोः समसंप्रधारणायां स्त्रीनिगदभावे ॥१२॥

डतरान्त और डतमान्त को द्विर्वचन हो स्त्रीलिंग से कथनीय भाव में यदि आढ्यत्वादि तुल्य गुण से निरूपणीय विषय हो तो ॥ उभाविमावाढ्यौ कतरा कतराऽनयोश्चाढ्यता । सर्वे इमे आढ्याः कतमा कतमा एषामाढ्यता ॥

१००२· डतरडतमाभ्यामन्यत्राऽपि दृश्यते ॥ १२ ।

डतरान्त और डतमान्त से अन्यत्र भी द्विर्वचन दीख पड़ता है ॥ उभाविमावाढ्यौ कीदृशी कीदृशी अनयोराढ्यता ॥

१००३–स्त्रीनिगदभावादन्यत्राऽपि हि दृश्यते ॥ १२ ॥

स्त्रीनिगदभाव से अन्यत्र भी द्विर्वचन दीख पड़ता है ॥ उभाविमावाढ्यौ कतरः कतरोऽनयोर्विभवः ।

१००४–कर्मव्यतिहारे सर्वनाम्नः समासवच्च बहुलं यदा न समासवत्प्रथमैकवचनं तदा पूर्वपदस्य ॥ १२ ॥

क्रियाविनिमय में सर्वनाम संज्ञक शब्दों को द्विर्वचन हो वह द्विर्वचन समासवत् बाहुल्य से माना जावे । और जब समासवत् न हो तब पूर्वपद के अन्त में प्रथमा विभक्ति का एकवचन (सु) जुड़जावे ॥ इतरेतरं ब्राह्मणा भोजयन्ति । इतरेतरस्य भोजयन्ति । यहां समासवत् हुआ है ॥ अन्योऽन्यमिमे ब्राह्मणा भोजयन्ति । अन्योऽन्यस्य भोजयन्ति । यहां समासवत् न होकर प्रथमा का एकवचन सु पूर्वपद के अन्त में युक्त हुआ है ॥

१००५–स्त्रीनपुंसकयोरुत्तरपदस्य वाऽऽम्भावो वक्तव्यः ॥१२॥

स्त्रीलिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग के उत्तरपद को विकल्प से आम् भाव कहना चाहिये पूर्व वार्त्तिक के ही विषय में ॥ इतरेतरामिमे ब्राह्मण्यौ भोजयतः । इतरेतरमिमे ब्राह्मण्यौ भोजयतः । अन्योऽन्यामिमे ब्राह्मण्यौ भोजयतः । अन्योऽन्यमिमे ब्राह्मण्यौ भोजयतः ॥ इतरेतरां ब्राह्मणकुले भोजयतः । इतरेतरं ब्राह्मणकुले भोजयतः । अन्योऽन्यामिमे ब्राह्मणकुले भोजयतः । अन्योऽन्यमिमे ब्राह्मणकुले भोजयतः ॥

१००६–पञ्चमीनिर्देशेऽप्यत्र व्यवहिते कार्य्यमिष्यते ॥६३॥

यहां पञ्चमी निर्देश होने पर भी व्यवधान में कार्य होना इष्ट है । अर्थात् यद्वृत्त से परे व्यवधान होने पर भी सब तिङन्त नित्य अनुदात्त नहीं होता यह भी इष्ट है ॥ यद्वयङ्कायुर्श्रेति । यद्वायुः पचते ॥

१००७—वा याथाकाम्ये ॥ ६६ ॥

यथेच्छावृत्ति में पूर्वपद से परे उत्तरपद तिङन्त अनुदात्त विकल्प से हो ॥ यत्र क्वचन यजते । तद्देवयजनएव यजते ॥

१००८—मलोपवचनं च ॥ ६७ ॥

पूजनवाचीकाष्ठादियों से परे पूजित उत्तरपद अनुदात्त हो । इस विषय में मकार लोप भी यथास्थान कहना चाहिये ॥ दारुणमध्यापको दारुणाध्यापकः । अत्र क्रियाविशेषणदारुणशब्दो द्वितीयान्तः ।

१००९—सुपि कुत्सने क्रियायाः ॥ ६९ ॥

गोत्रादिवर्जित कुत्सन सुबन्त परे हो तो सगति और अगति भी तिङ् अनुदात्त हो परन्तु क्रिया का कुत्सन द्योत्य हो तो यह कहना चाहिये ॥ पचति पूति । प्रपचति पूति ॥ इह कर्त्तुः कुत्सने माभूत्—पचति पूतिर्देवदत्त ॥

१०१०—पूतिश्च चानुबन्धो भवतीति वक्तव्यम् ॥६९॥

और पूति शब्द अनुबन्ध होता है यह कहना चाहिये । तिस से चकार के अनुबन्ध होने से पूति शब्द अन्तोदात्त होता है ॥ पचति पूति ॥

१०११ विभाषितं चापिबहुर्थमनुदात्तं भवतीति वक्तव्यम् ॥६९॥

बह्वर्थ पूति शब्द विकल्प करके अनुदात्त होता है यह कहना चाहिये ॥ पचति पूति पूति । प्रपचति पूति पूति ॥

इत्यष्टमाध्यायस्य प्रथमपादपरिशेषः ॥

१०१२—एकादेशस्वरोऽन्तरङ्गः सिद्धो वक्तव्यः ॥ ३ ॥

अय्, आय्, आव्, एकादेश, शतृस्वर, एकाननुदात्त और सर्वानुदात्त के निमित्त अन्तरङ्ग एकादेश स्वर सिद्ध कहना चाहिये ॥ अय्-वृक्ष इदम् । आय्-कुमार्या इदम् । वृक्षा इदम् । एकादेशः—गाङ्गेऽनूपः । शतृस्वरः—तुदती । तुदते । एकाननुदात्तः—तुदन्ति । लिखन्ति । सर्वानुदात्तः—ब्राह्मणास्तुदन्ति । ब्राह्मणा लिखन्ति ॥

१०१३–संयोगान्तस्य लोपो रोरुत्वे सिद्धो वक्तव्यः ॥ ३ ॥

रु को उकारादेश (२५४९) करने में संयोगान्त का लोप सिद्ध कहना चाहिये ॥ हरिवो मेदिनं त्वा ॥

१०१४–सिज्लोपएकादेशे सिद्धो वक्तव्यः ॥ ३ ॥

एकादेश (२५३६) विधान में सिच् का लोप सिद्ध कहना चाहिये ॥ अलावीत् । अपावीत् ॥

१०१५–निष्ठादेशः षत्वस्वरप्रत्ययविधीड्विधिषु सिद्धो वक्तव्यः ॥ ३ ॥

षत्व, स्वरविधि, प्रत्यय विधि और इड् विधि में निष्ठादेश सिद्ध कहना चाहिये ॥ षत्वविधिः–वृक्णः । वृक्णवान् । निष्ठादेशस्य सिद्धत्वाज्झलीति षत्वं न भवति । स्वरप्रत्ययविधीड्विधिषु क्षीवशब्दउदाह्रियते । क्षीबः । अत्र च निपातनमनेकधा ॥

१०१६–प्लुतविकारस्तुग्विधौ सिद्धो वक्तव्यः ॥ ३ ॥

तुक् आगम विधान में प्लुतविकार सिद्ध कहना चाहिये ॥ अग्ना३इच्छत्रम् । पटा३उच्छत्रम् ॥

१०१७–श्चुत्वं धुटि सिद्धं वक्तव्यम् ॥ ३ ॥

धुट् आगम विधि में श्चुत्व सिद्ध कहना चाहिये ॥ अट्श्च्योतति । रट्श्च्योतति । श्च्युतिर्क्षरणे इत्ययं धातुः स तालव्यादिः पठ्यते । अटतीति–अट् । रटतीति रट् क्विबन्तोऽयम् ॥

१०१८–अभ्यासजश्त्वचर्त्वे एत्वतुकोः सिद्धे वक्तव्ये ॥ ३ ॥

एत्व और तुग्विधि में अभ्यास के जश्त्व और चर्त्व सिद्ध कहने चाहिये ॥ बभणतुः । बभणुः । अभ्यास के जश्त्व के असिद्ध होने से अतएक० इत्यादि सूत्र से एत्व प्राप्त होता है एतदर्थ सिद्धत्व विधान किया गया है । तुग्विधिः–उच्चिच्छिषति । अत्राऽभ्यासादेशस्याऽसिद्धत्वाच्छेचेति तुक् प्राप्नोति स माभूत्–

१०१९–द्विर्वचने परसवर्णत्वं सिद्धं वक्तव्यम् ॥ ३ ॥

द्विर्वचन विधि में परसवर्णत्व सिद्ध कहना चाहिये ॥ सय्ँय्यन्ता । सव्ँव्वत्सरः ॥

१०२०—पदाधिकारश्चेल्लत्वढत्वघत्वनत्वरुत्वषत्वणत्वानुनासिकछत्वानि सिद्धानि वक्तव्यानि ॥ ३ ॥

यदि पदाधिकार हो तो लत्व, ढत्व, घत्व, नत्व रुत्व, षत्व, णत्व, अनुनासिक और छत्व सिद्ध कहने चाहिये ॥ लत्वम्—गलोगलः । गरोगरः । ढत्वम् द्रोढा द्रोढा । घत्वम्—द्रोग्धा द्रोग्धा । नत्वम्—नुन्नो नुत्तः रुत्वम्—अभिनोऽभिनः। अभिनदभिनत् । षत्वम्—मातुष्ष्वसा ॥ मातुष्ष्वसा । मातुःस्वसा । मातुःस्वसा । णत्वम्-माषवापाणि माषवापाणि । माषवापानि । माषवापानि । अनुनासिकः—वाङ्नयनम्, वाङ्नयनम्, वाग्नयन वाग्नयनम् । छत्वम्—वाक् छयनं वाक्छयनम् । वाक्शयनं वाक्शयनम् ।

१०२१—अह्नो नलोपप्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ७ ॥

अहन् शब्द के नकार लोप का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ अहः । अह्नोभ्याम् ॥

१०२२—ङावुत्तरपदे प्रतिषेधस्य प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ८ ॥

उत्तरपद जिस से परे हो ऐसा सप्तम्येकवचन ङि परे हो तो नकारलोप के प्रतिषेध का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ ब्रह्मणि निष्ठाऽस्य ब्रह्मनिष्ठः। चर्मणि तिला अस्य चर्मतिलः ॥

१०२३—संबुद्धौ नपुंसकानां वेति वक्तव्यम् ॥ ८ ॥

संबुद्धि परे हो तो नपुंसक शब्दों के नकार का लोप विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ हे चर्मन् हे चर्म । हे दण्डिन् ब्राह्मणकुल । हे दण्डितत् ॥

१०२४—बालमूललघ्वसुरालमङ्गुलीनां वा रो लत्वमापद्यत इति वक्तव्यम् ॥ १८ ॥

बाल आदि शब्दों का र लत्व को प्राप्त हो जाता है विकल्प से यह कहना चाहिये ॥ बालः । वारः । मूलम् । मूरम् । लघुः । रघुः । असुलः । असुरः । अलम् । अरम् । अङ्गुलिः । अङ्गुरिः ॥

१०२५—कपिलकादिशब्दानां संज्ञाछन्दसोर्वा रो लत्वमापद्यत इति वक्तव्यम् ॥ १८ ॥

कपिलक आदि शब्दों का रेफ लत्व को विकल्प से प्राप्त हो संज्ञा और छन्दो विषय में यह कहना चाहिये ॥ कपिलकः । कपिरकः । तिल्पिलीकम् । तिर्पिरीकम् । लोमानि । रोमाणि । पांशुलम् । पांशुरम् । कल्म । कर्म ॥

१०२६–योगेचेति वक्तव्यम् ॥ २२ ॥

योग शब्द परे हो तो परि उपसर्ग के रेफ को विकल्प से लकारादेश हो यह कहना चाहिये ॥ पलियोगः । परियोगः ॥

१०२७–हृग्रहोश्छन्दसि हस्य भत्वम् ॥ ३२ ॥

छन्दो विषय में हृ और ग्रह धातु के हकार को भकारादेश हो यह कहना चाहिये ॥ गर्दभेन संभरति । मरुदस्य गृभ्णाति । सामिधेन्यो जभ्रिरे । उद्ग्राभं च निग्राभं च ब्रह्मदेवा अवीवृधन् ॥

१०२८–ऋकारल्वादिभ्यः क्तिन्निष्ठावत् ॥ ४४ ॥

ऋकारान्त और लू आदि धातुओं से परे क्तिन् प्रत्यय निष्ठावत् हो यह कहना चाहिये ॥ कीर्णिः । गीर्णिः । लूनिः । पूनिः ॥

१०२९–दुग्वोर्दीर्घश्च ॥ ४४ ॥

दु और गु धातु से परे निष्ठा के तकार को नकारादेश हो और उक्त दोनों धातुओं को दीर्घ भी हो ॥ आदूनः ॥ विगूनः ॥

१०३०–पूञो विनाशे ॥४४॥

पूञ् धातु से परे निष्ठा के तकार को नकारादेश हो विनाश अर्थ में ॥ पूना यवाः–विनष्टा इत्यर्थः ॥

१०३१–सिनोतेर्ग्रासकर्मकर्त्तृकस्य ॥४४॥

ग्रास है कर्मकर्त्ता जिस का ऐसे सिनोति धातु से परे निष्ठा के तकार को नकारादेश हो यह कहना चाहिये ॥ सिनो ग्रासः स्वयमेव ॥

१०३२–उत्फुल्लसंफुल्लयोरिति–वक्तव्यम् ॥५५॥

क्त प्रत्ययान्त उत्फुल्ल संफुल्ल शब्द निपातित हैं। उत्फुल्लः । संफुल्लः॥

१०३३–अह्नो रुविधौ रूपरात्रिरथन्तरेषूपसंख्यानम् ॥६८॥

अहन् शब्द के रु विधान में रूप, रात्रि और रथन्तर शब्द परे हों तो

अहन् शब्द को रु आदेश का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ अहोरूपम् । अहो रात्रः । अहो रथन्तरम् ॥

१०३४-अपरआह । सामान्येन रेफादौ रुत्वं भवति ॥६८॥

दूसरे आचार्य कहते हैं कि-सामान्य से रेफादि शब्द परे हो तो पदसंज्ञक अहन् शब्द को रु आदेश हो ॥ अहो रम्यम् । अहो रत्नानि ॥

१०३५-छन्दसि भाषायां च प्रचेतसो राजन्युपसंख्यानम् ॥७०॥

लोक और छन्दोविषय में राजन् शब्द परे हो तो प्रचेतस् शब्द को रु और रेफ आदेश का उपसंख्यान करना चाहिये । प्रचेतोराजन् । प्रचेताराजन् ॥

१०३६-अहरादीनां पत्यादिषु ।।७०॥

पति आदि शब्द परे हों तो अहन् आदि शब्दों को रु और रेफ आदेश हो ॥ अहः पतिः । अहर्पतिः । अहःपुत्रः । अहर्पुत्रः । गीःपतिः । गीर्पतिः । धूःपतिः । धूर्पतिः ॥

१०३७-अदसोऽनोर्लइति वक्तव्यम् ॥८०॥

अनोकारान्त असकारान्त और अरेफान्त अदस् शब्द के दकार से परे जो वर्ण उसको उवर्णादेश हो यह कहना चाहिये।ओकारान्तत्वादिह न भवति । अदोऽत्र । सकारान्तत्वान्नेह-अदस्यति । रेफान्तत्वाच्च न-अदः ।

१०३८-भर्त्सने पर्य्यायेणेति वक्तव्यम् ॥९५॥

भर्त्सन में पर्य्याय से अनाम्रेडित और आम्रेडित को प्लुत हो यह कहना चाहिये ॥ चौर ३ चौर । चौर चौर ३ ॥

१०३९-असूयादिषु वावचनम् ॥१०३॥

असूयादि गम्यमान हों तो आम्रेडित परे होने पर स्वरित प्लुत विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ कन्ये ३ कन्ये । कन्ये कन्ये ॥

१०४०-एचः प्लुतविकारे पदान्तग्रहणम् ॥१०७॥

एच् के प्लुत विकार विधान में पदान्त का ग्रहण करना चाहिये ॥ तेनेह न-भद्रं करोषि गौ३रिति ॥

१०४१-एचः प्लुतविकारे प्रश्नान्ताभिपूजितविचार्य्यमा-

प्रत्यभिवादयाज्यान्तेष्विति वक्तव्यम् ॥ १०७ ॥

एच् के प्लुतविकार विधि में प्रश्नान्त, अभिपूजित, विचार्यमाण, प्रत्यभिवाद और याज्यान्त में प्लुतविकार हो अन्यत्र न हो यह उपसंख्यान करना चाहिये ॥ प्रश्नान्ते—अगमः पूर्वान्ग्रामानग्निभूता ३ इ । पटा ३ उ । अभिपूजिते—भद्रं करोषि माणवक ३ अग्निभूत३इ।पटा३उ।विचार्यमाणे—होतव्यं दीक्षितस्य गृहा३इ।प्रत्यभिवादे—आयुष्मानेधि अग्निभूता३इ । पटा३उ । याज्यान्ते—उक्षान्नाय वशान्नाय सोमपृष्ठाय वेधसे स्तोमैर्विधेमाग्नया३इ ॥

१०४२–आमन्त्रिते छन्दसि प्लुतविकारोऽयं वक्तव्यः ॥१०७॥

छन्दो विषय होने पर आमन्त्रित में प्लुतविकार (यह) उपसंख्येय है ॥ अग्न ३ इ पत्नीवः ॥

इत्यष्टमाध्यायस्य द्वितीयपादपरिशेषः ॥

१०४३ वन उपसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥१॥

संहिता विषयमें छन्दो विषय होने पर वन् प्रत्यय को रु आदेश होने का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ यस्त्वायन्तं वसुना प्रातरित्वः । इणः प्रातःपूर्वस्य छन्दसि क्वनिप् ॥४॥

१०४४ विभाषाभवद्भगवदघवतामोच्चावस्य ॥१॥

लोक और वेदमें भवत्, भगवत् और अघवत् शब्द को विकल्प से रुआदेश हो और इन उक्तशब्दों के अद को ओकारादेश हो ॥ भवत्—हे भोः । हे भवन् । हे भगोः । हे भगवन् । हे अघोः । अघवन् ॥

१०४५ सम्पुंकानां सो वक्तव्यः ॥५॥

सम्, पुम् और कान् के विसर्ग को सकारादेश कहना चाहिये ॥ सँस्स्कर्त्ता । संस्स्कर्त्ता ।

१०४६ समो वा लोपमेक इच्छन्ति ॥५॥

कोई आचार्य सम् के लोप को चाहते हैं । तेनैकसकारमपि रूपद्वयं निष्पद्यते सँस्कर्ता । संस्कर्त्ता ॥

१०४७ यवलपरे यवला वा ॥२॥

यवलपर हकार परे हो तो मकार को यथासंख्य य,व और ल आदेश हों विकल्प से ॥ कियँ ह्यः । किंह्यः । किवँ ह्वलयति । किंह्वलयति । किलँ ह्लादयति । किंह्लादयति ॥

१०४८—चयो द्वितीयाः शरि पौष्करसादेरिति वाच्यम् ॥ ३८॥

पौष्करसादि आचार्य के मत से चय् प्रत्याहार को द्वितीय अक्षर हो यह कहना चाहिये शर् परे हो तो ॥ प्राङ्ख् षष्ठः । प्राङ्क्षष्ठः । प्राङ्षष्ठः । सुगण्ठ् षष्ठः । सुगण्ट् षष्ठः । सुगण् षष्ठः ॥

१०४९—खर्परे शरि वा लोपो वक्तव्यः ॥ ३६ ॥

खर् जिस से परे हो ऐसा शर् परे हो तो विसर्जनीय का लोप विकल्प से कहना चाहिये ॥ वृक्षा स्थातारः । वृक्षाः स्थातारः । वृक्षास्स्थातारः ॥

१०५०—सोऽपदादावनव्ययस्य ॥३८॥

अनव्यय के विसर्ग को सकारादेश हो अपदादि कवर्ग और पवर्ग परे हो तो ॥ पयस्पाश[म्] । इह न भवति—प्रातःकल्पम् ॥

१०५१—रोः काम्ये नियमार्थम् ॥३८॥

काम्य प्रत्यय परे हो तो रु के ही विसर्ग को सकारादेश हो अन्य के को न हो इस नियम के निमित्त कहना चाहिये ॥ पयस्काम्यति । इह न भवति—गीःकाम्यति ।

१०५२—उपध्मानीयस्य च ॥३८॥

कवर्ग परे हो तो उपध्मानीय को सकार आदेश होता है यह कहना चाहिये ॥ अभ्युद्गः । समुद्गः ॥

१०५३—पाशकल्पककाम्येषु ॥३८॥

पाश, कल्प, क और काम्य प्रत्यय परे होने पर ये सादि विधि होते हैं तथैवोदाहृतम् ॥

१०५४—पुम्मुहुसोः प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥४१॥

इकारोपध और उकारोपध अप्रत्यय विसर्ग को ष आदेश हो कु और पु परे हों तो इस प्रकरण में पुम् और मुहस् का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ पुंस्कामा । मुहुस्कामा ॥

१०५५—स्थास्थिन्स्थृणामिति वक्तव्यम् ॥९७॥

अस्थादि शब्दों से परे स्था, स्थिन् और स्थृ शब्दों के सकार को मूर्धन्यादेश हो यह कहना चाहिये ॥ सव्येष्ठाः । परमेष्ठी। सव्येष्ठा सारथिः ॥

१०५६—स्तम्भुसिवुसहां चङ्युपसर्गात् ॥११६॥

उपसर्ग से परे स्तम्भू आदि धातुओं के सकार को मूर्धन्य आदेश न हो चङ् परे हो तो और अभ्यास से परे तो हो ही जावे॥ पर्यतस्तम्भत् । पर्यसीषिवत् । पर्य्यसीषहत् ॥

इत्यष्टमाध्यायस्य तृतीयपाद-परिशेषः ॥

१०५७—ऋवर्णाच्चेति वक्तव्यम् ॥१॥

और ऋवर्ण से परे न को ण आदेश हो समानपद में यह कहना चाहिये । तिसृणाम् । चतसृणाम् । मातृणाम् । पितृणाम् ॥

१०५८—द्व्यक्षरत्र्यक्षरेभ्यइति वक्तव्यम् ॥६॥

दो अक्षर वाले और तीन अक्षर वाले ओषधि वाची तथा वनस्पतिवाची पूर्वपद तत्स्थ निमित्त से परे वन के नकार को णकार आदेश विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ दूर्वावणम् । दूर्वावनम् । शिरीषवणम् । शिरीषवनम् ॥ इहमाभूत्—देवदारुवनम् ।

१०५९—इरिकादिभ्यः प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥ ६ ॥

इरिकादि शब्दों से परे वन के नकार को णकार आदेश होने का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ इरिकावनम् । तिमिरकावनम् ॥

१०६०-वाप्रकरणेनद्यादिभ्य उपसंख्यानम् ॥१०॥

वाप्रकरण में पूर्वपदस्थ निमित्त से परे नदी आदि के न को ण हो विकल्प से ॥ गिरिणदी । गिरिनदी ॥

१०६१—प्रातिपदिकान्तस्य णत्वे समासान्तग्रहणम् ॥११॥

प्रातिपदिकान्त के णत्व विधान में समासान्त का ग्रहण करना चाहिये ॥ इहमाभूत्— गर्गाणां भगिनी गर्गभगिनी ॥

१०६२· गतिकारकोपपदानां कृद्भिः सह समासवचनं प्राक्सुबुत्पत्तेः ॥ ११ ॥

सुबुत्पत्ति से पहिले गति, कारक और उपपदों का कृत् प्रत्ययान्तों के साथ समास हो जाता है ॥ माषवापिणी ॥

१०६३—युवादीनां प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥११॥

णत्व विधान में युवादि शब्दों के नकार को णकार होने का प्रतिषेध कहना चाहिये ॥ आर्ययूना । क्षत्रिययूना । प्रपक्कानि । दीर्घाह्नी शरत् ॥

१०६४—अड्व्यवायेऽपि नेर्गदादिषु णत्वमिष्यते ॥१८॥

अट् के व्यवधान में भी नि के नकार को णत्व हो गदादि परे हों तो ॥ प्रण्यगदत् ॥

१०६५—कृत्स्थस्य णत्वे निर्विण्णस्योपसंख्यानम् ॥ २९ ॥

कृत्स्थ के णत्वप्रकरण में निर्विण्ण के नकार को णत्व का उपसंख्यान करना चाहिये । निर्विण्णोऽस्मि खलसंगेन ॥

१०६६—ण्यन्तानां भादीनामुपसंख्यानम् ॥ ३४ ॥

उपसर्गस्थ निमित्त से परे णयन्त भादि धातुओं के नकार को णकार आदेश न हो । प्रभापनम् । परिभापनम् ।

१०६७—पदव्यवायेऽतद्धितइति वक्तव्यम् ॥ ३८ ॥

अतद्धित पदव्यवाय में निमित्त निमित्ती के न को ण न हो यह कहना चाहिये ॥ तेनाऽत्र प्रतिषेधो माभूत् ॥ आर्द्रगोमयेण ॥

१०६८—अनाम्नवतिनगरीणामिति वक्तव्यम् ॥ ४२ ॥

नाम्, नवति और नगरी को छोड़कर पदान्त टवर्ग से नकार और तवर्ग को ष्टुत्व न हो यह कहना चाहिये ॥ तेनेह भवति—षण्णाम् । षण्णवतिः । षण्णगर्यः ॥

१०६९-यरोऽनुनासिके प्रत्यये भाषायां नित्यवचनम् ॥४५॥

लोक में अनुनासिकादि प्रत्यय परे हों तो पदान्त यर् को अनुनासिक नित्य हो ॥ वाङ्मयम् क्रियम्माणम् ॥

१०७०--यणो मयो द्वे भवतइति वक्तव्यम् ॥ ४७ ॥

यण् से परे मय् को द्वित्व हो विकल्प से यह कहना चाहिये ॥ उल्क्का वल्ल्मीकम् । उल्का । वल्मीकम् ॥

१०७१--यणो मयो द्वे भवतइति वक्तव्यम् ॥४७॥

मय् से परे यण् को द्वित्व हो, विकल्प से यह कहना चाहिये ॥ दध्य्यत्र । दध्यत्र ।

१०७२-शरः खयो द्वे भवतइति वक्तव्यम् ॥४७॥

शर् से परे खय् को द्वित्व विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ स्थ्याता। स्याता ॥

१०७३-शरः खयो द्वे भवतइति वक्तव्यम्॥४७॥

खय् से परे शर् को द्वित्व विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ वत्स्सरः। वत्सरः ॥

१०७४-अवसाने च यरो द्वे भवतइति वक्तव्यम्॥४७॥

अवसान में यरों को द्वित्व विकल्प से हो यह कहना चाहिये ॥ वाक्क्। वाक् ।

१०७५-तत्परे चेति वक्तव्यम्॥४८॥

पुत्रादिनी शब्द परे हो तो पुत्र शब्द को द्वित्व न हो यह कहना चाहिये ॥ पुत्रपुत्रादिनी त्वमसि पापे ॥

१०७६-वा हतजग्धपरे च ४८॥

हत और जग्ध शब्द परे हो तो पुत्र शब्द को द्वित्व विकल्प से न हो ॥ पुत्त्रहती । पुत्रहती । पुत्त्रजग्धी । पुत्रजग्धी ॥

१०७७-चयो द्वितीयाः शरि पौष्करसादेः ॥४८॥

पौष्करसादि आचार्य्य के मत से चय् को द्वितीय अक्षर हों शर् परे हों तो ॥ वथ्सरः । अफ्सराः । वत्सरः । अप्सराः ॥

१०७८-उदः पूर्वत्वे स्कन्देश्छन्दस्युपसंख्यानम् ॥६१॥

छन्दो विषय में उद् से परे स्कन्द् धातु को पूर्व सवर्ण होने का उपसंख्यान करना चाहिये ॥ अग्ने दूरमुत्कन्दः ॥

१०७९ रोगे चेति वक्तव्यम्॥६१॥